इकाई -1 विशेष शिक्षा का अर्थ, क्षेत्र, उद्देश्य तथा महत्व (Meaning, Scope, Objectives and Significance of Special Education)

1.1 प्रस्तावना

1.2 उद्देश्य

1.3 विशेष शिक्षा का अर्थ

1.4 विशेष बच्चों की पहचान

1.5 विशेष शिक्षा का क्षेत्र

1.6 विशिष्ट बालकों के प्रकार

अपनी उन्नति जानिए

1.7 विशेष शिक्षा के उद्देश्य

1.8 विशेष शिक्षा का महत्व

1.9 विशिष्ट शिक्षा की आवश्यकता

अपनी उन्नति जानिए

1.10 सारांश

1.11 शब्दावली

1.12 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1.13 संदर्भ ग्रंथ सूची

1.14 निबंधात्मक प्रश्न

1.1 प्रस्तावना:

विशेष शिक्षा विभिन्न प्रकार के शारीरिक रूप से अक्षम छात्रों के लिए अनुरूप निर्देश और सहायता प्रदान करने पर केंद्रित है। इसके विपरीत, एकीकृत शिक्षा सामान्य और दिव्यांग छात्रों को एक ही कक्षा में एक साथ लाती है, और समावेशी शिक्षा सभी छात्रों के लिए उनकी क्षमताओं की परवाह किए बिना शिक्षा तक समान पहुंच सुनिश्चित करती है। विशेष शिक्षा के तहत विशेष आवश्यकता वाले बच्चों को विद्यालय, परिवार, समाज के अनुकूल समायोजित करने का प्रयास किया जाता है ताकि वे अपनी दिन-प्रतिदिन की समस्याओं को हल करने में सक्षम हो सके। विशेष शिक्षा का लक्ष्य यह सुनिश्चित करना है कि जिन छात्रों में कोई भी अक्षमता है वे दिव्यांग छात्रों के साथ शिक्षा में भाग ले सकते हैं और जब भी और जितना संभव हो पाठ्यक्रम तक पहुंच सकते हैं। आदर्श रूप से, सभी छात्रों को अपनी क्षमता तक पहुंचने के लिए शिक्षा तक समान पहुंच होगी।

प्रस्तुत इकाई में आप विशेष शिक्षा शिक्षा का अर्थ, परिभाषा, इसके उद्देश्य, क्षेत्र, आवश्यकता तथा महत्व के बारे में विस्तारपूर्वक अध्ययन करेंगें।

1.2 उद्देश्य:

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप-

- विशेष शिक्षा का अर्थ को समझ सकेंगे।
- विशेष शिक्षा के क्षेत्र का वर्णन कर सकेंगे।
- विशेष शिक्षा के कार्य क्षेत्र को बता सकेंगे।
- विशेष शिक्षा के उद्देश्यों की व्याख्या कर सकेंगे।
- विशेष शिक्षा के महत्व का विश्लेषण कर सकेंगे।
- विशेष शिक्षा के महत्व का विश्लेषण कर सकेंगे।
- विशेष शिक्षा से होने वाले लाभों का वर्णन कर सकेंगे।

1.3 विशेष शिक्षा का अर्थ

किसी कक्षा में विभिन्न तरह के बच्चे होते हैं जिनकी अपनी-अपनी आवश्यकताएँ हो सकती हैं। जैसे - कुछ बच्चे अक्षरों को उल्टा लिखते हैं, कुछ की श्रवण शक्ति कम होती हैं, कुछ मंद बुद्धि वाले होते हैं।

सभी बच्चे सामान्य गति से नहीं सीख पाते हैं। कुछ बच्चों का उच्चारण स्पष्ट नहीं होता है जिसके कारण इन बच्चों का विकास एवं दैनिक कार्यशीलता प्रभावित होती है। इन्हीं भिन्नताओं के कारण इन बच्चों के पालन-पोषण में कुछ भिन्न या विशिष्ट तरीके अपनाने की आवश्यकता होती है। उनकी शिक्षा के लिए विशेष योजना बनानी पड़ती है, यह सुनिश्चित करना पड़ता है कि उनके अनुकूलतम विकास को बढ़ावा मिले। अभिभावकों और शिक्षकों को इन बच्चों को बोलना सिखाने, चलने-फिरने, मित्र बनाने और वे कौशल और संकल्पनाएँ, जो सामान्य बच्चे विकास के दौरान सहज रूप से प्राप्त कर लेते हैं, उन्हें अर्जित करने और सिखाने के लिए विशेष प्रयास करने होते हैं। इन बच्चों की कुछ ऐसी आवश्यकताएँ हैं जो अधिकांश बच्चों की जरूरतों से भिन्न होती हैं, अर्थात् उनकी कुछ विशेष जरूरतें होती हैं।

विशेष शिक्षा (Special Education) शिक्षाशास्त्र की एक ऐसी शाखा है जिसके अन्तर्गत उन बच्चों को शिक्षा दी जाती है जो सामान्य बच्चों से शैक्षिक, शारीरिक, मानसिक और समाजिक क्षेत्रों में कुछ अलग होते हैं। इन बच्चों की शैक्षिक आवश्यकताएॅ भी सामान्य बच्चों से कुछ विशिष्ट होती है यही कारण है कि इनको विशेष आवश्यकता वाले बालक (Children with special needs CWSN) भी कहा जाता है। ये बच्चे अपनी सहायता स्वयं नहीं कर पाते। अत: इनकी सहायता के लिए तथा इनको सक्षम बनाने के लिए, विद्यालय, परिवार, समाज और परिवार में समायोजन के लिए विशेष प्रकार की शिक्षा दी जाती है, जिससे वे अपनी दैनिक आवश्यकताओं को पूर्ति करने में स्वयं समर्थ हो सकें । जिससे इनकी सारी समस्याओं का समाधान किया जा सकें। अत: कहा जा सकता है कि "विशेष शिक्षा विशिष्ट रूप से तैयार किया गया एक शैक्षिक अनुदेशन है जिससे शैक्षणिक गतिविधियों, विशेष पाठ्यक्रम और विशेष शिक्षक के द्वारा विशेष आवश्यकता वाले बच्चों को शिक्षण अधिगम सुविधा उपलब्ध करायी जाती है।" अतः विशेष शिक्षा उन बच्चों को शिक्षा प्रदान करने से संबंधित है जो शारीरिक या मानसिक रूप से अक्षम हैं। विशेष बच्चों के लिए एक अनोखा पाठ्यक्रम बनाया गया है। एकीकृत शिक्षा का संबंध विभिन्न धर्मों के बच्चों को शिक्षा प्रदान करने से है।

1.4 विशेष बच्चों की पहचान

सामान्य रूप से कार्य करने के लिए छः क्षेत्र निर्णायक हैं। ये हैं - दृष्टि, श्रवण शक्ति, गतिशीलता, सम्प्रेषण, सामाजिक-भावनात्मक सम्बन्ध, बुद्धिमत्ता। इसके अतिरिक्त आर्थिक रूप से सुविधावंचित बच्चे भी विशेष हैं क्योंकि गरीबी के कारण वे जीवन के कई अनुभवों से वंचित रह जाते हैं। वे स्कूल नहीं जा सकते क्योंकि उन्हें बचपन से ही काम शुरू करना पड़ता है, ताकि वे परिवार की आय बढ़ा सकें। लड़कियों को

अक्सर घर पर ही रोक लिया जाता है ताकि वे छोटे भाई-बहनों (बच्चों) का ध्यान रख सकें और घर के कामकाज कर सकें। कोई बच्चा अथवा व्यक्ति जो इन क्षेत्रों में से एक या उससे अधिक क्षेत्रों में कोई कठिनाई महसूस करता है, वह **विशिष्ट बच्चा/व्यक्ति** कहलाता है। उपरोक्त में से किसी एक क्षेत्र में भी कठिनाई व्यक्ति के लिए बाधा उत्पन्न कर सकती है और व्यक्ति को इस असमर्थता से निपटने के लिए **अतिरिक्त प्रयास** की आवश्यकता होती है। किर्क के अनुसार (1962):- " 'विशिष्ट शिक्षा' शब्द शिक्षा के उन पहलुओं को इंगित करता है जिसे विकलांग एवं प्रतिभाशाली बच्चों के लिए किया जाता है, लेकिन औसत बालकों के मामलों में प्रयुक्त नहीं होता ।"

विशेष शिक्षा, शिक्षाशास्त्र की एक ऐसी शाखा है जिसका संबंध विशिष्ट बालकों के शिक्षा एवं उनके समस्याओं से है। इस तरह कहा जा सकता है कि विशेष शिक्षा, विशेष बालकों के शिक्षा से संबंध समस्याओं का विवेचन, विश्लेषण एवं वैज्ञानिक समाधान प्रस्तुत करता है। **हल्लहन और कॉफमैन के अनुसार:-** "विशेष शिक्षा का अर्थ विशेष रूप से तैयार किये गये साधनों के द्वारा विशेष बच्चों को प्रशिक्षण देना है। इसके लिए विशेष साधन, अध्यापन तकनीक, उपकरण तथा अन्य सुविधाओं की आवश्यकता होती है।"

1.5 विशेष शिक्षा का क्षेत्र

विशेष बालकों एवं उनके शैक्षिक तथा व्यक्तिव से संबंधित विभिन्न समस्याओं का अध्ययन करना विशेष शिक्षा के क्षेत्र के अंतर्गत आता है। इसके विषय वस्तु के अंतर्गत विशेष बालकों की पहचान, उनकी विभिन्न प्रकार की समस्याएं, उनकी शिक्षा, निर्देशन, उनके व्यवहारों का अध्ययन तथा उनकी विभिन्न समस्याओं का निदान का इसमें अध्ययन किया जाता है। इस प्रकार विशेष शिक्षा के क्षेत्र में निम्नलिखित समस्याओं पर विचार किया जाता है:-

1- विशेष बच्चों की पहचान (Identification of Special Children):- विशेष बालकों की पहचान करना विशेष शिक्षा की मुख्य विषयवस्तु है। इसके अन्तर्गत विभिन्न प्रकार के शारीरिक रूप से अक्षम जैसे- दृष्टिवाधित, श्रवण बाधित, मानसिक मंद, अधिगम अक्षम, बुद्धिमान बालकों की पहचान इनकी विशेषताओं के आधार पर किया जाता है। यद्यपि इन बालकों को पहचान करने के लिए अलग-अलग तरह के यंत्रों एवं विधियों का प्रयोग किया जाता है। जैसे दृष्टि बाधित बालकों को पहचान करने के लिए स्नैलेन चार्ट, श्रवण बाधितों के लिए ऑडियोमीटर, मानसिक मंद बालकों के लिए बुद्धि परीक्षण प्रयुक्त किया जाता है।

2- **विशेष बच्चों की आवश्यकताओं का ज्ञान-** विशेष शिक्षा के अंतर्गत विशेष बच्चों की आवश्यकताओं का ज्ञान प्राप्त करना विशेष शिक्षा के क्षेत्र के अंतर्गत आता है। जब तक विभिन्न प्रकार के

शारीरिक रूप से अक्षम बच्चों की विभिन्न शैक्षिक एवं सामाजिक आवश्यकताओं का ज्ञान नहीं होगा तब तक उनके लिए उचित शिक्षा की व्यवस्था करना संभव नहीं हो सकता है। विशेष शिक्षा के द्वारा विशिष्ट बालकों के व्यवहारों का अध्ययन किया जाता है। इन व्यवहारों के आधार पर इनके शैक्षिक आवश्यकताओं का निर्धारण किया जाता है।

3- दृष्टि बाधित बालकों की शिक्षा:- दृष्टि बाधित बालक वे बालक होते हैं जो ठीक प्रकार से देख पाने में असमर्थ होते हैं। ऐसे बालक भी दो प्रकार के होते हैं- पूर्ण दृष्टिबाधित एवं अल्प दृष्टि वाले बालक। विशेष शिक्षा के अर्न्तगत इन बालकों की शैक्षिक आवश्यकताएॅ जैसे- ब्रेल, एवेकस, ट्रेलर फ्रेम, परिवर्धित मानचित्र के बारे में अध्ययन किया जाता है तथा उनको इनके आधार पर शिक्ष प्रदान किया जाता है।

4- मानसिक मंद बालकों की शिक्षा:- मानसिक रूप से मंद बालक एक विशेष प्रकार के बालक होते हैं। जिनमें सोचने तथा समझने की क्षमता कम होती है। इसके अर्न्तगत वे बालक आते हैं जिनको बुद्धि स्तर तथा सोचने समझने की क्षमता सामान्य बालकों से कम होती है तथा वे समाज के साथ समायोजन करने में असमर्थ होते हैं। ऐसे बालकों की मानसिक बाधिता के परिणाम भिन्न-भिन्न होते हैं। इन बालकों की पहचान, मानसिक मंदता के कारण, मानसिक मंद बालकों के प्रकार, उनकी शिक्षा एवं ऐसे बालकों की समस्याओं का अध्ययन विशेष शिक्षा में किया जाता है।

5-श्रवण बाधित बालकों की शिक्षा:- विशेष शिक्षा के अर्न्तगत श्रवण बाधित बालकों की पहचान, उनके प्रकार, शिक्षा, शिक्षा की विधि श्रवण बाधिता के कारण उसके परिणाम आदि का अध्ययन किया जाता है। इनके शिक्षण विधि में फिंगर स्पेलिंग, संकेत भाषा, स्पीच रीडिंग आदि प्रमुख है। विशेष शिक्षा के अर्न्तगत इन सभी शिक्षण विधियों का अध्ययन किया जाता है।

6- अधिगम अक्षम बालकों की शिक्षा:- अधिगम अक्षम वैसे बालक होते हैं जिनकी बुद्धिलब्धि अन्य सामान्य बालकों से कम होती है। लेकिन ऐसे बालकों को पढ़ने-लिखने, गणितीय क्रियाओं में कठिनाई होती है। इनकी शिक्षण विधि भी सामान्य बालकों से अलग होता है। विशेष शिक्षा के अर्न्तगत ऐसे बालकों की समस्या एवं शिक्षण विधियों का अध्ययन किया जाता है।

7- बहुविकलांग बालकों की शिक्षा:- विशेष शिक्षा के अंतर्गत वैसे बालकों को भी शिक्षा प्रदान की जाती है जो बहुविकलांग होते हैं। बहुविकलांग वैसे बालक होते हैं, जो एक से अधिक विकलांगता से ग्रसित होते हैं। ऐसे बालकों को शिक्षण में कई परेशानियॉ होती है।

व्यक्तित्व विकास का अध्ययन:- इसके अर्न्तगत विभिन्न अवस्थाओं में होने वाले विकलांग व्यक्तियों के व्यक्तिव विकास की प्रक्रिया, निर्धारक एवं प्रभावक कारकों का अध्ययन किया जाता है।

मापन एवं मूल्यांकन:- विशिष्ट शिक्षा के द्वारा विशिष्ट बालकों की शैक्षिक उपलब्धियों के मापन तथा मूल्यांकन पर भी जोड़ डालते हैं। शिक्षार्थी की समुचित शिक्षा के लिए आवश्यक है कि शिक्षार्थी की बुद्धि, अभिरूचि, मनोवृत्ति, अभिक्षमता की माप किया जाय तथा उसकी उपलब्धियों का सही-सही मूल्यांकन किया जाय। विशिष्ट शिक्षा के द्वारा इस तरह के मापन एवं मूल्यांकन के अध्ययन पर विशेष बल डाला जाता है, ताकि शिक्षा अर्थपूर्ण एवं लाभप्रद हो सके।

निर्देशन एवं मानसिक स्वास्थ्य:- विशिष्ट शिक्षा के कार्यक्षेत्र में निर्देशन तथा शिक्षार्थियों के मानसिक स्वास्थ्य की प्रधानता बताई गई है। विशिष्ट बालकों को निर्देशन तीन स्तर पर दिये जाते हैं- वैयक्तिक निर्देशन, शैक्षिक निर्देशन तथा व्यावसायिक निर्देशन। विशिष्ट शिक्षक इन तीनों प्रकार के निर्देशनों का उचित प्रबंध करके शिक्षार्थियों को अपने सामर्थ्य के अनुसार अनुकूलन समायोजन में मदद करता है। इतना ही नहीं विशिष्ट शिक्षा के द्वारा शिक्षक विशिष्ट बालकों के मानसिक स्वास्थ्य को बनाए रखने में सक्षम हो पाते हैं।

उपचार:- विशिष्ट बालकों को समय-समय पर अनेक तरह के स्वास्थ्य समस्याएं उत्पन्न होती है। इन समस्याओं को ध्यान में रखते हुए विभिन्न तरह के विशेषज्ञों की आवश्यकता होती है। इन विशेषज्ञों में ऑडियोलॉजिस्ट, चिकित्सा मनोवैज्ञानिक, डॉक्टर, हियरिंग एवं इयर मोल्ड टैक्नीशियन, स्पीच पैथोलॉजिस्ट, रिहैविलिटेशन साइकोलाजिस्ट हैं । इन सभी विशेषज्ञों का कार्य विशिष्ट शिक्षा के कार्यक्षेत्र के अर्न्तगत आता है।

विशेष बच्चों का पुनर्वास:- विशिष्ट शिक्षा का एक प्रमुख कार्यक्षेत्र विकलांग व्यक्तियों को सामाजिक, व्यावसायिक, मानसिक रूप से पुनर्वासित करना है। पुनर्वास से तात्पर्य विकलांग व्यक्तियों को शारीरिक, सांवेगिक, बौद्धिक, मनोचिकित्सकीय अथवा समाजिक क्षेत्र में जिसमें भी सम्बद्ध विकलांगता के कारण, व्यक्ति विकलांगता के कारण पिछड़ा हो तो पुनर्वास प्रक्रिया के द्वारा वह व्यक्ति अपनी शक्ति के अनुसार अधिकतम स्तर को प्राप्त कर सकता है।

1.6 विशेष बच्चों के प्रकार

शारीरिक रूप से अक्षम बच्चों की श्रेणियों की संख्या 7 से बढ़कर 21 हो गई है।

भारत में अक्षम बच्चों के 21 प्रकार नीचे दिए गए हैं: -

1. अंधापन
2. कम दृष्टि
3. कुष्ठ रोग से ठीक हुए व्यक्ति
4. श्रवण हानि (बहरा और सुनने में कठिनाई)
5. लोकोमोटर अक्षमता
6. बौनापन
7. बौद्धिक अक्षमता
8. मानसिक बिमारी
9. ऑटिज्म स्पेक्ट्रम डिस्ऑर्डर
10. मस्तिष्क पक्षाघात
11. मांसपेशीय दुर्विकास
12. क्रोनिक न्यूरोलॉजिकल स्थितियाँ
13. विशिष्ट सीखने की अक्षमताएँ
14. मल्टीपल स्क्लेरोसिस
15. वाणी और भाषा अक्षमता
16. थैलेसीमिया
17. हीमोफीलिया
18. सिकल सेल रोग
19. बहरापन, अंधापन सहित अनेक अक्षमताएँ
20. एसिड अटैक पीड़िता

21. पार्किंसंस रोग

अपनी उन्नति जानिए

भाग -1

प्रश्न-1 अधिगम अक्षम बालक से आप क्या समझते हैं?

प्रश्न-2 विशेष शिक्षा से आप क्या समझते हैं?

प्रश्न-3 शारीरिक रूप से अक्षम बच्चों की श्रेणियों की संख्या कितनी है ।

1.7 विशिष्ट शिक्षा के उद्देश्य (Aims of Special Education) :-

सीखने की परिस्थिति बालकों के सीखने की प्रक्रिया को अधिक प्रभावित करता है। इसमें शिक्षक की मनोवृत्ति (Attitude), वर्ग या कक्षा की परिस्थिति, विद्यालय की सांवेगिक वातावरण आदि को महत्वपूर्ण माना गया है क्योंकि इन सब कारकों से सीखने की परिस्थिति का निर्माण होता है। जब सीखने की परिस्थिति ऐसी होती है जिसमें बालकों की मनोवृत्ति अनुकूल होती है, वर्ग में विशेष बालकों को बैठने की आरामदेह जगह होती है, कमरा साफ सुथरा होता है, रोशनी की व्यवस्था अच्छी होती है, व विद्यालय में अधिक कोलाहल नहीं होता है तो शिक्षा अधिक लाभप्रद एवं अर्थपूर्ण होती है। इस प्रकार विशिष्ट शिक्षा के कार्यक्षेत्र में इस तथ्य का भी पता लगाना है कि विद्यालय का वातावरण कैसा है।

प्रत्येक प्रक्रिया को संचालित करने के लिये कुछ विशिष्ट उद्देश्य निर्धारित करने पड़ते हैं। विशेष शिक्षा भी एक प्रक्रिया है। अत: इसके भी कुछ निश्चित उद्देश्य अवश्य होने चाहिये। शिक्षा ही व्यक्तिगत एवं सामाजिक विकास की एक सार्थक प्रक्रिया है। अत: शिक्षाविदों ने विशेष शिक्षा के अलग-अलग उद्देश्यों एवं कार्यों को सुझाया है। ये उद्देश्य देश, काल एवं परिस्थिति के अनुसार बदलते रहते हैं। इनका निर्धारण विभिन्न प्रकार की शारीरिक अक्षमता, समय विशेष की आवश्यकता और शिक्षा की उपयोगिता के आधार पर होता है। विशेष शिक्षा के उद्देश्य निम्नलिखित हैं-

- वर्ग कक्षा में विभिन्न प्रकार के शारीरिक रूप से अक्षम बच्चों के शिक्षण अधिगम क्षमता एवं कौशलों का आकलन करना।
- विशेष बालकों की पहचान करना।

- विशेष बालकों की शक्तियॉ एवं कमजोरियों की पहचान करना।
- विशेष बच्चों की आवश्यकतानुसार शैक्षिक संसाधनों की समुचित व्यवस्था करना।
- नियमित कक्षाओं में दिव्यांगबच्चों के सुव्यवस्थित रूप से पढ़ने-लिखने संबंधी भौतिक एवं अकादमिक अनुकूलन करना।
- शारीरिक रूप से अक्षम बच्चों की मुख्य धारा में लाने वाली गतिविधियों के लिए योजना तैयार करना।
- अभिभावक एवं समुदाय में दिव्यांगता के रोकथाम के लिए योजना तैयार करना उनको इसके प्रति जागरूक करना।
- पुनर्वास विशेषज्ञों एवं विद्यालय के कर्मचारियों के बीच परामर्शात्मक संबंध कायम करना।
- विशेष शिक्षक एवं सामान्य शिक्षक के मध्य संबंध स्थापित करना।
- विशेष आवश्यकता वाले बच्चों को मुख्य धारा की कक्षा में दाखिले के लिए कार्यक्रम का निर्माण करना।
- विद्यालय के भौतिक वातावरण को अक्षम बच्चों के उपयोगिता के अनुरूप बनाना।
- सामान्य कक्षा के शिक्षकों और छात्रों को दिव्यांग बच्चों की देखभाल के लिए मानसिक रूप से तैयार करना।
- दिव्यांग बच्चों की शैक्षिक आवश्यकताओं के मापन के लिए सूचनाओं का संग्रह करना।
- विकलांग बच्चों की वर्तमान क्रियाकलापों का आकंलन करना।
- दिव्यांग बच्चों के शैक्षिक लक्ष्यों का निर्धारण करना।
- बच्चों के लक्ष्य निर्धारण में समाज, माता-पिता एवं विद्यालय के मध्य संबंध कायम करना।
- दिव्यांग बालकों के पुर्नवास के लिए कार्यक्रम तैयार करना।
- दिव्यांग बच्चों के लिए शिक्षण अधिगम सामग्री का निर्माण करना।
- गतिविधि आधारित शिक्षण कार्यक्रम का निर्माण करना।
- वैकल्पिक शैक्षिक रणनीतियों को डिजाइन करना।
- बालकों के पुनर्वास के लिए मानव संसाधन का विकास करना।

1.8 विशेष शिक्षा का महत्व

1. गुणवत्तापूर्ण शिक्षा का अधिकार- "विशेष शिक्षा का महत्व क्या है?" (What is the Importance of Special Education?) इसका सरल उत्तर यह है कि यह सुनिश्चित करता है कि प्रत्येक बच्चे को, उनकी व्यक्तिगत आवश्यकताओं और क्षमताओं की परवाह किए बिना, गुणवत्तापूर्ण शिक्षा का अधिकार है। समावेशी शिक्षा प्रणाली में कोई भी बच्चा पीछे नहीं रहना चाहिए। विशेष शिक्षा इस मौलिक मानवाधिकार को बनाए रखने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। यह दिव्यांग छात्रों को अनुरूप सहायता और सहयोग प्रदान करता है, जिससे उन्हें अपने साथियों के समान पाठ्यक्रम और शैक्षिक अवसरों तक पहुंचने में मदद मिलती है। ऐसा करने से, यह निष्पक्षता और समान अवसरों को बढ़ावा देता है, और अधिक समावेशी समाज का मार्ग प्रशस्त करता है।

2.व्यक्तिगत शिक्षण योजनाएँ- विशेष शिक्षा के प्रमुख पहलुओं में से एक व्यक्तिगत शिक्षा योजनाओं (IEP) का विकास है। ये योजनाएँ प्रत्येक दिव्यांग छात्र की विशिष्ट आवश्यकताओं और क्षमताओं को पूरा करने के लिए तैयार की गई हैं। "विशेष शिक्षा का महत्व क्या है?" (What is the Importance of Special Education?) IEP के संदर्भ में, यह पहचानने के बारे में है कि कोई भी दो छात्र एक जैसे नहीं हैं, और उनकी शैक्षिक ज़रूरतें काफी भिन्न हो सकती हैं।

विशेष शिक्षा, शिक्षक शैक्षणिक, सामाजिक और भावनात्मक लक्ष्यों को संबोधित करने वाले IEP बनाने के लिए छात्रों, उनके परिवारों और अन्य पेशेवरों के साथ मिलकर काम करते हैं। ये योजनाएं छात्रों को उनकी अपनी गति से और उनकी अनूठी सीखने की शैली के अनुरूप प्रगति करने में मदद करती हैं।

3.आत्म-सम्मान और आत्मविश्वास का निर्माण- विशेष शिक्षा केवल शिक्षाविदों पर ध्यान केंद्रित नहीं करती है; यह एक छात्र के आत्म-सम्मान और आत्मविश्वास को विकसित करने पर भी ज़ोर देती है। दिव्यांग छात्रों को अनोखी चुनौतियों का सामना करना पड़ सकता है जो उनके आत्म-सम्मान को प्रभावित कर सकती हैं। "विशेष शिक्षा का महत्व क्या है?"(What is the Importance of Special Education?) यह एक ऐसा वातावरण बनाने के बारे में है जहां ये छात्र मूल्यवान और सम्मानित महसूस करें। विशेष शिक्षा शिक्षक और सहायक कर्मचारी छात्रों की उपलब्धियों को स्वीकार करके और बाधाओं को दूर करने में मदद करके उनका आत्मविश्वास बढ़ाने के लिए काम करते हैं। जब छात्र सशक्त महसूस करते हैं और अपनी क्षमताओं पर विश्वास करते हैं, तो उनके न केवल स्कूल में बल्कि जीवन में भी सफल होने की अधिक संभावना होती है।

4. समावेशिता को बढ़ावा देना- समावेशन "विशेष शिक्षा का महत्व क्या है?" का एक मूलभूत पहलू है। एक समावेशी समाज वह है जहां सभी क्षमताओं के लोगों का स्वागत किया जाता है, उन्हें महत्व दिया जाता है और सक्रिय रूप से भाग लिया जाता है। विशेष शिक्षा दिव्यांग छात्रों को उनके समुदायों के सक्रिय सदस्य

बनने के लिए तैयार करके समावेशिता को बढ़ावा देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। गुणवत्तापूर्ण शिक्षा और आवश्यक सहायता प्राप्त करके, दिव्यांग छात्र समाज में योगदान दे सकते हैं, उच्च शिक्षा प्राप्त कर सकते हैं और सार्थक करियर बना सकते हैं। समावेशन से न केवल दिव्यांग व्यक्तियों को बल्कि पूरे समाज को लाभ होता है, क्योंकि यह विविध आबादी की क्षमता का उपयोग करता है।

5. समय से पहले हस्तक्षेप- प्रारंभिक हस्तक्षेप विशेष शिक्षा का एक प्रमुख तत्व है, और इसका बच्चे के विकास पर गहरा प्रभाव पड़ सकता है। "विशेष शिक्षा का महत्व क्या है?" यह बच्चे की विशिष्ट आवश्यकताओं और चुनौतियों को यथाशीघ्र पहचानने और आवश्यक सहायता प्रदान करने के बारे में है। प्रारंभिक हस्तक्षेप से बच्चे के परिणामों में उल्लेखनीय सुधार हो सकता है और उनकी दिव्यांगता की गंभीरता कम हो सकती है। विशेष शिक्षा पेशेवर छोटे बच्चों के साथ विकास संबंधी देरी, भाषण और भाषा की कठिनाइयों और अन्य मुद्दों को संबोधित करने के लिए काम करते हैं, जिससे उन्हें अपने साथियों के बराबर पहुंचने और शैक्षणिक और सामाजिक रूप से आगे बढ़ने में मदद मिलती है।

6. भविष्य के लिए तैयारी- विशेष शिक्षा केवल वर्तमान के बारे में नहीं है; यह दिव्यांग छात्रों को उनके भविष्य के लिए तैयार करने के बारे में भी है। "विशेष शिक्षा का महत्व क्या है?" यह उन्हें उनके सपनों और आकांक्षाओं को आगे बढ़ाने के लिए कौशल, ज्ञान और आत्मविश्वास से युक्त करने के बारे में है। विशेष शिक्षा कार्यक्रम अक्सर छात्रों को स्कूल से वयस्कता तक संक्रमण में मदद करने के लिए व्यावसायिक प्रशिक्षण और संक्रमण सेवाएं प्रदान करते हैं। इन सेवाओं में नौकरी प्रशिक्षण, बायोडाटा निर्माण और स्वतंत्र जीवन कौशल में सहायता शामिल हो सकती है, जिससे यह सुनिश्चित हो सके कि छात्र स्नातक होने के बाद जीवन के लिए अच्छी तरह से तैयार हैं।

7. परिवारों का समर्थन करना- दिव्यांग बच्चों के परिवारों को अक्सर अनोखी चुनौतियों और तनाव का सामना करना पड़ता है। विशेष शिक्षा इन परिवारों के लिए एक महत्वपूर्ण सहायता प्रणाली प्रदान करती है। "विशेष शिक्षा का महत्व क्या है?" यह यह सुनिश्चित करने के बारे में है कि माता-पिता और अभिभावकों के पास संसाधनों, सूचनाओं और पेशेवरों के एक नेटवर्क तक पहुंच है जो शैक्षिक प्रणाली को नेविगेट करने और उनके बच्चे की जरूरतों की वकालत करने में उनकी सहायता कर सकते हैं। परिवारों का समर्थन करके, विशेष शिक्षा वाले छात्रों के लिए अधिक समग्र और पोषणपूर्ण वातावरण बनाने में मदद करती है।

निष्कर्ष: विशेष शिक्षा के महत्व को कम करके नहीं आंका जा सकता। यह एक समावेशी और न्यायसंगत समाज की आधारशिला है, जहां प्रत्येक बच्चे को गुणवत्तापूर्ण शिक्षा, व्यक्तिगत समर्थन और आगे बढ़ने का अवसर का अधिकार है। "विशेष शिक्षा का महत्व क्या है?" यह विविधता को महत्व देने, समावेशिता को बढ़ावा देने और दिव्यांग छात्रों को एक उज्ज्वल और पूर्ण भविष्य के लिए तैयार करने के बारे में है। विशेष

शिक्षा केवल एक कार्यक्रम नहीं है; यह यह सुनिश्चित करने की हमारी प्रतिबद्धता का प्रमाण है कि प्रत्येक बच्चे की क्षमता को पहचाना और पोषित किया जाए।

1.9 विशिष्ट शिक्षा की आवश्यकता (Needs of Special Education) :-

1- विशिष्ट बालक अन्य बालकों के समान ही होते हैं। सामान्य बालक के ही तरह इन बालकों के शिक्षा के उद्देश्य होते हैं, उनकी आवश्यकता भी समान होती है। इन बालकों की विशेषता यह होती है कि सामान्य बालकों की तरह उन्हें देखने, बोलने, समझने की क्षमता विकसित नहीं होती है, इसलिए इन्हें विशेष शिक्षा के द्वारा उनके उद्देश्यों को पूरा किया जाता है।

2- यद्यपि इन बालकों की ज्ञानेन्द्रियाँ सही रूप से विकसित या कार्य नहीं कर पाती हैं, इसलिए इन्हें विशेष निर्देशन की आवश्यकता होती है, जो विशिष्ट शिक्षा के द्वारा पूर्ति की जाती है।

3- विशिष्ट शिक्षा के द्वारा दृष्टि बाधित, श्रवण बाधित, मानसिक मंद, अधिगम अक्षम आदि बालकों की पहचान की जाती है।

4- विशिष्ट बालक सामान्य कक्षाओं में दी जाने वाली अनुदेशन से लाभ नहीं उठा पाते हैं, क्योंकि इन बालकों की बौद्धिक क्षमता सामान्य बालकों से या तो अधिक होती है या कम होती है। सामान्य कक्षाओं में दी जाने वाली अनुदेशन सामान्य बालकों के अनुसार होती है। इसलिए इन्हें विशिष्ट शिक्षा की आवश्यकता होती है।

5- विशिष्ट बालकों के अभिभावकों, अध्यापकों और प्रबंधकों को बालकों की आवश्यकताओं को समझने में विशिष्ट शिक्षा से सहायता मिलती है। इस शिक्षा से विशिष्ट बालक समाज में अपना समायोजन करते हैं।

6- जिन बालकों को देखने, सुनने, बोलने, समझने में समस्या होती है उन्हें सामान्य बच्चों के साथ शिक्षा नहीं दी जा सकती है। अत: ऐसे बालकों के लिए विशेष पाठ्यक्रम, विधि और विशेष शिक्षकों की आवश्यकता होती है।

7- प्रतिभाशाली बालकों का बुद्धि स्तर सामान्य बालकों की अपेक्षा ऊँचा होता है इसलिए प्रतिभाशाली बालकों को सामान्य बालकों के साथ समायोजित करने में कठिनाई का सामना करना पड़ता है। सामान्यत: ऐसा पाया जाता है कि शिक्षक अपने गति से शिक्षा देता है जो सामान्य बालकों के लिए उपयुक्त है। लेकिन प्रतिभाशाली बालक सामान्य बालकों की अपेक्षा शीघ्र ही अपना कार्य समाप्त कर लेता है। ऐसी परिस्थिति में यह समस्या आती है कि प्रतिभाशाली बालक अपना समय कैसे व्यतीत करे, जबकि शिक्षक सामान्य बालकों के साथ उसी कार्य को पूरा करने में व्यस्त रहता है ऐसी परिस्थिति में इन बालकों के लिए विशिष्ट शिक्षा आवश्यक है जिससे प्रतिभाशाली बालकों को उचित दिशा निर्देशन दिया जाय।

8- विशिष्ट कक्षाओं में बुद्धिमान छात्रों को अग्रसर होने का अवसर मिलता है, लेकिन शिक्षक को ऐसे बालकों को सामान्य कक्षा में कार्य के प्रति प्रेरित करने में समस्या और बाधाओं का सामना करना पड़ता है। सामान्यत: विलक्षण बालक अन्य सामान्य बालकों के अपेक्षा संवेदनशील होता है। उनकी सोचने की क्षमता अधिक तथा तीव्र होती है। वे कार्य के प्रति सावधान होते हैं, इसलिए उनके शिक्षध में विशेष विधियों व प्रविधियों की आवश्यकता होती है।

9- विशिष्ट शिक्षा के द्वारा चयनित स्थानापन्न (Selective Placement) किया जाता है विभिन्न शाखाओं के विशेषज्ञों द्वारा बालकों का पूर्ण रूप से सामाजिक वातावरण में विभिन्न श्रेणियों में विश्लेषण, मूल्यांकन एवं निर्धारण किया जाता है। भौतिक परीक्षण तथा मूल्य निर्धारण, विभिन्न क्षेत्रों के विशेषज्ञों जैसे मानसिक मनोविज्ञानी चिकित्सक, श्रवण, नेत्र, अस्थि चिकित्सक तथा शिक्षाविद् विशिष्ट बालकों के चयनित स्थापन के लिए अति आवश्यक है।

10- विशिष्ट शिक्षा को अन्य सेवाओं की भी आवश्यकता होती है जैसे- अस्थि विकलांग बालकों का शारीरिक परीक्षण, दृष्टिबाधित बालक, श्रवण बाधित बालक एवं मानसिक मंद बालकों के लिए चिकित्सकीय परीक्षण समय-समय पर आवश्यक होती है। कुछ विशिष्ट बालकों को व्यावसायिक, शारीरिक, मानसिक, मनोवैज्ञानिक आदि सेवायें अति आवश्यक है।

अत: विशिष्ट बालकों को अपनी शक्ति के अनुसार विकास करने के लिए विशिष्ट शिक्षा मिलना अति आवश्यक है।

अपनी उन्नति जानिए

भाग -2

सत्य/असत्य बताइये:-

1. विशेष बालकों के लिए वैयक्तिक शिक्षा कार्यक्रम आवश्यक है।
2. विशेष बालकों के लिए माता-पिता का सहयोग आवश्यक है।
3. विशेष बालकों के लिए नियंत्रित वातावरण होना आवश्यक नहीं है।

1.10 सारांश:

विशिष्ट शिक्षा **Special Education** विशेष छात्रों को दी जाने वाली शिक्षा हैं। जिनकी शारीरिक संरचना एवं मानसिक स्थिति अन्य सामान्य छात्रों से भिन्न हैं। सामान्य शब्दों में दिव्यांग एवं मानसिक अस्थिरता वाले छात्रों को दी जाने वाली शिक्षा को ही विशिष्ट शिक्षा कहा जाता हैं। इस प्रकार की शिक्षा की

व्यवस्था हेतु शासन एवं प्रशासन पृथक रूप से व्यवस्था करते हैं,अर्थात ऐसे छात्रों की शिक्षा हेतु अलग से विद्यालयों की स्थापना की जाती हैं। जिससे उनके विकास में किसी प्रकार की कोई बाधा उत्पन्न न हों।

शिक्षा विशेष तौर पर डिजाइन किया गया शैक्षिक अनुदेशन है जिसमें विशिष्ट कक्षाएं अथवा विशिष्ट बालकों के शैक्षिक सामर्थ्य विकसित करने वाली सेवाएँ, मसलन विद्यालय कमें टी द्वारा बच्चों के शैक्षिक स्थापन, लोक स्वास्थ्य, मानसिक स्वास्थ्य, मानसिक मंद एवं युवा विभाग एवं शैक्षिक बोर्ड द्वारा बनाया गया अधिनियम आदि शामिल है। इसके अन्तर्गत विशेष आवश्यकता वाले बच्चों को विशिष्ट विद्यालयों में, विशिष्ट शिक्षक के माध्यम से, विशिष्ट पाठ्यचर्चा के अनुरूप शिक्षा दी जाती है। इस पाठ के अन्तर्गत हम लोगों ने विशिष्ट शिक्षा के अर्थ, इसकी आवश्यकता, इनके सिद्धान्तों का अध्ययन किया। इसके अलावा विशिष्ट शिक्षा के कार्यक्षेत्र, लाभों का भी विस्तार पूर्वक अध्ययन किया।

1.11 शब्दावली:

विशिष्ट शिक्षा:- विशिष्ट शिक्षा **Special Education** विशेष छात्रों को दी जाने वाली शिक्षा हैं। जिनकी शारीरिक संरचना एवं मानसिक स्थिति अन्य सामान्य छात्रों से भिन्न हैं। सामान्य शब्दों में दिव्यांग एवं मानसिक अस्थिरता वाले छात्रों को दी जाने वाली शिक्षा को ही विशिष्ट शिक्षा कहा जाता हैं।

विशेष विद्यालय:- जहॉं विशेष आवश्यकता वाले बच्चे अध्ययन करते हैं। ऐसे विद्यालयों में विशेष आवश्यकता वाले बच्चों से सम्बंधित शिक्षण साधन उपलब्ध होते है।

आत्मविश्वास का निर्माण- विशेष शिक्षा केवल शिक्षाविदों पर ध्यान केंद्रित नहीं करती है; यह एक छात्र के आत्म-सम्मान और आत्मविश्वास को विकसित करने पर भी ज़ोर देती है। दिव्यांग छात्रों को अनोखी चुनौतियों का सामना करना पड़ सकता है जो उनके आत्म-सम्मान को प्रभावित कर सकती हैं।

पुनर्वास:- विशिष्ट शिक्षा का एक प्रमुख कार्यक्षेत्र विकलांग व्यक्तियों को सामाजिक, व्यावसायिक, मानसिक रूप से पुनर्वासित करना है।

1.12 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

भाग -1

1. अधिगम अक्षम वैसे बालक होते हैं जिनकी बुद्धिलब्धि अन्य सामान्य बालकों से कम होती है।

2. विशेष शिक्षा उन बच्चों को शिक्षा प्रदान करने से संबंधित है जो शारीरिक या मानसिक रूप से अक्षम हैं।

3. 21

भाग -2

1. सत्य
2. सत्य
3. असत्य

1.13 संदर्भ ग्रन्थ सूची

पांडा, के0 सी0 (1997), "एजुकेशन ऑफ एक्सेपसनल चिल्डेन" नई दिल्ली: विकास पब्लिशिंग एण्ड डिस्ट्रब्यूटर्श।

गोविन्द राव, एल0 (2007), पर्सपेक्टिव ऑन स्पेशल एडुकेशन: हैदराबाद: नीलकमल पब्लिकेशन।

मुखोपाध्याय, एस0 एण्ड मनी, एम0एन0जी0 (2002) एडुकेशन ऑफ चिन्ड्रेन विद् स्पेशल नीड्स, नई दिल्ली: आक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।

इग्नू (2009) फाउनडेशन कोर्स आन एडूकेशन ऑफ चिन्ड्रेन विद डिसएबिलिटीस। नई दिल्ली इग्नू।

डा0 कुमार संजीव (2008), विशिष्ट शिक्षा, अशोक राजपथ, पटना।

सिंह, अरूण कुमार, (2001) शिक्षा मनोविज्ञान, भारती भवन, पब्लिशर्स एड डिस्ट्रीब्यूटर्स, पटना।

1.14 निबंधात्मक प्रश्न:-

1. विशेष शिक्षा से आप क्या समझते हैं? इसके उद्देश्यों की व्याख्या करें।
2. विशेष शिक्षा के कार्य क्षेत्रों का विस्तृत वर्णन करें।
3. विशेष शिक्षा के सिद्धान्त से आप क्या समझते हैं? इनके सिद्धान्तों को संक्षेप में वर्णन करें।
4. विशेष बालकों के लिए विशिष्ट शिक्षा की आवश्यकता पर संक्षेप में लेख लिखें।

इकाई 2 : विशिष्ट शिक्षा सेवाओं के प्रकार व विशिष्ट शिक्षा की सीमाएँ (Types of Special Education Services and Limitations of Special Education

इकाई की रूपरेखा:-

2.1 प्रस्तावना
2.2 उद्देश्य
2.3 विशिष्ट शिक्षा सेवाओं के प्रकार
2.3.1 पूर्ण-कालिक नियमित कक्षा में स्थापन
2.3.2 विशिष्ट शिक्षा परामर्शों के साथ पूर्ण-कालिक नियमित कक्षा में स्थापन
2.3.3 परिभ्रामी विशिष्ट शिक्षक सेवा व्यवस्था के साथ पूर्ण-कालिक नियमित कक्षा में स्थापन
2.3.4 संसाधन कक्ष/ संसाधन शिक्षक व्यवस्था के साथ पूर्ण-कालिक नियमित कक्षा में स्थापन
2.3.5 सहयोगी समूह शिक्षण के साथ पूर्ण-कालिक नियमित कक्षा में स्थापन
2.3.6 अंश-कालिक विशिष्ट वर्ग में स्थापन के साथ अंश-कालिक नियमित कक्षा में स्थापन
2.3.7 पूर्ण-कालिक विशिष्ट कक्षा में स्थापन
2.3.8 पूर्ण-कालिक विशिष्ट विद्यालय में स्थापन
2.3.9 पूर्ण-कालिक आवासीय विद्यालय में स्थापन
2.3.10 अस्पताल तथा गृह-बाध्य अनुदेश
2.4 विशिष्ट शिक्षा की सीमाएँ
2.5 सारांश
2.6 शब्दावली
2.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
2.8 संदर्भग्रंथ सूची
2.9 सहायक/ उपयोगी पाठ्यसामग्री
2.10 निबंधात्मक प्रश्न

2.1 प्रस्तावना

विशिष्ट शिक्षा से सम्बंधित यह तृतीय इकाई है। इससे पहले की इकाई के अध्ययनोपरांत आप विशिष्ट शिक्षा के उद्देश्यों तथा उसकी आवश्यकता एवं महत्व को स्पष्ट कर सकते हैं।

जैसे-जैसे विशिष्ट शिक्षा का विकास होता गया नए- नए शोध व अविष्कार हुए, नए सिद्धांतों का प्रतिपादन हुआ, समाज के दृष्टिकोण बदले तथा वैसे-वैसे विशिष्ट शिक्षा द्वारा उपलब्ध कराई जाने वाली सेवाओं का विकास हुआ। आज विशिष्ट शिक्षा के द्वारा उपलब्ध कराई जाने वाली सेवाओं को एक संतात्यक(Continuum) के रूप में संगठित किया जा सकता है, जो कि अक्षम बालकों के समें कित शिक्षा से लेकर पृथक्कीकरण तक या नियमित कक्षा में स्थापित करने से लेकर २४-घंटे संस्थागत देख-रेख तक विस्तारित है। इस इकाई में अक्षमता की मात्रा एवं विशिष्ट आवश्यकताओं की प्रकृति के आधार पर विशिष्ट शिक्षा की कौन-कौन सी सेवाएं उपलब्ध हैं? तथा विशिष्ट शिक्षा की सीमाएँ क्या हैं? आदि प्रश्नों पर विमर्श प्रस्तुत है।

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप विशिष्ट शिक्षा सेवाओं के प्रकारों को बता सकेंगे, उनमें विभेद कर सकेंगे तथा विशिष्ट शिक्षा की सीमाएँ बता सकेंगे।

2.2 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई के अध्ययनोपरांत आप

- विशिष्ट शिक्षा सेवाओं को समझ सकेंगे।
- विशिष्ट शिक्षा सेवाओं के प्रकारों को बता सकेंगे।
- विभिन्न विशिष्ट शिक्षा सेवाएं क्या हैं? पर प्रकाश डाल सकेंगे।
- विभिन्न विशिष्ट शिक्षा सेवाओं के मध्य अंतर स्पष्ट कर सकेंगे।
- विशिष्ट शिक्षा की सीमायें बता सकेंगे।

2.3 विशिष्ट शिक्षा सेवाओं के प्रकार

विशिष्ट बालकों की शिक्षा हेतु बहुत सारे प्रयास किये गए। जिसके क्रम में बहुत से प्रतिदर्शों एवं विधियों आदि का विकास हुआ। विशिष्ट शिक्षा के जन्म से ही इस बात पर विचार एवं मंथन जारी रहा कि इसे कैसे उत्कृष्ट एवं बोधगम्य बनाया जाय? विशिष्ट बालकों को अल्पतम सिमित वातावरण (Least Restrictive Environment) में अत्यधिक प्रभावी (Most Effective), सामान्य पाठ्यक्रम के अनुसार शिक्षा प्रदान करने के क्रम में बहुत सारे सिद्धांत एवं उपागम अस्तित्व में आए। विशिष्ट शिक्षा के क्षेत्र में विशिष्ट बालकों के सर्वांगीण विकास हेतु दी जाने वाली सेवाएं विशिष्ट शिक्षा सेवाएं कही जाती हैं। विशिष्ट बालकों की आवश्यकताओं को ध्यान में रखकर भूत में उपलब्ध सेवाओं को देखा जाय तो वे अधिक

सिमित वातावरण में कम प्रभावी सेवाए थीं। परन्तु समय एवं विचार के साथ वर्तमान समय में उपलब्ध सेवाएं विशिष्ट बालकों की आवश्यकताओं के अनुसार कई स्तरों पर एक संतात्यक के रूप में उपलब्ध हैं जो कि एक-दूसरे से अपेक्षाकृत अल्पतम सिमित वातावरण में अधिक प्रभावशाली हैं। विशिष्ट बालकों की आवश्यकताओं को पूर्ण करने के क्रम में उनकी क्षमताओं एवं आवश्यकताओं के अनुसार उपलब्ध विशिष्ट शिक्षा सेवाएं एक सांतत्यक रूप में निम्नवत हैं।

1) पूर्ण-कालिक नियमित कक्षा में स्थापन (Full-time placement in a regular classroom)
2) विशिष्ट शिक्षा परामर्शों के साथ पूर्ण-कालिक नियमित कक्षा में स्थापन(Full-time placement in a regular classroom with special education consultations)
3) परिभ्रामी विशिष्ट शिक्षक सेवा व्यवस्था के साथ पूर्ण-कालिक नियमित कक्षा में स्थापन(Full-time placement in a regular classroom with provisions of itinerant special educator service)
4) संसाधन कक्ष/ संसाधन शिक्षक व्यवस्था के साथ पूर्ण-कालिक नियमित कक्षा में स्थापन(Full-time placement in a regular classroom with provision of resource room/resource teacher)
5) सहयोगी समूह शिक्षण सेवाओं के साथ पूर्ण-कालिक नियमित कक्षा में स्थापन (Full-time placement in a regular classroom with provision of collaborative team teaching services)
6) अंश-कालिक विशिष्ट वर्ग में स्थापन के साथ अंश-कालिक नियमित कक्षा में स्थापन(Part-time placement in a regular classroom with part-time placement in a special class)
7) पूर्ण-कालिक विशिष्ट कक्षा में स्थापन(Full-time placement in a special class)
8) पूर्ण-कालिक विशेष विद्यालय में स्थापन(Full-time placement in a special school)
9) पूर्ण-कालिक आवासीय विद्यालय में स्थापन(Full-time placement in a residential school)
10) अस्पताल तथा गृह-बाध्य अनुदेशन(Hospital and home-bound instruction)

उपरोक्त प्रकार की सेवाएं विशिष्ट बालकों की आवश्यकताओं के अनुसार पुनर्वास कर्मियों विशेषतः विशिष्ट अध्यापकों की अनुशंसा पर उपलब्ध संसाधनों के द्वारा प्रदान की जाती हैं। पुनर्वास कर्मी सर्वप्रथम इन विशेष आवश्यकता के बालकों की पहचान करते हैं, अक्षमता का मूल्यांकन करते हैं फिर उनकी क्षमता एवं अक्षमता के अनुसार उपयुक्त सेवा के लिए अनुशंसा करते हैं। यह क्रिया एक विशिष्ट शिक्षक के लिए अति

संवेदनशील एवं जिम्मेदारीपूर्ण है। शिक्षकों को इन सेवाओं का सम्पूर्ण ज्ञान होना आवश्यक है तथा इन सेवाओं के चयन से क्या-क्या लाभ या क्या-क्या हानियाँ हो सकती हैं? पर विश्लेषण कर लेने के बाद ही किसी सेवा के लिए अनुशंसा करनी चाहिए। अतः इन सेवाओं का विस्तृत अध्ययन अत्यन आवश्यक है। जिसके क्रम में यह चित्रात्मक परिचर्चा आपको लाभान्वित करेगी।

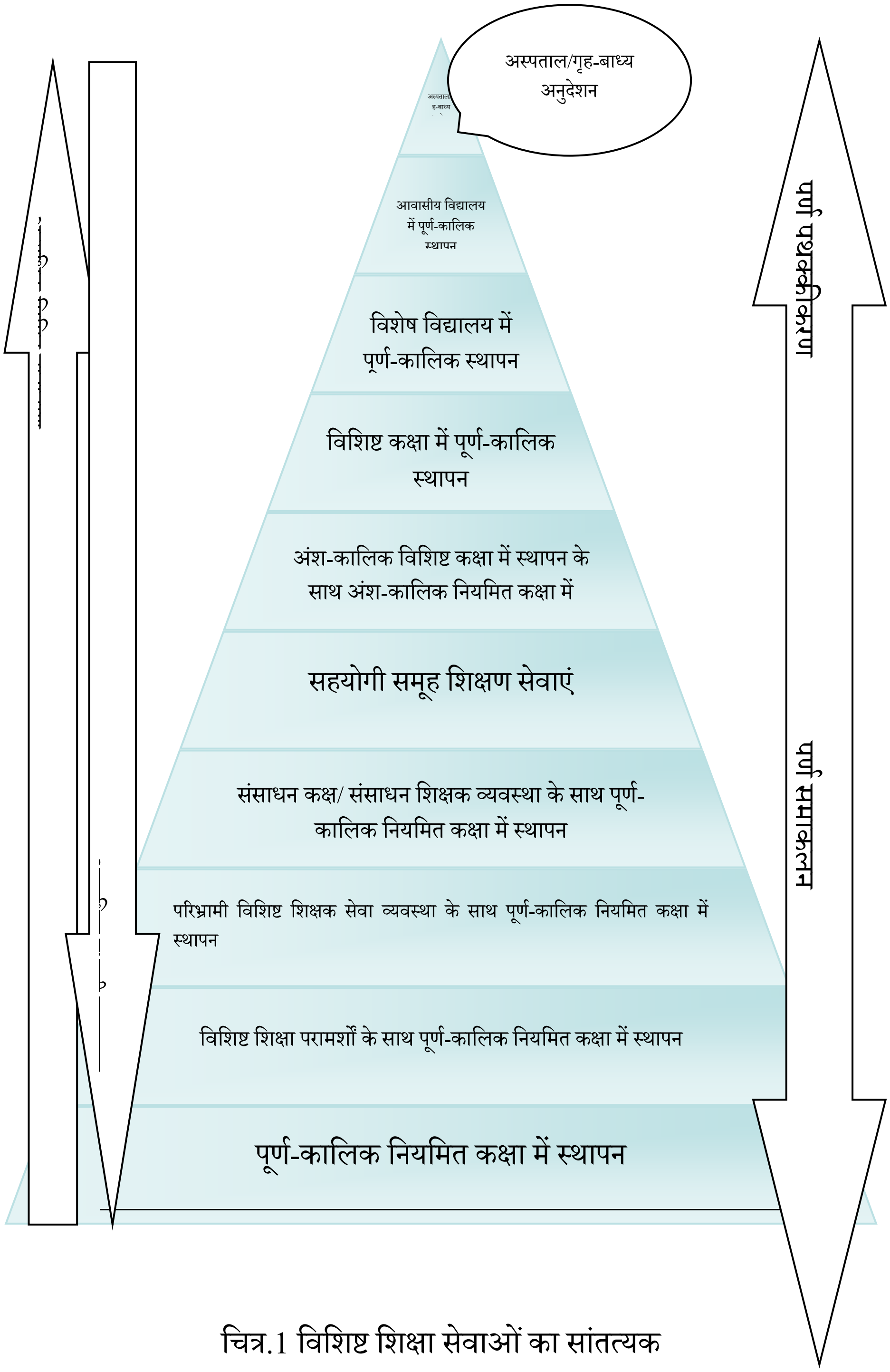

11)

चित्र.1 विशिष्ट शिक्षा सेवाओं का सांतत्यक

12)

2.2.1 पूर्ण-कालिक नियमित कक्षा में स्थापन

विकालान्गताग्रस्त बालक का पूर्ण-कालिक नियमित कक्षा में स्थापन निम्नतम स्तर की विशिष्ट शिक्षा सेवा है। इस व्यवस्था के अंतर्गत उन बालकों का स्थापन किया जाता है जिनके विकलांगता की गंभीरता कम होती है या फिर विकलांगता की प्रकृति नियमित कक्षा में शिक्षण-अधिगम को प्रभावित न करती हो। जैसे कि यदि बालक पोलियो से ग्रस्त है और सिर्फ चलने फिरने में असमर्थ है तो इस स्थिति में कक्षा वातावरण में नियमित शिक्षण-अधिगम प्रभावित नहीं होता है। ऐसे बालक का पूर्ण-कालिक नियमित कक्षा में स्थापन किया जा सकता है। क्योंकि इस प्रकार की उदार विकलांगता वाले बालक कम प्रशिक्षण के बाद ही स्वावलंबी हो जाते हैं और ऐसी स्थिति में किसी विशेषज्ञ के प्रत्यक्ष सलाह की आवश्यकता नहीं हो सकती है। नियमित अध्यापकों को भी किसी विशेष प्रशिक्षण की आवश्यकता नहीं पड़ती है। उन्हें केवल बालक की विकलांगता की प्रकृति एवं उसकी आवश्यकता से अवगत करा देना ही पर्याप्त हो सकता है।

कक्षा वातावरण एवं विद्यालय वातावरण में आवश्यकतानुसार परिवर्तन किये जा सकते हैं जिससे बालक को अल्पतम सिमित या बाधा-रहित वातावरण उपलब्ध किया जा सके परन्तु इस स्थापन में वैसे तो बालक को ही विद्यालय की जरूरतों के अनुरूप ढालने का प्रयास किया जाता है। इस व्यवस्था में बालक को समाज की मुख्या धारा में समाकलित कर लिया जाता है।

विशिष्ट बालकों के स्थापन की इस व्यवस्था में नियमित अध्यापक को विशिष्ट बालक की आवश्यकताओं के अनुसार पाठ्यसामग्री, यन्त्र व उपकरण तथा अनुदेशन विधि आदि प्रदान करा दी जाती है। इस स्तर पर सामान्यतया प्रत्यक्ष निर्देशन हेतु किसी विशेषज्ञ की जरूरत नहीं होती है। नियमित अध्यापक की विशेषज्ञता तथा कौशल विशिष्ट बालक की जरूरतों को पूर्ण करने में सक्षम हो सकती हैं।

सामान्यतया उदार मानसिक मंदता से ग्रसित बालक, अधिगम विकलांगता से ग्रसित बालक, अस्थि विकलांगता से ग्रसित बालक, वाणी विकलांगता से ग्रसित बालक, दृष्टिबाधित बालक जो ब्रेल सामग्री के साथ स्वाबलंबन पूर्वक काम कर लेते हों तथा ऊँचा सुनने वाले बालक इस प्रकार की नियमित कक्षा की व्यवस्था में पूर्ण-कालिक रूप से स्थापित किये जा सकते हैं।

इस प्रकार की स्थापन व्यवस्था कम खर्चीली है तथा बालक को अपने समुदाय में ही समाकलित करने का अवसर उपलब्ध कराती है। इस व्यवस्था की एक विशेषता यह भी है कि नियमित अध्यापक भी विशिष्ट बालक की जरूरतों को पूर्ण करने में सक्षम होते हैं। किसी विशेषज्ञ के प्रत्यक्ष निर्देशन की जरूरत नहीं पड़ती अतः विद्यालय को ऐसे बालकों को समायोजित करने में कोई परेशानी नहीं होती।

2.2.2 विशिष्ट शिक्षा परामर्शों के साथ पूर्ण-कालिक नियमित कक्षा में स्थापन

यह स्थापन भी नियमित कक्षा में पूर्ण-कालिक स्थापन है। इसमें बालक नियमित कक्षा का पूर्ण-कालिक विद्यार्थी होता है। नियमित अध्यापक नियमित कक्षा में विशिष्ट पाठ्य-सामग्रियों, विधियों, उपकरणों एवं यंत्रों की सहायता से विशिष्ट बालक की आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए अध्यापन कार्य करता है। परन्तु इस व्यवस्था में नियमित अध्यापकों को विशिष्ट शिक्षकों के परामर्श की आवश्यकता हो सकती है। विशिष्ट शिक्षक नियमित शिक्षकों को विशिष्ट सामग्रियों के चयन एवं प्रयोग, यंत्रो एवं उपकरणों के प्रशिक्षण तथा विशिष्ट बालकों के आवश्यकतानुरूप शिक्षण विधियों के प्रयोग सम्बन्धी निर्देशन एवं परामर्श देता है। यहाँ भी विशेषज्ञ के प्रत्यक्ष निर्देशन की आवश्यकता नहीं होती है। वह केवल नियमित अध्यापकों को अनुदेशित करता है।

यह स्थापन भी विशिष्ट बालक को अपने समुदाय में यथासंभव समाकलित करने का प्रयास करता है। इस व्यवस्था में भी विद्यालय के आधारभूत ढांचें में कोई परिवर्तन नहीं किया जाता है। परन्तु बालक को अल्पतम सिमित वातावरण प्रदान करने का प्रयास किया जाता है।

2.2.3 परिभ्रामी विशिष्ट शिक्षक सेवा व्यवस्था के साथ पूर्ण-कालिक नियमित कक्षा में स्थापन

यह स्थापन विशिष्ट बालक की आवश्यकता को थोडा अधिक महत्व देते हुए नियमित कक्षा में पूर्ण-कालिक स्थापन की व्यवस्था करता है। इस स्थापन में विशिष्ट बालक को नियमित कक्षा में ही परिभ्रामी शिक्षक के प्रत्यक्ष निर्देशन व अनुदेशन की व्यवस्था होती है। यह परिभ्रामी शिक्षक नियोजित समय-सारणी के अनुसार विशिष्ट बालकों को व्यक्तिगत या छोटे समूहों में सप्ताह के एक या दो दिन विद्यालय में अपनी प्रत्यक्ष सेवा प्रदान करता है। इस प्रकार की व्यवस्था ग्रामीण क्षेत्रों या सुदूर क्षेत्रों, जहाँ विशिष्ट बालकों की संख्या कम होती है में उपलब्ध कराई जाती है। ये परिभ्रामी शिक्षक विशिष्ट बालकों से प्रत्यक्ष अंतःक्रिया करते हैं तथा नियमित अध्यापकों को भी विशिष्ट शिक्षण सामग्रियों के चयन, निर्माण एवं प्रयोग तथा विशिष्ट शिक्षण विधियों के साथ उपयुक्त सहायक उपकरणों एवं यंत्रों के प्रशिक्षण सम्बन्धी निर्देशन एवं परामर्श देते हैं।

इस व्यवस्था से उदार विकलांगों के साथ-साथ संयत विकलांग भी आसानी से लाभान्वित हो जाते हैं। यह स्थापन की व्यवस्था भी कम खर्चीली है क्योंकि एक विशिष्ट परिभ्रामी शिक्षक ८-१० विद्यालयों में अपनी सेवा देता है। जहाँ पर नियमित संसाधन शिक्षक उपलब्ध नहीं कराया जा सकता वहाँ के लिए यह सबसे उपयुक्त व्यवस्था है।

2.2.4 संसाधन कक्ष/ संसाधन शिक्षक व्यवस्था के साथ पूर्ण-कालिक नियमित कक्षा में स्थापन

एक कदम और आगे बढ़ते हुए संसाधन कक्ष/ संसाधन शिक्षक व्यवस्था के साथ पूर्ण-कालिक नियमित कक्षा में स्थापन व्यवस्था में विशिष्ट बालक का नामांकन नियमित कक्षा में ही किया जाता है परन्तु उसकी विशिष्ट समस्याओं का निदान संसाधन कक्ष में संसाधन शिक्षक द्वारा किया जाता है। बालक अपने विद्यालय समय का कुछ भाग संसाधन कक्ष में व्यतीत करता है तथा बचे समय में वह नियमित कक्षा का सदस्य होता है। विशिष्ट बालक की समस्याओं की गंभीरता के अनुसार विशिष्ट शिक्षक के द्वारा उसकी समस्याओं का निदान संसाधन कक्ष में किया जाता है। इस प्रकार के स्थापन व्यवस्था में विद्यालय के आधारभूत ढांचे में अंशतः परिवर्तन किया जा सकता है। इस स्थापन में भी उदार एवं संयत विकलांग लाभान्वित होते हैं। वैसे तो कुछ-कुछ विकलांगताओं की गंभीर स्थितियों को भी इस व्यवस्था से लाभ मिल सकता है। यह व्यवस्था भी बालकों को समाकलित करने का प्रयास करती है। इसमें बालक अपने समुदाय के अन्य सदस्यों के साथ भी अंतःक्रिया स्थापित करता है।

संसाधन शिक्षक संसाधन कक्ष में विशिष्ट बालकों की समस्याओं का निदान करता है। साथ ही वह नियमित शिक्षकों को भी सहायता प्रदान करता है। उन्हें विशिष्ट शिक्षण सहायक सामग्रियों के चयन, निर्माण तथा प्रयोग का प्रशिक्षण देता है तथा विशिष्ट शिक्षण विधियों एवं तकनीकों से भी अवगत कराता है। विशिष्ट बालकों के द्वारा प्रयोग की जाने वाली सहायक उपकरणों एवं यंत्रो का प्रशिक्षण भी प्रदान करता है। इस प्रकार यह स्थापन व्यवस्था अपेक्षाकृत महँगी एवं अधिक जटिल है लेकिन गंभीर विकलांगताओं हेतु अधिक उपयोगी एवं प्रभावशाली है।

2.2.5 सहयोगी समूह शिक्षण सेवाओं के साथ पूर्ण-कालिक नियमित कक्षा में स्थापन

सहयोगी समूह शिक्षण विशेष आवश्यकता वाले बालकों को उनके सामान्य सहपाठियों के साथ नियमित कक्षा में पूर्ण-कालिक अनुभव प्राप्त करने का अवसर प्रदान करता है। इस व्यवस्था के अंतर्गत नियमित कक्षा में ही पूरे दिन विशिष्ट अध्यापक नियमित अध्यापकों के साथ विशिष्ट बालकों की समस्याओं को संशोधित एवं अनुकूलित अनुदेशन के द्वारा हल करता है। इस प्रकार की व्यवस्था में छात्रों की संख्या सामान्य कक्ष संख्या से कदापि अधिक नहीं रखी जाती। विशिष्ट बालकों की संख्या कुल बालकों की संख्या की 40%से अधिक नहीं रखी जा सकती। अर्थात कक्ष में सामान्य बालकों की संख्या 20-25 तथा विशिष्ट बालकों की संख्या अधिकतम 10 हो सकती है।

सहयोगी समूह शिक्षण में एक नियमित अध्यापक के साथ एक विशिष्ट अध्यापक सह-पाठ योजना बनाते है तथा उसके अनुसार ही कक्षा में अनुक्रिया एवं क्रिया-कलाप करते हैं। जिससे सभी बालकों के शैक्षिक आवश्यकताओं की पूर्ति की जाती है। विशिष्ट अध्यापक एवं नियमित अध्यापक साथ में विभिन्न

विधियों के प्रयोग से एक अधिगम-अनुकूलित वातावरण तैयार करते हैं तथा सामान्य पाठ्यक्रम को लागू करते हैं। जबकि सहयोगी समूह शिक्षण पूरे दिन उपलब्ध कराया जाता है लेकिन बालकों की समस्याओं के अनुसार यह कम भी हो सकता है या विषयगत भी हो सकता है।

यह व्यवस्था भी थोड़ी अपेक्षाकृत महंगी है लेकिन बालकों के पूर्ण समाकलन के अवसर उपलब्ध कराती है। नियमित अध्यापकों की एक व्यावहारिक समस्या भी आ जाती है कि उन्हें विशिष्ट अध्यापक के साथ मिलकर सह-पाठ-योजना का निर्माण करना पड़ता है तथा वे विषय के अध्यापन में भी कठिनाई महसूस करते हैं।

2.2.6 अंश-कालिक विशिष्ट वर्ग में स्थापन के साथ अंश-कालिक नियमित कक्षा में स्थापन

इस प्रकार की सेवा में विशिष्ट बालक विशिष्ट कक्षा का सदस्य होता है तथा अपने पाठ्यक्रम के शैक्षिक भाग के विषयगत समस्याओं को विद्यालय समय के प्रथम अर्ध-भाग में विशिष्ट कक्ष में ही विशिष्ट अध्यापक के विशेष अनुदेशन की सहायता से हल करता है तथा विद्यालय समय के द्वितीय अर्ध-भाग में वह नियमित कक्षा के क्रिया-कलापों में अपनी सहभागिता सुनिश्चित करता है। जिसमें वह संगीत, कला, शारीरिक शिक्षा एवं अन्य सह-विद्य क्रिया-कलापों में भाग लेता है।

इस प्रकार की सेवा में संयत विकलांग ठीक ढंग से लाभान्वित हो सकते हैं। यह सेवा भी बालक को सामान्य से अलग होने का भान कराते हुए भी समाकलन के अवसर उपलब्ध कराती है।

2.2.7 पूर्ण-कालिक विशिष्ट कक्षा में स्थापन

इस सेवा के अंतर्गत विशिष्ट बालक को पूर्ण-रूप से नियमित विद्यालय की विशिष्ट कक्षा में स्थापित कर दिया जाता है। इस प्रकार की सेवा से सामान्यतया गंभीर विकलांगों- जैसे कि गंभीर मानसिक मंदता से ग्रसित बालक को लाभान्वित किया जा सकता है। यह विकलांगजनों को प्रदान की जाने वाली बहुत ही पुरानी एवं परंपरागत प्रकार की सेवा है। इस प्रकार की सेवा सामान्य सहपाठियों से पृथक्कीकरण के कारण बड़ी आलोचना में भी रही है। इस प्रकार की व्यवस्था में एक ही प्रकार की विकलांगता वाले 10-15 बालकों को विशेष कक्षा में स्थापित किया जाता है, जहाँ बालक विशिष्ट अध्यापको की सहायता से अपने अधिगम को प्राप्त कर पाते हैं। ये बालक पूरे दिन विशिष्ट कक्षा में ही विशिष्ट शिक्षकों के द्वारा लाभान्वित होते है। केवल मध्यन्हावकाश तथा सामूहिक विद्यालय क्रियाकलापों एवं समारोहों में ही ये विशिष्ट बालक अपने नियमित सामान्य सहपाठियों के साथ अन्तः क्रिया स्थापित कर पाते है। ग्रामीण या सुदूर इलाकों में जहाँ 10-15 एक ही विकलांगता के बालक नहीं मिल पाते वहाँ कई विकलांगताओं को भी शामिल कर लिया जाता है। लेकिन

विशिष्ट अध्यापक की विशेषज्ञता भी विभिन्न विकलांगताओं में हो का भी ध्यान दिया जाता है। ताकि विशिष्ट बालकों की समस्याओं का निदान ठीक ढंग से किया जा सके।

इस प्रकार की सेवा पृथक्कीकरण को बढ़ावा देती है अतः वर्तमान में कम लोकप्रिय है। अपेक्षाकृत शैक्षिक निष्पादन के पदों में अधिक प्रभावशाली हो सकती है। परन्तु व्यावहारिक एवं मनोवैज्ञानिक आदर्शों को प्राप्त नहीं कर पाती।

2.2.8 पूर्ण-कालिक विशेष विद्यालय में स्थापन

यह सेवा विशिष्ट बालकों की किसी एक विकलांगता के विद्यालय के शैक्षिक परिवेश में अधिगम वातावरण उपलब्ध कराती है जहाँ बालक पूरे दिन एक ही विकलांगता वाले बालकों के बीच अपने अधिगम अनुभवों को प्राप्त करते हैं। इस प्रकार के विद्यालयों को विशेष विद्यालय कहते हैं। यह व्यवस्था भी पृथक्कीकरण को बढ़ावा देती है परन्तु एक सकारात्मक पक्ष यह है कि विद्यालय के बाद बालक अपने माता-पिता एवं परिवार के साथ अंतःक्रिया स्थापित कर पाते हैं। ये विद्यालय विशिष्ट रूप से किसी एक विकलांगता की प्रकृति के अनुसार बनाये गए होते हैं तथा विशिष्ट यंत्रों एवं उपकरणों से सुसज्जित होते हैं जिससे बालकों की सम्पूर्ण समस्याओं का निदान किया जा सके। इस प्रकार की सेवा भी विशेषतः गंभीर विकलांगजनों हेतु ही प्रभावी हो सकती है। अपने देश के अलावे अन्य देशों में भी विशेष विद्यालय काफी प्रचलन में रहें है और आज भी मौजूद हैं।

2.2.9 पूर्ण-कालिक आवासीय विद्यालय में स्थापन

इस प्रकार की सेवा आवासीय विद्यालयों द्वारा अति सीमित वातावरण में विशिष्ट बालकों को अधिगम अनुभवों के साथ जीवन कौशलों, स्व-सहायता कौशलों तथा सम्प्रेषण कौशलों के प्रशिक्षण की व्यवस्था करती है। इस प्रकार की सेवा से अति गंभीर एवं गहन विकलांगजन लाभान्वित होते हैं। इस प्रकार की सेवा सामान्यतया पूर्ण दृष्टिबाधित, पूर्ण श्रवणबाधित तथा अति गंभीर मानसिक मंद बालकों को प्रदान की जाती है। ये बालक पूर्णरूपेण समुदाय, परिवार, माता-पिता से पृथक रहते हैं परन्तु लंबी छुट्टियों में उन्हें घर जाने व अपने परिवार या समुदाय से अंतःक्रिया स्थापित करने का अवसर मिलता है। इन विद्यालयों में विशेष विकलांगता के विभिन्न विशेषज्ञों के साथ अन्य विशेषज्ञ भी होते हैं जहाँ बालक की सम्पूर्ण समस्यायों का निदान एक ही छत के निचे उपलब्ध हो सके। जैसे कि चिकित्सक, मनोचिकित्सक, व्यावसायिक चिकित्सक, पुनर्वास कार्यकर्ता एवं निर्देशक आदि उपलब्ध रहते हैं। यहाँ पर बालक स्वाबलंबी तो हो जाता है लेकिन यह सेवा पृथक्कीकरण के कारण थोड़ी आलोचना की पात्र भी है। यह व्यवस्था काफी खर्चीली है तथा ग्रामीण

एवं सुदूर क्षेत्रों में जहाँ एक विकलांगता के बालकों की संख्या अत्यंत कम हो, उपलब्ध नहीं कराई जा सकती।

2.2.10 अस्पताल तथा गृह-बाध्य अनुदेशन

इस प्रकार की सेवा उन गहन विकलांगजनों को उपलब्ध कराई जाती है जो कि किसी मनोवैज्ञानिक या शारीरिक परिस्थितियों (स्थायी या अस्थायी) के कारणवश अस्पताल या घर से विद्यालय पंहुचने में असमर्थ हों। इस सेवा के अंतर्गत विशिष्ट अध्यापक बालक को अस्पताल या उसके घर पर ही जाकर अनुदेशन देता है तथा उसकी समस्याओं का समाधान करता है। साथ ही बालक के माता-पिता एवं नियमित अध्यापकों से भी सम्बन्ध स्थापित करता है तथा उसके विकास की योजना बनाता है। इस प्रकार की सेवा से सामान्यतया अतिगंभीर मानसिकमंद या भावात्मक परेशान बालकों को अनुदेशन उपलब्ध कराया जाता है।

पूर्व में ये सेवाएं अधिक सिमित एवं अल्प प्रभावी थीं परन्तु वर्तमान में ये अल्पतम सिमित वातावरण में अत्यधिक प्रभावी हैं। वर्तमान में ये सेवाएं उदार एवं गंभीर विकलांगजनों को अल्पतम सिमित वातावरण में अत्यधिक प्रभावी अनुभव प्रदान कर रहीं हैं। वैसे तो वर्तमान परिप्रेक्ष्य में ये सेवायें कम प्रभावी मानी जा रहीं हैं तथा लोग अब समावेशी शिक्षा व्यवस्था को अत्यधिक प्रभावी एवं मानवीय मान रहे हैं। यूँ तो ये दोनों अलग-अलग सिद्धांत हैं। यहाँ पर हम केवल विशिष्ट शिक्षा के समाकलन सिद्धांत से ही संबधित हैं।

अभ्यास प्रश्न-

टिप्पणी-

(i) निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर देने के लिए दिए गए खाली स्थान का प्रयोग कीजिये।

(ii) अपने उत्तर की जाँच इकाई के अंत में दिए गए उत्तर से कीजिये।

प्रश्न-

1. विशेष शिक्षा सेवाएं क्या हैं?

----

2. नियमित कक्षाओं में पूर्ण-कालिक स्थापन से आप क्या समझते हैं?

----

3. नियमित कक्षा में पूर्ण-कालिक स्थापन वाली सेवाओं को गिनाइये?

----

4. विशिष्ट शिक्षा सेवाओं में कौन सी सेवा अत्यधिक प्रभावी वातावरण उपलब्ध कराती है?और कैसे?

----

5. विशिष्ट शिक्षा सेवाओं में कौन सी सेवा पूर्ण पृथक्कीकरण को बढ़ावा देती है?

----

6. अत्यधिक सिमित वातावरण से आप क्या समझते है?

----

7. अल्पतम सिमित एवं अत्यधिक प्रभावी वातावरण का क्या तात्पर्य है?

----

8. विशेष विद्यालयों में पूर्ण-कालिक स्थापन की अनुशंसा किन परिस्थितियों में की जानी चाहिए? स्पष्ट करें।

2.4 विशिष्ट शिक्षा की सीमाएँ

विशिष्ट शिक्षा जहाँ एक ओर विशिष्ट बालकों की शिक्षा व्यवस्था एवं पुनर्वास का पूर्ण समाधान देने का प्रयत्न करती है वहीँ इस शिक्षा व्यवस्था की कुछ सीमाएँ भी हैं। विशिष्ट शिक्षा में समय के साथ बहुत से सिद्धांत आये और सब अपने आप में उत्कृष्ट रहे परन्तु हर आने वाले सिद्धांत पीछे के सिद्धांत को कहीं-न-कहीं अनुपयुक्त ही साबित किये। वैसे तो विशिष्ट शिक्षा सेवाओं के सभी प्रकार आज भी अस्तित्व में हैं और उन सबकी अपनी महत्ता है। आज भी सभी क्षेत्रों में ज्ञान के असीम विकास हो जाने के बावजूद भी हमें बालकों के व्यव्हार का ज्ञान अधूरा ही है तथा हम यह भी जानने में सफल नहीं हो पाए है कि विशिष्ट बालकों का सही परिदृश्य क्या है। इन सभी अपर्याप्त ज्ञान के साथ भी विशिष्ट शिक्षा से होने वाले लाभों व फायदों को नाकारा नहीं जा सकता। विशिष्ट शिक्षा ने ही विशिष्ट बालकों को दुनिया में सामान्य जन्शंख्या के समानांतर खड़ा किया है। आज जो भी बदलाव या परिवर्तन हैं उन सबके पीछे कहीं-न-कहीं विशिष्ट शिक्षा का ही योगदान है। इन सभी विशेषताओं के साथ विशिष्ट शिक्षा की सीमाओं को निम्नलिखित विन्दुओं में संकलित किया जा सकता है।

- विशिष्ट बालक जब इस प्रकार की सेवाओं के लिए चिन्हित किया जाता है तब तक सामान्यतया देर हो जाती है। जिससे बालक के व्यवहार में अपेक्षित परिवर्तन प्राप्त करना कठिन हो जाता है। विशिष्ट शिक्षा में हुए सभी प्रयासों के बावजूद अभी तक शीघ्र हस्तक्षेप की प्रभावी रणनीति नहीं बनायीं जा सकी है जिससे बालक का पूर्ण विकास किया सके। बालक का जब विशेष विद्यालय में नामांकन किया जाता है तो उसे सामान्यतया घरेलू प्रशिक्षण भी नहीं दिया गया रहता है। परिणामस्वरूप इन बालकों को सामाजिक कौशलों, दैनिक जीवन जीने के कौशलों के साथ शैक्षिक एवं व्यावसायिक प्रशिक्षण देने में अधिक समय लगता है।

- विशिष्ट बालकों का नामांकन विभिन्न उपलब्ध सेवाओं में उनकी अक्षमता एवं क्षमता के आधार पर किये गए वर्गीकरण के आधार पर किया जाता है। जब कि यह वर्गीकरण कि वास्तविकता ही संदेह के घेरे में है। क्या वह बालक जिसको किसी विशिष्ट सेवा के लिए अनुशंसित किया गया है उसी सेवा को प्राप्त करने के योग्य है? या उसको किसी अन्य सेवा से अधिक लाभ प्राप्त हो सकता है। चूँकि यह प्रक्रिया मानवीय है इसलिए इसकी वस्तुनिष्ठता भी कम है।

- विशिष्ट बालकों को विभिन्न विशिष्ट शिक्षा सेवाओं के लिए अनुशंसित करने से पूर्व उनकी विकलांगता का आँकलन एवं मूल्यांकन विभिन्न परीक्षणों एवं तकनीकों के द्वारा किया जाता है। आई इ डी योजना में यह उल्लेख किया गया है कि यह सभी मूल्यांकन एवं आँकलन योग्य एवं अनुभवी विशेषज्ञों द्वारा किया जाना चाहिए। यह आँकलन दो प्रयोजनों के लिए किया जाता है- विकलांगता का स्तर एवं प्रकार या प्रकृति जानने हेतु तथा इसके हस्तक्षेप हेतु प्रदान किये जाने वाले निर्देशन हेतु। यहाँ पर दो प्रश्न सामने आते हैं- आँकलन हेतु कौन सा परीक्षण एवं कौन सी तकनिकी का प्रयोग किया गया तथा आँकलन किसके द्वारा किया गया। ये दोनों प्रश्न स्वाभाविक हैं क्योंकि इस क्षेत्र में जो भी परीक्षण एवं तकनीकें उपलब्ध है वो निरपेक्ष नहीं हैं तथा ये परीक्षण आँकलन विशेषज्ञों को उपलब्ध भी नहीं हो पाते। दूसरे कि ग्रामीण या सुदूर इलाकों में विभिन्न आँकलन विशेषज्ञों की अनुपलब्धता भी इस प्रक्रिया को अविश्वसनीय बना देती है।

- आगे हम बात करें तो "बच्चे कैसे सिखते हैं" तथा "सिखने के कारकों" का स्पष्ट चित्रण आज भी एक मुद्दा है। और जब विशिष्ट बालकों की आवश्यकताएं भिन्न है तो उनके सिखने के तरीके भी भिन्न होंगे तथा इनके सिखने को प्रभावित करने वाले करक भी भिन्न होंगे। ऐसी परिस्थिति में अधूरे ज्ञान के साथ ही हम विशिष्ट जनों के शिक्षा एवं प्रशिक्षण की व्यवस्था कर पा रहे हैं।

- चूँकि यह शिक्षा सेवा अपेक्षाकृत महँगी है इसलिए निजी संस्थानों के साथ सरकारें भी बजट के आभाव में इसे लागु करने में कठिनाई महसूस करती हैं।

- वर्तमान में विशिष्ट बालकों को नियमित विद्यालयों में नामांकित किया जा रहा है। परन्तु प्रश्न है क्या उनकी क्षमताओं का पूर्ण विकास किया जा रहा है? क्या विशेष शिक्षक एवं अन्य पुनर्वास कर्मीयों की सेवा उपलब्ध कराई जा रही है? क्या हम उन्हें निम्नतम स्तर का अधिगम उपलब्ध कराने में सक्षम हैं? तो हम पाएंगे कि अभी हम बहुत पीछे है। इसके पीछे नियुक्ति प्रक्रियाओं में भी भारी

खामियां हैं। एक तरफ जहाँ योग्य विशेषज्ञों की कमियां हैं, वे बेरोजगार भी हैं, वहीं अप्रशिक्षितों को भर्ती कर दिया गया है।

- परीक्षा प्रणाली भी अभी विशिष्ट बालकों के अनुकूल नहीं हो पाई है। कुछ परिवर्तन हुए हैं जैसे- दृष्टिबाधितों को लेखक व अधिक समय की व्यवस्था। परन्तु अन्य विकलांगजनों एवं दृष्टिबाधितों को भी जांचने व परखने के क्रम में अभी परीक्षा प्रणाली सक्षम नहीं हो पाई है।

- विशिष्ट बालकों का वर्गीकरण(Labelling) भी अभी एक बहुत बड़ा मुद्दा है। कुछ विशेषज्ञों का मत है कि वर्गीकरण नहीं होना चाहिए तथा कुछ इसके पक्ष में हैं। वास्तव में इसके कुछ अच्छे प्रभावों के साथ कुछ नकारात्मक प्रभाव भी हैं। नकारात्मक प्रभाव इतने प्रबल हैं कि बालक को दीन-हीन का भाव ला देते है तथा समाज, परिवार आदि में भी लोग बालक के साथ भेद-भाव करने लगते हैं, जो कि अमानवीय है।

- विशिष्ट शिक्षा की एक बड़ी परेशानी यह भी है की वह एक ही विशिष्ट(संसाधन) शिक्षक से सभी विषयों का ज्ञाता होने की अपेक्षा करती है। बहुत सारी सेवाओं में केवल एक विशिष्ट शिक्षक की व्यवस्था है तथा प्रत्यक्ष अनुदेशन की भी व्यवस्था भी है। जो कि अव्यवहारिक है।

- एक बड़ी समस्या यह है कि बहुत सी सेवाओं के अंतर्गत एक विद्यालय में एक विशिष्ट अध्यापक के नियुक्ति का प्रयोजन है। एक ही विशिष्ट शिक्षक से सभी विकलांगताओं की विशेषज्ञता की अपेक्षा करना भी अतर्कसंगत है।

- विशिष्ट शिक्षा सेवा में कई प्रकार की सेवाएं तो पृथक्कीकरण को बढ़ावा देती हैं। जबकि कई ऐसी विशिष्ट शिक्षा सेवाएं हैं जो समाकलन तक की पहुँच तो रखतीं हैं परन्तु समावेशन जैसे आदर्शों को प्राप्त करने में असक्षम हैं।

- विशिष्ट शिक्षा सेवा में खास कर वे सेवाएं जो पृथक्कीकरण को बढ़ावा देती हैं माता-पिता की भूमिका से अनभिज्ञ कराती हैं। इस शिक्षा सेवा में माता-पिता की सहभागिता भी सुनिश्चित नहीं हो पाती अतः अप्रभावी है।

अभ्यास प्रश्न-

टिप्पणी-

(i) निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर देने के लिए दिए गए खाली स्थान का प्रयोग कीजिये।

(ii) अपने उत्तर की जाँच इकाई के अंत में दिए गए उत्तर से कीजिये।

प्रश्न-

9. वर्गीकरण की प्रक्रिया विशिष्ट शिक्षा को कैसे सिमित करती है?

----

10. आँकलन की प्रक्रिया से विशिष्ट शिक्षा कैसे प्रभावित होती है?

----

11. "सीखने के निम्नतम स्तर" से आप क्या समझते हैं?

----

12. विशिष्ट शिक्षा सेवाओं को प्रचलित परीक्षा प्रणाली कैसे प्रभावित करती है?

2.5 सारांश

विशिष्ट शिक्षा के क्षेत्र में विशिष्ट बालकों के सर्वांगीण विकास हेतु किये जाने वाले प्रयास के क्रम में कई प्रकार की सेवाएं अस्तित्व में आयीं जिनमें से प्रमुख सेवाएं एक संतात्यक के रूप में व्यवस्थित की जा सकती हैं, निम्नवत हैं-

1) **पूर्ण-कालिक नियमित कक्षा में स्थापन (Full-time placement in a regular classroom)**: इस प्रकार की सेवा में विशिष्ट बालक नियमित कक्षा का पूर्ण-कालिक सदस्य होता है तथा नियमित अध्यापकों के अनुदेशों से ही उसकी समस्याओं का निदान कर लिया जाता है।
2) **विशिष्ट शिक्षा परामर्शों के साथ पूर्ण-कालिक नियमित कक्षा में स्थापन(Full-time placement in a regular classroom with special education consultations):** इस प्रकार की सेवा विशिष्ट बालकों को नियमित कक्षा में ही स्थापित कराती है तथा उनकी आवश्यकताओं को पूर्ण करने के लिए विशेष शिक्षण सहायक सामग्रियों, सहायक उपकरणों एवं तकनीकों के प्रयोग का प्रयोजन करती है।
3) **परिभ्रामी विशिष्ट शिक्षक सेवा व्यवस्था के साथ पूर्ण-कालिक नियमित कक्षा में स्थापन(Full-time placement in a regular classroom with provisions of itinerant special educator service):** इस सेवा के अंतर्गत विशिष्ट बालक नियमित कक्षा का ही सदस्य रहता है परन्तु एक परिभ्रामी शिक्षक की सहायता से उसके नियमित

शिक्षकों को निर्देशन एवं परामर्श की व्यवस्था होती है। यहाँ पर विशिष्ट शिक्षक के द्वारा बालक को प्रत्यक्ष निर्देशन नहीं मिलता है।

4) **संसाधन कक्ष/ संसाधन शिक्षक व्यवस्था के साथ पूर्ण-कालिक नियमित कक्षा में स्थापन(Full-time placement in a regular classroom with provision of resource room/resource teacher):** यह सेवा विशिष्ट बालकों को विशिष्ट शिक्षक की प्रत्यक्ष सेवा संसाधन कक्ष में प्रदान कराती है तथा बालक अन्य क्रियाकलापों को नियमित कक्षाओं में ही करता है।
5) **सहयोगी समूह शिक्षण सेवाओं के साथ पूर्ण-कालिक नियमित कक्षा में स्थापन (Full-time placement in a regular classroom with provision of collaborative team teaching services):** इस सेवा में बालक नियमित कक्षा में ही अपने अन्य सहपाठियों के साथ शिक्षा ग्रहण करता है। यहाँ पर विशिष्ट बालकों की समस्याओं को हल करने हेतु एक ही समय में कक्षा में दो या तीन शिक्षक होते हैं। एक नियमित शिक्षक व् अन्य विशिष्ट शिक्षक।
6) **अंश-कालिक विशिष्ट वर्ग में स्थापन के साथ अंश-कालिक नियमित कक्षा में स्थापन(Part-time placement in a regular classroom with part-time placement in a special class):** इस प्रकार की सेवा में बालक विद्यालय समय का कुछ भाग विशिष्ट वर्ग में, जहाँ उसकी विशेष आवश्यकताओं की पूर्ति की जाती है तथा शेष नियमित कक्षा में, जहाँ वह अन्य सामान्य सहपाठियों के साथ विद्यालय की क्रियाकलापों में अपनी भागीदारी सुनिश्चित करता है व्यतीत करता है।
7) **पूर्ण-कालिक विशिष्ट कक्षा में स्थापन(Full-time placement in a special class):** इस प्रकार की सेवा में नियमित विद्यालाय में ही एक विशिष्ट कक्षा का प्रबंध होता है जिसमें बालक पुरे दिन उसी विशिष्ट कक्षा में शिक्षा ग्रहण करता है तथा विद्यालय के अन्य सामूहिक गैर शैक्षणिक क्रिया-कलापों में अपनी सहभागीता सुनिश्चित करता है।
8) **पूर्ण-कालिक विशेष विद्यालय में स्थापन(Full-time placement in a special school):** यह सेवा किसी एक विकलांगता में विशेषज्ञता रखती है तथा इस विद्यालय में केवल उसी विकलांगता के विद्यार्थी ही नामांकित किये जाते हैं। बालक विद्यालय में विद्यार्जनोपरांत अपने घर व समुदाय से अंतःक्रिया करने का अवसर प्राप्त करता है।
9) **पूर्ण-कालिक आवासीय विद्यालय में स्थापन(Full-time placement in a residential school):** इस सेवा के अंतर्गत बालक आवासीय विद्यालय जो की किसी एक

विकलांगता में विशेषज्ञता रखते हैं में नामांकित किया जाता है तथा २४-घंटे विद्यालय में अपने शैक्षिक क्रिया-कलापों के साथ जीवन के अनेक कौशलों को सीखता है। बालक छुट्टियों एवं त्योहारों में अपने घर को जाते है।

10) **अस्पताल तथा गृह-बाध्य अनुदेशन(Hospital and home-bound instruction):** इस सेवा के अंतर्गत बालक को अस्पताल या घर पर ही अनुदेशन की व्यवस्था की जाती है। इस सेवा में विशिष्ट शिक्षक स्वयं बालक को अनुदेश देता है तथा परिवार के अन्य सदस्यों को भी निर्देशित करता है।

विशिष्ट शिक्षा की ये सभी सेवाएँ विशिष्ट बालक को निःसंदेह अधिक लाभान्वित करती हैं परन्तु इसकी कुछ सीमाए भी हैं जो कि निम्नवत हैं-

- विशिष्ट बालक जब इस प्रकार की सेवाओं के लिए चिन्हित किया जाता है तब तक सामान्यतया देर हो जाती है। जिससे बालक के व्यवहार में अपेक्षित परिवर्तन प्राप्त करना कठिन हो जाता है।

- विशिष्ट बालकों का नामांकन विभिन्न उपलब्ध सेवाओं में उनकी अक्षमता एवं क्षमता के आधार पर किये गए वर्गीकरण के आधार पर किया जाता है। जब कि यह वर्गीकरण कि वास्तविकता ही संदेह के घेरे में है।

- विशिष्ट बालकों को विभिन्न विशिष्ट शिक्षा सेवाओं के लिए अनुशंसित करने से पूर्व उनकी विकलांगता का आँकलन एवं मूल्यांकन विभिन्न परीक्षणों एवं तकनीकों के द्वारा किया जाता है। इस क्षेत्र में जो भी परीक्षण एवं तकनीकें उपलब्ध है वो निरपेक्ष नहीं हैं तथा ये परीक्षण आँकलन विशेषज्ञों को उपलब्ध भी नहीं हो पाते। दूसरे कि ग्रामीण या सुदूर इलाकों में विभिन्न आँकलन विशेषज्ञों की अनुपलब्धता भी इस प्रक्रिया को अविश्वसनीय बना देती है।

- आगे हम बात करें तो "बच्चे कैसे सिखते हैं" तथा "सिखने के कारकों" का स्पष्ट चित्रण आज भी एक मुद्दा है।

- चूँकि यह शिक्षा सेवा अपेक्षाकृत महँगी है इसलिए निजी संस्थानों के साथ सरकारें भी बजट के आभाव में इसे लागू करने में कठिनाई महसूस करती हैं।

- वर्तमान में विशिष्ट बालकों को नियमित विद्यालयों में नामांकित किया जा रहा है। परन्तु प्रश्न है क्या उनकी क्षमताओं का पूर्ण विकास किया जा रहा है? क्या विशेष शिक्षक एवं अन्य पुनर्वास कर्मीयों

की सेवा उपलब्ध कराई जा रही है? क्या हम उन्हें निम्नतम स्तर का अधिगम उपलब्ध कराने में सक्षम हैं? तो हम पाएंगे कि अभी हम बहुत पीछे है।

- परीक्षा प्रणाली भी अभी विशिष्ट बालकों के अनुकूल नहीं हो पाई है। कुछ परिवर्तन हुए हैं जैसे- दृष्टिबाधितों को लेखक व अधिक समय की व्यवस्था। परन्तु अन्य विकलांगजनों एवं दृष्टिबाधितों को भी जांचने व परखने के क्रम में अभी परीक्षा प्रणाली सक्षम नहीं हो पाई है।

- विशिष्ट बालकों का वर्गीकरण(Labelling) भी अभी एक बहुत बड़ा मुद्दा है। कुछ विशेषज्ञों का मत है कि वर्गीकरण नहीं होना चाहिए तथा कुछ इसके पक्ष में हैं।

- विशिष्ट शिक्षा की एक बड़ी परेशानी यह भी है की वह एक ही विशिष्ट(संसाधन) शिक्षक से सभी विषयों का ज्ञाता होने की अपेक्षा करती है जोकि अव्यवहारिक है।

- एक बड़ी समस्या यह है कि बहुत सी सेवाओं के अंतर्गत एक विद्यालय में एक विशिष्ट अध्यापक के नियुक्ति का प्रयोजन है। एक ही विशिष्ट शिक्षक से सभी विकलांगताओं की विशेषज्ञता की अपेक्षा करना भी अतर्कसंगत है।

- विशिष्ट शिक्षा सेवा समाकलन तक की पहुँच तो रखती है परन्तु समावेशन जैसे आदर्शों को प्राप्त करने में असक्षम हैं।

- विशिष्ट शिक्षा सेवा में माता-पिता की सहभागिता भी सुनिश्चित नहीं हो पाती अतः अप्रभावी है।

2.6 शब्दावली

संतात्यक- बिना किसी विदरूप परिवर्तन के क्रमागत विकास।

नियमित कक्षा- सामान्य विद्यालयों में जहाँ सामान्य बच्चे अनुदेशन प्राप्त करते हैं।

अल्पतम सिमित वातावरण- ऐसा वातावरण जहाँ बालक का सर्वांगीण विकास अधिकतम हो।

समाकलन- बालक को उसके परिवार व समुदाय से जोडना।

पृथक्कीकरण- बालक को उसके समुदाय तथा परिवार से अलग करना।

संयत विकलांगता- विकलांगता की गंभीरता को प्रदर्शित करता है जो कि वर्गीकरण का एक पद है।

2.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

उत्तर 1. विशिष्ट बालकों को शैक्षिक परिवेश में प्रदान की जाने वाली वे सभी सेवाएँ जो बालक के सर्वांगीण विकास के लिए दी जाती हैं विशिष्ट शिक्षा सेवाएँ कहलाती हैं।

उत्तर 2. नियमित कक्षाओं में पूर्ण-कालिक स्थापन से तात्पर्य यह है कि बालक पुरे दिन नियमित कक्षा में ही सामान्य विद्यार्थियों के साथ अपने अधिगम अनुभवों को प्राप्त करता है। विद्यालय के समस्त क्रियाकलापों का आनंद उठाता है।

उत्तर 3. नियमित कक्षाओं में पूर्ण-कालिक स्थापन वाली सेवाएँ निम्नलिखित हैं-

1) पूर्ण-कालिक नियमित कक्षा में स्थापन (Full-time placement in a regular classroom)
2) विशिष्ट शिक्षा परामर्शों के साथ पूर्ण-कालिक नियमित कक्षा में स्थापन(Full-time placement in a regular classroom with special education consultations)
3) परिभ्रामी विशिष्ट शिक्षक सेवा व्यवस्था के साथ पूर्ण-कालिक नियमित कक्षा में स्थापन(Full-time placement in a regular classroom with provisions of itinerant special educator service)
4) संसाधन कक्ष/ संसाधन शिक्षक व्यवस्था के साथ पूर्ण-कालिक नियमित कक्षा में स्थापन(Full-time placement in a regular classroom with provision of resource room/resource teacher)
5) सहयोगी समूह शिक्षण सेवाओं के साथ पूर्ण-कालिक नियमित कक्षा में स्थापन (Full-time placement in a regular classroom with provision of collaborative team teaching services)।

उत्तर 4. विशिष्ट शिक्षा सेवा में नियमित कक्षा में पूर्ण-कालिक स्थापन वाली सेवा अत्यधिक प्रभावी वातावरण उपलब्ध कराती है। क्यों कि इसमें बालक स्वाभाविक रूप में सीखता है। यहाँ बालक के समाकलन का प्राविधान है। बालक की मूल प्रवृत्तियों का सम्मान किया जाता है। विशिष्ट शिक्षा का बालक को अंततः समुदाय का एक उत्पादक एवं जिम्मेदार सदस्य बनाना उद्देश्य है इसलिए समुदाय में रहकर वह समुदाय से समायोजन भी सिखाता है।

उत्तर 5. विशिष्ट शिक्षा सेवाओं में आवासीय विद्यालय में पूर्ण-कालिक स्थापन तथा अस्पताल या गृह-बाध्य अनुदेशन वाली सेवाएं पूर्ण पृथक्कीकरण को बढ़ावा देती हैं। इन सेवाओं में बालक का समुदाय से अंतःक्रिया बिलकुल नगण्य होती है फलस्वरूप बालक अपने समुदाय में समायोजन करने में कठिनाई महसूस करता है।

उत्तर 6. ऐसा वातावरण जहाँ बालक का अधिगम अनुभव अत्यधिक कम हो अत्यधिक सिमित वातावरण कहलाता है। जहाँ बालक की क्रिया-कलापों में बाधायें हों। ऐसे वातावरण में बालक का सर्वांगीण विकास नहीं हो सकता।

उत्तर 7. अल्पतम सिमित एवं अत्यधिक प्रभावी वातावरण से तात्पर्य यह है कि ऐसा वातावरण जहाँ बालक का अधिगम अनुभव अत्यधिक हो तथा यह अधिगम अनुभव गुणात्मक भी हो। जहाँ बालक अपनी प्रत्येक क्रिया-कलापों में स्वतंत्रता का अनुभव कर सके।

उत्तर 8. विशेष विद्यालयों में पूर्ण-कालिक स्थापन की अनुशंसा तब की जानी चाहिए जब बालक में विकलांगता की गंभीरता अत्यधिक हो या गंभीर विकलांग हो तथा नियमित विद्यालयों में उसके आवश्यकताओं की पूर्ति न हो पाए। क्योंकि ऐसी परिस्थिति में नियमित विद्यालय सिमित संसाधनों के साथ बालक के साथ न्याय नहीं कर सकते। बालक धीरे-धीरे और गंभीर समस्याओं से घिर सकता है। अतः ऐसी परिस्थिति में बालक के सर्वांगीण विकास हेतु विशेष विद्यालय में पूर्ण-कालिक स्थापन की अनुशंसा की जा सकती है।

उत्तर 9. वर्गीकरण से बालक का स्थापन क्रियान्वित होता है तथा बालक के लिए शैक्षिक कार्यक्रम बनाये जाते हैं अतः यह बहुत ही संवेदनशील क्रिया है। तो यहाँ यह प्रश्न स्वाभाविक है कि "क्या वह बालक जिसको किसी विशिष्ट सेवा के लिए अनुशंसित किया गया है उसी सेवा को प्राप्त करने के योग्य है?" या उसको किसी अन्य सेवा से अधिक लाभ प्राप्त हो सकता है। चूँकि यह प्रक्रिया मानवीय है इसलिए इसकी वस्तुनिष्ठता भी कम है। परिणामस्वरूप यदि बालक का वर्गीकरण सही नहीं हुआ तो उसे दिए जाने वाले अधिगम अनुभव भी सही नहीं होंगे और विशिष्ट शिक्षा के उद्देश्य प्राप्त नहीं हो सकेंगे।

उत्तर 10. विशिष्ट बालकों को विभिन्न विशिष्ट शिक्षा सेवाओं के लिए अनुशंसित करने से पूर्व उनकी विकलांगता का आँकलन एवं मूल्यांकन विभिन्न परीक्षणों एवं तकनीकों के द्वारा किया जाता है। यह आँकलन दो प्रयोजनों के लिए किया जाता है- विकलांगता का स्तर एवं प्रकार या प्रकृति जानने हेतु तथा इसके हस्तक्षेप हेतु प्रदान किये जाने वाले निर्देशन हेतु। यहाँ पर दो प्रश्न सामने आते हैं- आँकलन हेतु कौन सा परीक्षण एवं कौन सी तकनीकी का प्रयोग किया गया तथा आँकलन किसके द्वारा किया गया। ये दोनों प्रश्न स्वाभाविक हैं क्योंकि इस क्षेत्र में जो भी परीक्षण एवं तकनीकें उपलब्ध है वो निरपेक्ष नहीं हैं तथा ये परीक्षण

आँकलन विशेषज्ञों को उपलब्ध भी नहीं हो पाते। दूसरे कि ग्रामीण या सुदूर इलाकों में विभिन्न आँकलन विशेषज्ञों की अनुपलब्धता भी इस प्रक्रिया को अविश्वसनीय बना देती है।

उत्तर 11. "सीखने के निम्नतम स्तर" का तात्पर्य प्रेक्षित सात्रिक व्यवहारों से परिभाषित अपेक्षित अधिगम निष्पादन से है। बालकों को सभी विद्यालयों में समता व समानता के आधार पर अधिगम अनुभव प्रदान किया जाना सुनिश्चित किया जा चुका है। इसी क्रम में सिखने के निम्नतम स्तर को भी उपरोक्त रूप में सुनिश्चित किया गया है।

उत्तर 12. परीक्षा प्रणाली भी अभी विशिष्ट बालकों के अनुकूल नहीं हो पाई है। कुछ परिवर्तन हुए हैं जैसे- दृष्टिबाधितों को लेखक व अधिक समय की व्यवस्था। परन्तु अन्य विकलांगजनों एवं दृष्टिबाधितों को भी जांचने व परखने के क्रम में अभी परीक्षा प्रणाली सक्षम नहीं हो पाई है। जैसे एक श्रवणबाधित बालक की सम्प्रेषण क्षमता प्रभावित हो जाती है और वह सीखे गए अनुभवों को पुस्तिका पर हू-ब-हू उतार नहीं पाता तो क्या वह वास्तव में कुछ सिखा ही नहीं? ऐसी स्थियो में हमारी प्रचलित परीक्षा प्रणाली फेल हो जाती है।

2.8 संदर्भ ग्रंथ सूची

1. दास एम० (२००७). *एजुकेशन आफ एक्सप्सनल चिल्ड्रेन*. अटलांटिक पब्लिशर्स, नई दिल्ली.
2. संजीव के० (२००८). *विशिष्ट शिक्षा*. जानकी प्रकाशन, पटना.

2.9 सहायक/ उपयोगी पाठ्यसामग्री

1. संजीव के० (२००८). *विशिष्ट शिक्षा*. जानकी प्रकाशन, पटना.
2. भार्गव एम० (२००९). *विशिष्ट बालक शिक्षा एवं पुनर्वास*. एच. पी. भार्गव बुक हाउस, आगरा.
3. हल्हान, डी० पी० एण्ड काफमैन, जे० एम० (१९९१). *अपवादित बच्चे: विशिष्ट शिक्षा का परिचय*. एलिन एण्ड बेकन, बोस्टन.
4. दास एम० (२००७). *एजुकेशन आफ एक्सप्सनल चिल्ड्रेन*. अटलांटिक पब्लिशर्स, नई दिल्ली.

2.10 निबंधात्मक प्रश्न

1. विशिष्ट शिक्षा सेवाओं के प्रकारों का उल्लेख कीजिये।
2. आप विशिष्ट शिक्षा सेवाओं में सबसे प्रभावी सेवा किसे मानते हैं? और क्यों?
3. विशिष्ट शिक्षा की सीमाए क्या है? विवेचना कीजिये।

इकाई- 03 समावेशी शिक्षा का अर्थ, क्षेत्र, उद्देश्य तथा महत्व (Meaning, Scope, Objectives and significance of Inclusion Education)

इकाई की रूपरेखा

3.1 प्रस्तावना
3.2 उद्देश्य
3.3 समावेशी शिक्षा का अर्थ
3.4 समावेशी शिक्षा की परिभाषाएँ
3.5 समावेशी शिक्षा का क्षेत्र
3.6 समावेशी शिक्षा के उद्देश्य
अपनी उन्नति जानिए
3.7 समावेशी शिक्षा का महत्व
3.8 विशेष शिक्षा एवं एकीकृत शिक्षा
3.9 एकीकृत शिक्षा तथा समावेशी शिक्षा में अन्तर
3.10 समावेशी शिक्षा में शिक्षकों की भूमिका
अपनी उन्नति जानिए
3.11 शब्दावली
3.12 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
3.13 सारांश
3.14 सन्दर्भ ग्रन्थ
3.15 निबंधात्मक प्रश्न

3.1 प्रस्तावना

समावेशी शिक्षा (अंग्रेज़ी: Inclusive education) से आशय उस शिक्षा प्रणाली से है जिसमें एक सामान्य छात्र एक दिव्यांग छात्र के साथ विद्यालय में अधिकतर समय बिताता है। दूसरे शब्दों में, समावेशी शिक्षा विशिष्ट आवश्यकता वाले बालकों को सामान्य बालकों से अलग शिक्षा देने की विरोधी है।

समाज में कई प्रकार के बालक मौजूद होते हैं, उनमें वैयक्तिक विभिन्नता होती है। कुछ बालक सामान्य बालक से कुछ अलग होते हैं । जिन्हें विशिष्ट बालक या विशेष आवश्यकता वाले बालक कहा

जाता है। जब विशेष आवश्यकता वाले बालक एवं सामान्य बालकों को एक ही छत के नीचे एक ही विद्यालय में तथा एक ही कक्षा में शिक्षा प्रदान किया जाता हैं तो वह समावेशी शिक्षा कहलाती है।

इस इकाई में हम लोग समावेशी शिक्षा एवं विशेष शिक्षा एकीकृत शिक्षा पर चर्चा करेंगे। इस इकाई के अंतर्गत प्रमुख विशेष आवश्यकता वाले बालकों की पहचान एवं उनकी शिक्षा के बारे में जानने का प्रयत्न करेंगे, साथ ही समावेशी शिक्षा, प्रशासनिक उपायों एवं माता-पिता, सहपाठियों एवं शिक्षकों की भूमिका की भी चर्चा करेंगे।

3.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन करने के पश्चात आप:-

1- समावेशी शिक्षा के अर्थ को समझ सकेंगे।

2- समावेशी शिक्षा के क्षेत्र का वर्णन कर सकेंगे।

3- समावेशी शिक्षा के उद्देश्यों की व्याख्या कर सकेंगे।

4- समावेशी शिक्षा के महत्व का विश्लेषण कर सकेंगे।

5- समावेशी शिक्षा की आवश्यकता को समझ सकेंगे।

3.3 समावेशी शिक्षा का अर्थ (Meaning of Inclusive Education)

समावेशी शिक्षा उस शिक्षा को कहते हैं जिसमें सामान्य विद्यालय में बाधित एवं सामान्य बालकों को एक ही साथ रख कर शिक्षा प्रदान करने का कार्य किया जाता है। समावेशी शिक्षा अपंग बालकों की शिक्षा सामान्य स्कूल तथा सामान्य बालकों के साथ कुछ अधिक सहायता प्रदान " करने की ओर इंगित करती है। यह शारीरिक तथा मानसिक रूप से बाधित बालकों को सामान्य बालकों के साथ सामान्य कक्षा में शिक्षा प्राप्त करना विशिष्ट सेवाएँ देकर विशिष्ट आवश्यकताओं के प्राप्त करने के लिए सहायता करती है।

समावेशी अथवा समावेशी शिक्षा में प्रतिभाशाली बालक तथा सामान्य बालक एक साथ कक्षाओं में पूर्ण समय या अर्द्धकालिक समय में शिक्षा ग्रहण करते हैं। इस प्रकार मिलना, समायोजन, सामाजिक या शैक्षिक अथवा दोनों को समन्वित करता है। कुछ शिक्षाविद् जैसे सोचते हैं कि समावेशी शिक्षा अपने बालकों हेतु सामान्य स्कूल में स्थापित करनी है। जहाँ उन्हें विशिष्ट शिक्षण में सहायता तथा सुविधाएँ दी जाती हैं।

स्टीफन तथा **ब्लैकहर्ट** के अनुसार- "शिक्षा की मुख्य धारा का अर्थ बाधित (पूर्ण रूप से अपंग नहीं) बालकों की सामान्य कक्षाओं में शिक्षण व्यवस्था करना है। यह समान अवसर मनोवैज्ञानिक सोच पर आधारित है जो व्यक्तिगत योजना के द्वारा उपयुक्त सामाजिक मानकीयकरण और अधिगम को बढ़ावा देती है।" समावेशी शिक्षा से तात्पर्य समाज के सभी वर्ग के विद्यार्थियों के कमजोरियों, उसके मजबूत पक्षों एवं उसकी क्षमताओं को एक ही कक्षा में विकास करना। समावेशन विभिन्न अधिगमकर्त्ता, जैसे-विभिन्न अक्षम बालकों, विभिन्न तरीकों से सिखने वाले बालकों को उनकी व्यक्तिगत अधिगम क्षमताओं को विकसित करने की लिए शिक्षण व्यूह रचना को अपनाना एवं बिना किसी भेदभाव या समूह से अलग कर विद्यार्थियों को शिक्षा देना।

3.4 समावेशी शिक्षा की परिभाषाएँ (Definitions of Inclusive Education)

समावेशी शिक्षा की प्रमुख परिभाषाएँ निम्न हैं-

(1) **स्टेनबैक** एवं **स्टेनबैक** का विचार है कि "समावेशी विद्यालय अथवा पर्यावरण से अभिप्राय ऐसे स्थान से है जिसका प्रत्येक व्यक्ति अपने को सदस्य मानता है, जिसको अपना समझा जाता है, जो अपने साथियों और विद्यालय कुटुम्ब के प्रत्येक सदस्य की सहायता करता है और अपनी शिक्षा प्राप्ति सम्बन्धी आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु उनसे सहायता प्राप्त करता है।"

(2) माइकेल एफ. जिआन ग्रेको के अनुसार, "समावेशी शिक्षा से अभिप्राय उन मूल्यों, सिद्धान्तों और प्रथाओं के समूह से है जो सभी विद्यार्थियों को, चाहे वे विशिष्ट हैं अथवा नहीं, प्रभावकारी और सार्थक शिक्षा देने पर बल देते हैं।"

(3) उप्पल एवं डे के अनुसार, "सामान्य बच्चों और विशिष्ट बालकों की शैक्षिक आवश्यकताओं के समक्रमण और मेल को समावेशी शिक्षा के नाम से अभिहित किया गया है ताकि सभी बच्चों के लिये सामान्य विद्यालयों में शिक्षा देने हेतु एक ही पाठ्यक्रम हो। यह एक लचीली तथा व्यक्तिगत रूप से विशिष्ट बच्चों और नवयुवकों की शैक्षिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए सहायक प्रणाली है। यह समग्र शिक्षा प्रणाली का एक अभिन्न घटक है जो सामान्य स्कूलों में सबके लिए उपयुक्त शिक्षा के रूप में प्रदान किया जाता है।

(4) एम. मैनीवन्नान के शब्दों में "समावेशी शिक्षा उस नीति तथा प्रक्रिया का परिपालन है जो सब बच्चों को सभी कार्यक्रमों में भाग लेने के लिए अनुमति देती है। नीति से तात्पर्य है कि अपंग बालकों को बिना किसी अवरोध के सामान्य बालकों के सभी शैक्षिक कार्यक्रमों में भाग लेने के लिए स्वीकृति प्रदान करे।

समावेशी प्रक्रिया से अभिप्राय पद्धति के उन साधनों से है जो इस प्रक्रिया को सबके लिए सुखद बनाये। समावेशी शिक्षा क्षतियुक्त बालकों के लिए सामान्य शिक्षा के अभिन्न अंग के अतिरिक्त कुछ नहीं है। यह सामान्य शिक्षा के भीतर अलग से कोई प्रणाली नहीं है।"

(5) अडवानी और चड्ढा का विचार है कि "समावेशी शिक्षा का उद्देश्य एक सहायक तथा अनुकूल पर्यावरण की रचना करना है ताकि सभी को पूर्ण प्रतिभागिता के लिये समान अवसर प्राप्त हो सकें और इस तरह से विशेष आवश्यकता वाले बालक शिक्षा की मुख्य धारा के क्षेत्र में सम्मिलित हो सकें। यह विद्यार्थियों की विभिन्न आवश्यकताओं के महत्त्व को समझती है। यह उपयुक्त पाठ्यक्रम, शिक्षण युक्तियों, सहायक सेवाओं, तथा समाज व माता-पिताओं के सहयोग के द्वारा सभी को समान शिक्षा प्रदान करने का विश्वास दिलाती है।"

3.5 समावेशी शिक्षा का क्षेत्र (Scope of Inclusive Education)

समावेशी शिक्षा शारीरिक रूप से बाधित बालकों को निम्न प्रकार की शिक्षण सुविधाएँ उपलब्ध कराती है। इसके क्षेत्र में निम्न वर्गीकरण आते हैं-

1. अस्थिबाधित बालकों का अध्ययन,
2. श्रवणबाधित बालकों का अध्ययन,
3. दृष्टिबाधित अथवा एक आँख वाले बालकों का अध्ययन,
4. मानसिक मन्दित बालक जो शिक्षा के योग्य हो।
5. विभिन्न प्रकार से अपंग बालक (श्रवणबाधित, दृष्टिबाधित, अस्थि अपंग आदि) इन्हें बिहुबाधित भी कहते हैं।
6. इसमें अधिगम असमर्थी बालकों का अध्ययन सम्भव है।
7. अन्धे छात्र जिन्होंने 'बेल' में पढ़ने और लिखने का शिक्षण प्राप्त कर लिया है तथा उन्हें विशेष प्रशिक्षण की आवश्यकता है।
8. बधिर बालक जिन्होंने सम्प्रेषण में निपुणता तथा पढ़ना सीख लिया है।

समावेशी शिक्षा में क्षेत्र में सामान्य स्कूल जाने से पहले अपंग बालक का प्रशिक्षण, माता-पिता को समझाना, प्रारम्भिक शिक्षा तथा उच्च शिक्षा + 2 स्तर और व्यावसायिक शिक्षा भी सम्मिलित है।

3.6 समावेशी शिक्षा के उद्देश्य

- समावेशी विद्यालय का उद्देश्य उचित व्यक्तिगत सहायता एवं सेवा प्रदान करना।
- शिक्षक समावेशी कक्षा में विभिन्न तरीकों को अपनाकर सभी विद्यार्थियों के अधिगम को बढ़ाता है।
- समावेशी शिक्षा का उद्देश्य सभी वर्ग के विद्यार्थियों में ज्ञान, कौषल एवं सूचनाओं को बढ़ाना है।
- इसका मुख्य उद्देश्य विभिन्न प्रकार के पिछड़ों एवं अलग-अलग क्षमताओं वाले छात्रों को एक साथ विद्यालय में समाहित करना।
- शिक्षकों के सहयोग एवं सहभागिता, माता-पिता एवं सामाजिक नेताओं द्वारा अच्छे कलाओं का विकास करना।

समावेशन एक शैक्षिक उपागम एवं दर्शन हैं जो कि सभी विद्यार्थियों को सामाजिक सदस्यता के साथ शैक्षिक एवं सामाजिक उपलब्धि प्राप्त करने के अवसर प्रदान करती है। समावेशन में प्रत्येक विद्यार्थियों का उनके विशेष आवश्यकताओं एवं विशेष अधिगम क्रियाओं को शामिल किया जाता है।

समावेशी शिक्षा एक विस्तृत शब्दावली है, जिसके अन्तर्गत कई तथ्यों को समाहित किया गया है। इसमें सभी बालकों को एक साथ शिक्षा देने का प्रावधान है। चाहे वे उनमें कितनी ही प्रकार की विभिन्नता क्यों न पाई जाती हों। जैसे- यदि कोई बालक उम्र, लिंग या भाषायी रूप से भिन्न हो, विकलांग तथा किसी अन्य गंभीर बिमारी से ग्रसित हो, सभी को इसके अंतर्गत एक साथ शिक्षा दी जाती है। इसके तहत सभी बच्चों को आवश्यकताओं के अनुरूप ही शैक्षिक संरचना, एवं शिक्षण विधियों का प्रयोग किया जाता है। यह विस्तृत व्यूह रचना का एक भाग है, पाठ्यक्रम जिसके द्वारा समावेशी समाज का उत्थान किया जाता है। यह एक गतिशील प्रक्रिया है। इसमें किसी भी प्रकार के बालकों को रोका नहीं जाता हैं एवं अन्य प्रकार के संसाधनों के माध्यम से उनकी क्षति पूर्ति की जाती है।

अपनी उन्नति जानिए

भाग-1

प्र0-1 समावेशी शिक्षा से आप क्या समझते है?

प्र0-1 विशिष्ट बालक किसे कहते हैं?

प्र0-1 कक्षा समावेशन का क्या अर्थ हैं?

3.7 समावेशी शिक्षा का महत्व (Importance of Inclusive Education)

समावेशी शिक्षा के महत्त्व को निम्न बिन्दुओं द्वारा समझा जा सकता है:-

(1) विशिष्ट कक्षाएँ (Special Classes) बाधित बालकों के लिए आवश्यक हैं क्योंकि उनकी शिक्षा के लिए विशिष्ट विधियाँ तथा प्रविधियों की आवश्यकता होती है।

(2) विशिष्ट कक्षाओं में बुद्धिमान छात्रों को अग्रसर होने का अवसर मिलता है लेकिन शिक्षक को ऐसे बालकों को सामान्य कक्षा में कार्य के प्रति प्रेरित करने में समस्या तथा बाधाओं का सामना करना पड़ता है। सामान्यतः विलक्षण बालक अन्य सामान्य बालकों की अपेक्षा संवेदनशील होते हैं। उनकी सोचने की क्षमता अधिक तथा तीव्र होती है। वे कार्य के प्रति सावधान हैं, इसलिए उनके शिक्षण में विशेष विधियों व प्रविधियों की आवश्यकता होती है। ये प्रविधियाँ समावेशी शिक्षा से ही सम्भव हैं। इसलिए इसका महत्त्व है।

(3) प्रतिभाशाली बालकों का बुद्धि स्तर सामान्य बालकों की अपेक्षा ऊँचा होता है। इसलिए प्रतिभाशाली बालकों को सामान्य बालकों के साथ समायोजित करने में कठिनाई का सामना करना पड़ता है। सामान्यतः ऐसा पाया जाता है कि शिक्षक अपनी गति से शिक्षा देता है जो सामान्य बालकों के लिए उपयुक्त है, लेकिन प्रतिभाशाली बालक सामान्य बालकों की अपेक्षा शीघ्र ही अपना कार्य समाप्त कर लेते हैं। ऐसी परिस्थिति में यह समस्या आती है कि प्रतिभाशाली बालक अपना समय कैसे व्यतीत करें जबकि शिक्षक सामान्य बालकों के साथ उसी कार्य को पूरा कराने में व्यस्त रहता है। सामान्यतः प्रतिभाशाली बालक ऐसी परिस्थिति में अनुशासनहीनता तथा उद्दण्डता करने लगते हैं। सामान्य बालकों का पाठ्यक्रम इतना साधारण ही ताप है कि प्रतिभाशाली बालक नीरस हो जाता है तथा कार्य में रुचि खो देता है। प्रतिभाशाली बालक कार्य के प्रति प्रेरित नहीं हो पाते। अतः समावेशी शिक्षा महत्त्वपूर्ण है।

(4) प्रतिभाशाली बालकों की कक्षाओं में प्रत्येक बालक यह जानता है कि केवल कक्षा में वह ही एक बुद्धिमान विद्यार्थी नहीं है परन्तु और कई विद्यार्थी हैं। यह विचार बालकों में आत्मविश्वास की भावना का विकास करता है। विशिष्ट कक्षाएँ बालकों में अधिक सीमा तक शिक्षण विशेष धाराओं में मार्गदर्शक के रूप में अग्रसर होने का अवसर भी प्रदान करती है। उसी समूह में कुछ बालक, कविता, नाटक, खेल-कूद तथा

सामान्य ज्ञान जैसे शाखाओं में रुचि लेते हैं। आगे आने वाले समय में बालकों के लिए उपयुक्त प्रशिक्षण तथा विशिष्ट कक्षा के कार्यक्रमों में सहायक सिद्ध हो सकता है।

(5) प्रतिभाशाली बालकों को **सामाजिक** तथा वैयक्तिक आवश्यकताओं को ग्रहण करने के लिए अतिरिक्त सुविधाओं तथा साधनों की आवश्यकता होती है। इसलिए ऐसी सुविधाएँ प्रतिभाशाली बालकों को उनकी कार्य करने की क्षमता से अवगत कराती हैं तथा शारीरिक रूप से बाधित बालकों में उनके दोषों को कम करने का प्रयास करती हैं। ऐसी परिस्थिति में उत्कृष्ट बालक अपनी प्रतिभा के अनुरूप कार्य करने का अवसर पाते हैं। सामान्य कक्षा में बुद्धिमान बालक अपने-आपको कार्य करने में बाधित पाता है। वह थोड़ी-सी इच्छाशक्ति से प्रतिभाशाली बालकों की श्रेणी में स्थान बना सकता है एवं अपने स्तर को ऊँचा कर सकता है। यह अपने स्थान पर उचित है कि अधिक तीव्र प्रगति कुछ सीमा तक कमी तथा कमजोरी होती है।

(6) प्रयोगात्मक आँकड़े प्रगट करते हैं कि सामान्य शिक्षण संस्थाओं में प्रतिभाशाली बालकों के साथ सामाजिक कुप्रबन्ध उग्र रूप में पाया जाता है। प्रतिभाशाली बालक कार्य कम होने या कभी-कभी न होने से खाली बैठे रहते हैं, क्योंकि या तो उन पर कार्य का बोझ नहीं होता अथवा वे कार्य को शीघ्र ही समाप्त कर लेते हैं। ऐसी परिस्थितियों में उनका व्यक्तित्व व्यवहार स्वीकार करने योग्य नहीं होता, क्योंकि वे स्वयं को उद्दंडता के कार्यों में शामिल कर लेते हैं।

3.8 विशेष शिक्षा एवं एकीकृत शिक्षा (Special Education and Integrated Education):

शिक्षा की व्यवस्था पूरे विश्व में प्राचीन काल से चली आ रही है।जैसे-जैसे समाज का उत्थान होता गया शिक्षा की पद्धतियाँ भी बदलती गई। इसी क्रम में शिक्षा के अन्तर्गत वैसे बालकों पर भी ध्यान दिया जाने लगा जिसे लोग पहले यह मानते थे कि ये शिक्षा प्राप्त ही नहीं कर सकते है। वैसे बालक जो सामान्य बालक या औसत बालकों से भिन्न होते इन्हे लोग विशेष बालक या विशिष्ट बालक (Children with Special Needs) के नाम से जानते है। इनकों शिक्षा देने के लिए समय के अनुसार तीन प्रकार की अवधारणा विकसित हुई है, विशेष शिक्षा, एकीकृत शिक्षा एवं समावेशी शिक्षा।

विशेष शिक्षा (Special Education)- विशेष शिक्षा एक संकुचित शब्दावली है। इस शिक्षा के अंतर्गत बच्चों को सामान्य बच्चों से अलग शिक्षा दी जाती है। इसका विद्यालय, पाठ्यक्रम एवं शिक्षण विधियाँ अलग होती है। जैसे यदि कोई बच्चा दृष्टि बाधित है, तो उनके अलग समूह बनाकर उनकी आवश्यकता के अनुसार शिक्षा दी जाती है। उसी प्रकार यदि कोई बालक श्रवण वाधित हैं या मानसिक मंद

है, उन्हे भी अलग शिक्षा दी जाती है। विशेष शिक्षा गंभीर अक्षम/विकलांग बालकों के लिए उपयुक्त शिक्षा पद्धति मानी जाती है। क्योंकि जो बालक गंभीर या अति गंभीर रूप से अक्षम/विकलांग होते है, वे अपने आपकों सामान्य बालकों के साथ समायोजित नहीं कर पाते है।

एकीकृत शिक्षा (Integrated Education)- विशेष शिक्षा में यह देखा जाने लगा कि कोई बालक अगर सामान्य बालकों से अलग शिक्षा प्राप्त करता है, तो उसका पूर्णतः समायोजन नहीं हो पाता है । वे कई क्षेत्रों में सामान्य बालकों से पिछड़ जाते है। इन तथ्यों को ध्यान में रखते हुए, एकीकृत शिक्षा की अवधारणा का विकास हुआ। भारत में भी इसके महत्व को ध्यान में रखते हुए सन् 1974 से कल्याण मंत्रालय द्वारा एकीकृत शिक्षा का प्रारम्भ किया गया। इसे एकीकृत शिक्षा योजना (ICDS) के रूप में लागू किया गया। एकीकृत शिक्षा में विशेष आवश्यकता वाले बच्चों को पहले विशेष उपकरणों के माध्यम से आधारभूत प्रशिक्षण एवं शिक्षा प्रदान की जाती है, ताकि अक्षम बालक अपने आपको सामान्य बालकों के साथ समायोजित कर सकें। एकीकृत शिक्षा का मुख्य उद्देश्य विशेष आवश्यकता बाले बालकों को सामान्य बालकों के साथ एकीकृत करना है। साथ ही एकीकृत शिक्षा में बालकों को कक्षा या शिक्षक के अनुसार अपने आपको समायोजित करना होता है। इसके अतिरिक्त विशेष आवश्यकताओं को विशेष कक्षा (Special Class) संसाधन कक्ष (Resource Room) तथा विशेष शिक्षकों (Special Teachers) के माध्यम से पूर्ण किया जाता है।

एकीकृत शिक्षा में निम्नलिखित तथ्य शामिल हैः-

(i) सामान्य विद्यालय में विशेष आवश्यकता वाले विकलांग बालकों को शैक्षिक सुविधाएँ एवं शैक्षिक अवसर उपलब्ध कराना ही एकीकृत शिक्षा है।

(ii) इस शिक्षा में बालकों पर व्यक्तिगत रूप से ध्यान दिया जाता है।

(iii) एकीकृत शिक्षा में विकलांग बालकों से यह अपेक्षा की जाती हैं कि वह स्वयं को आवश्यकता नुसार विद्यालय के कार्यक्रम व पाठ्यक्रम के लिए समायोजित करें।

(iv) इसे (Mainstreaming) कहा गया है, क्योकिं इसका मुख्य लक्ष्य विकलांग बालकों को सामान्य विद्यालय में भर्ती कराना है।

3.9 एकीकृत शिक्षा (Integrated Education) तथा समावेशी शिक्षा (Inclusive Education) में अन्तर:

एकीकृत शिक्षा (Integrated Education) समावेशी शिक्षा (Inclusive Education)

1. एकीकृत शिक्षा व्यक्तिगत प्रारूप (personal model) समावेशी शिक्षा पर आधारित है। समावेशी शिक्षा सामाजिक प्रारूप (social model) समावेशी शिक्षा पर आधारित है।

2. एकीकृत शिक्षा में विकलांग व्यक्ति से यह अपेक्षा की जाती हैं कि वह स्वयं को विद्यालय के आवश्यकतानुसार अपेक्षित सुधार कर सामंजस्य स्थापित करे। समावेशी शिक्षा में विद्यालय का उतरदायित्व है कि वह विकलांग विद्यार्थी की विशेष आवश्यकता के अनुरुप पाठ्यक्रम में अनुकूलन करे।

3. एकीकृत शिक्षा का अन्तिम उद्देश्य विशेष आवश्यकता वाले बालकों को सामान्य विद्यालय में प्रवेश कराना है। समावेशी शिक्षा में विशेष आवश्यकता वाले बालकों को विद्यालय की प्रत्येक क्रिया में भागीदारी सुनिश्चित की जाती है।

4. एकीकृत शिक्षा न्यूनतम अवधि का उद्देश्य है। समावेशी शिक्षा एक लम्बी अवधि की प्रक्रिया एवं उद्देश्य है।

5. एकीकृत शिक्षा विकलांग या विशेष आवश्यकता बाले बालकों के लिए समान अवसर एवं समान सहभागिता को सुनिश्चित करता है। समावेशी शिक्षा एकीकृत शिक्षा के आधारभूत सिद्धान्त पर आधारित है, इसी कारण इसे एकीकृत शिक्षा का परिवर्धित अथवा परिमार्जित रूप भी कहा गया है।

3.10 समावेशी शिक्षा में शिक्षकों की भूमिका

एकीकृत व समावेशी शिक्षा में नियमित अध्यापकों की सक्रिय भूमिका होती है। उन्हें विशेष विद्यार्थी के संदर्भ में विशेष अध्यापक के सम्पर्क में रहना होता है, ताकि विद्यार्थी पढ़ाए जाने वाले विषय को आत्मसात कर सके न कि उसमें आने वाली समस्याओं से अकेला जूझता रहे। दृष्टिहीन विद्यार्थी को कक्षा में अन्य सामान्य विद्यार्थियों की भांति समान रूप से सम्मिलित होना चाहिए। सर्वप्रथम कक्षा का वातावरण सौहार्दपूर्ण हो, जहॉ किसी भी विद्यार्थी के साथ विकलांगता के कारण भेद न किया जाए। जहाँ तक सम्भव हो सके नियमित अध्यापक द्वारा कक्षा में चलने वाली प्रत्येक क्रिया में विकलांग विद्यार्थियों की भागीदारी सुनिश्चित की जानी चाहिए। उसके बैठने का स्थान इस प्रकार सुनिश्चित किया जाना चाहिए कि उसे आने-जाने की असुविधा न हो व बाहर का शोर भी उसे प्रभावित न करता हो। नियमित अध्यापक को कक्षा में पढ़ने

वाले विकलांग विद्यार्थियों की विशेष आवश्यकताओं से परिचित होना चाहिए। उसके प्रयोग में लाए जाने वाले उपकरणों की भी जानकारी उसे होनी चाहिए। उसकी उपलब्धि का आकलन कैसा होगा? उसकी मूलभूत समस्याएँ अथवा कठिनाइयाँ क्या हो सकती हैं? ये अनेक प्रश्न नियमित अध्यापक को परेशान कर सकते हैं। उसे विशेष अध्यापक से इन पर चर्चा कर लेनी चाहिए अथवा इन बच्चों से सम्बन्धित साहित्य अथवा सामग्री विशेष-अध्यापक से प्राप्त कर पढ़ लेनी चाहिए, जिससे उसके पूर्वाग्रह समाप्त हो जाए।

नियमित अध्यापक को विकलांग विद्यार्थियों द्वारा प्रयोग में लाए जाने वाले उपकरणों की जानकारी के साथ-साथ इन बच्चों द्वारा प्रयोग में लाई जाने वाली द्वि-आयामी और त्रि-आयामी स्पर्शीय सामग्री व स्पर्शीय मॉडल आवश्यकतानुसार कक्षा में उपलब्ध कराने चाहिए, जिनके माध्यम से विकलांग के साथ-साथ दृष्टिवान विद्यार्थी भी लाभान्वित हो सकेंगे।

विभिन्न क्रियाकलापों में भाग लेते समय विकलांग विद्यार्थियों की भागीदारी सुनिश्चित करने के लिए नियमित अध्यापक को विशिष्ट अध्यापक से परामर्श लेना चाहिए, ताकि विकलांग विद्यार्थी अर्थपूर्ण क्रिया कर अपने अधिगम को स्थायी बना सके व साथ-साथ सामूहिक क्रिया में अपनी बराबर की भांगीदारी सुनिश्चित कर सके। ये अनुभव उसमें आत्मविश्वास की वृद्धि करेंगे व परिणामस्वरूप उसमें स्वस्थ स्वप्रत्यय का विकास भी होगा।

इस प्रकार इक्कीसवीं शताब्दी समावेशित शिक्षा की सुविधाएँ उपलब्ध कराकर दृष्टिवान व दृष्टिहीन की दूरी पाटने की दिशा में कृतसंकल्प है। विश्व भर में समवेशी शिक्षा के लिए प्रयास जारी हैं। आदर्श समाज में सभी की भागीदारी होनी आवश्यक है। विकलांगता के आधार पर विभेद करना मानव अधिकारों का हनन है, अतः आवश्यकता है कि विद्यालय की समावेशी शिक्षा के आधार पर समावेशित समाज का निर्माण किया जाए, जहाँ प्रत्येक व्यक्ति अपने मानव अधिकारों का लाभ उठाकर समाज, देश व विश्व निर्माण में अपनी भागीदारी सुनिश्चित कर सकें।

अपनी उन्नति जानिए

भाग -2

सत्य असत्य का चयन कीजिये

प्र0-1 समावेशी शिक्षा में नियमित अध्यापकों की सक्रिय भूमिका होती है।

प्र0-1 दिव्यांगता के आधार पर शिक्षा में विभेद करना मानव अधिकारों का हनन है।

प्र0-1 विशिष्ट कक्षाएँ (Special Classes) बाधित बालकों के लिए आवश्यक नहीं हैं।

3.11 शब्दावली:

समावेशी शिक्षा- समावेशी शिक्षा उस शिक्षा को कहते हैं जिसमें सामान्य विद्यालय में बाधित एवं सामान्य बालकों को एक ही साथ रख कर शिक्षा प्रदान करने का कार्य किया जाता है। समावेशी शिक्षा अपंग बालकों की शिक्षा सामान्य स्कूल तथा सामान्य बालकों के साथ कुछ अधिक सहायता प्रदान " करने की ओर इंगित करती है।

विशेष शिक्षा: विशेष शिक्षा (Special Education)- विशेष शिक्षा एक संकुचित शब्दावली है। इस शिक्षा के अंतर्गत बच्चों को सामान्य बच्चों से अलग शिक्षा दी जाती है। इसका विद्यालय, पाठ्यक्रम एवं शिक्षण विधियाँ अलग होती है।

एकीकृत शिक्षा: इसमें विशेष आवश्यकता वाले बच्चों को पहले विशेष उपकरणों के माध्यम से आधारभूत प्रशिक्षण एवं शिक्षा प्रदान की जाती है, ताकि अक्षम बालक अपने आपको सामान्य बालकों के साथ समायोजित कर सकें।

मंद बुद्धि बालक- मंद बुद्धि बालक से तात्पर्य वैसे बालक से हैं जिनकी मानसिक योग्यता सामान्य बालकों से कम होती है, अर्थात् वैसे बालक जिनकी बुद्धि लब्धि (IQ) 70 से कम होती है, मंद बुद्धि बालक कहलाते हैं।

ब्रेल- ब्रेल एक प्रकार की लिपि है, जो विशेष कर दृष्टिबाधितों के लिए है। इसी लिपि के माध्यम से दृष्टिबाधित बालक पढ़ एवं लिख सकते हैं।

3.12 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर:

भाग-1

1. समावेशी शिक्षा उस शिक्षा को कहते हैं जिसमें सामान्य विद्यालय में बाधित एवं सामान्य बालकों को एक ही साथ रख कर शिक्षा प्रदान करने का कार्य किया जाता है।

2. कुछ बालक सामान्य बालक से कुछ अलग होते हैं उन्हें विशिष्ट बालक कहते है।

3. यदि कोई बालक उम्र, लिंग या भाषायी रूप से भिन्न हो, विकलांग तथा किसी अन्य गंभीर बिमारी से ग्रसित हो, सभी को इसके अंतर्गत सामान्य बच्चों के एक साथ शिक्षा दी जाती है, उसे कक्षा समावेशन कहते हैं।

भाग-2

1. सत्य

2. सत्य

3. असत्य

3.13 सारांश:

समावेशी शिक्षा से तात्पर्य समाज के सभी वर्ग के विद्यार्थीओं की कमजोरियों, उसके मजबूत पक्षों एवं उसकी क्षमताओं को एक ही में विकास करना है। यह विस्तृत व्यूह रचना का एक भाग है। पाठ्यक्रम के द्वारा समाज का उत्थान किया जा सकता है। यह एक गतिषील प्रक्रिया है। इसमें किसी भी प्रकार के बालकों को रोका नहीं जाता है।

इस इकाई में विशेष शिक्षा एवं एकीकृत शिक्षा के संप्रत्यय पर विशेष प्रकाष डाला गया है। विशेष के अंतर्गत बच्चों को सामान्य बच्चों से अलग शिक्षा दी जाती है, इनके विद्यालय पाठ्यक्रम एवं शिक्षण विधियॉ अलग-अलग होती है। एकीकृत शिक्षा में विशेष आवश्यकता वाले बच्चों को पहले विशेष उपकरणों के माध्यम से आधारभूत प्रशिक्षण एवं शिक्षा प्रदान की जाती है, ताकि अक्षम बालक अपने आपकों सामान्य बालकों के साथ समायोजित कर सकें।

विशेष आवश्यकता वाले बच्चों की शिक्षा में मंद बुद्धि बालकों की पहचान एवं शिक्षा , दृष्टिबाधित बालकों की पहचान एवं शिक्षा तथा श्रवणवाधित बालकों की पहचान एवं शिक्षा की चर्चा हुई है।

समावेशी शिक्षा की सफलता के लिए आवष्यक हैं कि कुछ प्रशासनिक उपाय किए जाए। इसकी सफलता के लिए

1. प्रशासनिक अधिकारियों के लिए परिचयात्मक कार्यक्रम चलाया जाना चाहिए।

2. दृष्य-श्रव्य सामग्री द्वारा विद्यालय के कर्मचारियों एवं विद्यार्थियों हेतु संवेदीकरण कार्यक्रम का आयोजन किया जाना चाहिए।

3. विकलांग बालकों की खोज के लिए संवेदीकरण शिविर का उपयोग किया जाना चाहिए।

4. संसाधन कक्ष एवं संसाधन सामग्री विद्यालय के लिए उपलब्ध कराना चाहिए।

5. विकलांग बच्चों हेतु आकलन दल का नियोजन एवं

6. विकलांग विद्यार्थियो हेतु सह-अभिभावकों, सहपाठियों एवं नियमित शिक्षकों की भूमिका महत्वपूर्ण होती है।

3.14 संदर्भ ग्रंथ सूची

1. Das.M.(2007). *Education of Exceptional Children*. Atlantic Publishers, New Delhi.
2. राष्ट्रीय शिक्षा नीति (1986). मानव संसाधन विकास मंत्रालय, भारत सरकार. नई दिल्ली.
3. संजीव के.(2008). विशिष्ट शिक्षा. जानकी प्रकाशन, पटना.
4. भार्गव एम.(2009). विशिष्ट बालक शिक्षा एवं पुनर्वास. एच. पी. भार्गव बुक हाउस, आगरा.

3.15 निबंधात्मक प्रश्न

1. समावेशी शिक्षा का अर्थ स्पष्ट कीजिए।

2. समावेशी शिक्षा के क्षेत्र का वर्णन कीजिए।

3. समावेशी शिक्षा के उद्देश्यों की चर्चा कीजिए।

4. समावेशी शिक्षा के महत्व पर प्रकाश डालिए।

5. समावेशी शिक्षा में शिक्षकों की भूमिका का वर्णन कीजिए।

इकाई 4: समावेशित शिक्षा के लाभ, समावेशित शिक्षा के मुद्दे (Advantages of Inclusive Education, Issues in Inclusive Education)

इकाई की रूपरेखा:-

4.1 प्रस्तावना

4.2 उद्देश्य

4.3 समावेशित शिक्षा: एक विवरण

4.3.1 समावेशित शिक्षा का प्रारम्भ

4.3.2 समावेशित शिक्षा का अर्थ

4.4 एकीकृत एवं समावेशित शिक्षा

4.4.1 एकीकृत शिक्षा का अर्थ

4.4.2 एकीकृत एवं समावेशित शिक्षा में अन्तर

4.5 समावेशित शिक्षा की आवश्यकता एवं महत्त्व

4.5.1 समावेशित शिक्षा आवश्यकता

4.5.2 समावेशित शिक्षा का महत्व

4.6 समावेशित शिक्षा का दर्शन एवं सिद्धान्त

4.6.1 समावेशित शिक्षा का दर्शन

4.6.2 समावेशित शिक्षा का सिद्धान्त

4.7 समावेशित शिक्षा के लाभ

4.7.1 विशेष आवश्यकता वाले बच्चों के लिए लाभ

4.7.2 सामान्य बच्चों के लिए लाभ

4.7.3 सामान्य शिक्षक के लिए लाभ

4.7.4 माता-पिता के लिए लाभ

4.8 समावेशित शिक्षा से सम्बंधित मुद्दे

4.8.1 समाज से संबंधित मुद्दे

4.8.2 वित्तीय संबंधित मुद्दे

4.8.3 शिक्षा नीति संबंधी मुद्दे

4.8.4 उपलब्धता एवं सुगमता संबंधी मुद्दे

4.8.5 अध्यापक शिक्षा से संबंधित मुद्दे

4.8.6 शोध से संबंधित मुद्दे
4.9 सारांश
4.10 शब्दावली
4.11 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
4.12 संदर्भ ग्रंथ सूची
4.13 सहायक/उपयोगी पाठ्यसामग्री
4.14 निबंधात्मक प्रश्न

4.1 प्रस्तावना

विशेष आवश्यकता वाले बच्चों के लिए शिक्षा का इतिहास विशेष विद्यालय से एकीकृत शिक्षा होते हुए अब समावेशित शिक्षा तक आ पहुँचा है। समावेशित शिक्षा के बारे में आपने इससे पहले की इकाई में अध्ययन किया है । इस इकाई में हम समावेशित शिक्षा के प्रारम्भ, अर्थ, आवश्यकता एवं महत्त्व को संक्षेप में समझते हुए, इससे होने वाले लाभों एवं मुद्दों की विस्तारपूर्वक चर्चा करेंगे।

4.2 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप:-

- समावेशित शिक्षा का प्रारम्भ व अर्थ बता सकेंगे;
- एकीकृत एवं समावेशित शिक्षा में अन्तर कर पायेंगे;
- समावेशित शिक्षा की आवश्यकता एवं महत्त्व जान सकेंगे;
- समावेशित शिक्षा के दर्शन एवं सिद्धान्तों को समझ सकेंगे;
- समावेशित शिक्षा के लाभ एवं मुद्दों की व्याख्या कर सकेंगे।

4.3 समोवशित शिक्षा: एक विवरण

समावेशित शिक्षा एक नया प्रत्यय है, इस प्रत्यय की शुरुवात इस

आधार पर हुआ कि शिक्षा प्रत्येक बच्चे का मूल अधिकार है और प्रत्येक बच्चे की अलग विशेषताएं, रुचि, योग्यता और आवश्यकता होती है जिसका हमें सम्मान करना चाहिए।

4.3.1 समावेशित शिक्षा का प्रारम्भ:

समावेशी शब्द का प्रचलन 1990 के दशक के मध्य से बढ़ा, जब जून, 1994 में सलमानका (स्पेन) में यूनेस्को द्वारा विशेष शैक्षिक आवश्यकताओं पर विशेष विश्व सम्मेलन सुलभता और समता का आयोजन हुआ।

इस सम्मेलन में 92 देशों और 25 अंतराष्ट्रीय संगठनों ने हिस्सा लिया। सम्मेलन का समापन इस उद्घोषणा के साथ हुआ कि ''प्रत्येक बच्चे की चरित्रगत विशिष्टताएँ, रूचियाँ, योग्यता एवं सीखने की आवश्यकताएँ अनोखी होती हैं, अतः शिक्षा प्रणाली में इन विशिष्टताओं और आवश्यकताओं की व्यापक विविधता का ध्यान रखना चाहिए।

इस सम्मेलन के बाद ही विभिन्न देशों ने बच्चों की आवश्यकताओं, रूचियों एवं योग्यताओं को ध्यान में रखकर शिक्षा प्रणाली में परिवर्तन लाया, शिक्षा में यही परिवर्तन समावेशित शिक्षा के रूप में प्रचलित हुआ।

4.3.2 समावेशित शिक्षा का अर्थ:

सलमानका सम्मेलन के अनुसार समावेशित शिक्षा से तात्पर्य है:-

''.................... बच्चों के उनके शारीरिक, बुद्धिमता, सामाजिक, भावनात्मकता, भाषायी या कोई अन्य परिस्थितियों पर ध्यान दिये बिना विद्यालय को सभी बच्चों को दाखिला देना चाहिए। यह सम्मिलित करता है विकलांग और प्रतिभावान बच्चे, गली के और कार्य करने वाले बच्चे, गाँव या बंजारे से बच्चे, भाषीय प्रजातीय या सांस्कृतिक अल्पसंख्यक से बच्चे तथा दूसरे अलाभांवित या अधिकारहीन क्षेत्र या समूह से बच्चे।'' (सलमानका कथन, 1994, पैराग्राफ 3)

मानव विकास संसाधन मंत्रालय के समावेशित शिक्षा स्कीम (2003) के अनुसार,

''समावेशित शिक्षा से तात्पर्य सभी सीखने वाले, बिना विकलांग एवं विकलांग नवयुवक पूर्व-विद्यालय प्रावधानों, विद्यालय और सामुदायिक शैक्षिक स्थानों पर उपयुक्त तंत्र एवं सहायक सुविधाओं के साथ एक साथ सीख (पढ़) सकें।''

एक बात ध्यान रखनी चाहिए कि समावेशित शिक्षा से तात्पर्य केवल विकलांग बच्चों को ही कक्षा में सामान्य बच्चों के साथ शिक्षा देना ही नहीं है, बल्कि सभी बच्चे जो विभिन्न वर्ग एवं योग्यता के हैं को एक साथ एक ही कक्षा में शिक्षा देना समावेशित शिक्षा कहलाता है।

अभ्यास प्रश्न 1:

रिक्त स्थान भरिए:

1. सलमानका सम्मेलन सन् .... में हुआ था।

2. सलमानका सम्मेलन....................................द्वारा आयोजित किया गया था।

4.4 एकीकृत एवं समावेशित शिक्षा

पिछले खण्ड में हमने समावेशित शिक्षा के बारे में जाना कि इसकी शुरुआत कब हुई तथा इसका अर्थ क्या है। इस खण्ड में हम समझेंगे कि एकीकृत शिक्षा क्या है? तथा यह समावेशित शिक्षा से कैसे अलग है?

4.4.1 एकीकृत शिक्षा का अर्थ:

अक्सर विद्यार्थी एकीकृत एवं समावेशित शिक्षा को एक ही समझते है, मगर सच्चाई यह है कि इन दोनों में बहुत अन्तर है।

एकीकृत अथवा 'इनटिग्रेट' का अर्थ है, पृथक किये हुए लोगों को पुनः मिश्रित करना अथवा जोड़ना। अर्थात विशेष आवश्यकता वाले विद्यार्थियों को सामान्य विद्यालय में शैक्षिक सुविधाएं व शैक्षिक अवसर उपलब्ध कराना ही 'एकीकृत शिक्षा' है।

अब प्रश्न उठता है कि अगर एकीकृत शिक्षा का भी तात्पर्य विशेष आवश्यकता वाले विद्यार्थियों को सामान्य विद्यालय में शैक्षिक अवसर

उपलब्ध कराना है तो फिर यह समावेशित शिक्षा से भिन्न किस प्रकार है?

4.4.2 एकीकृत एवं समावेशित शिक्षा में अन्तर:

एकीकृत एवं समावेशित शिक्षा के अन्तर को निम्नलिखित आधारों पर समझा जा सकता है:-

एकीकृत एवं समावेशित शिक्षा में प्रमुख अन्तर यह है कि एकीकृत शिक्षा में विशेष आवश्यकता वाले बच्चे को सामान्य विद्यालय में शैक्षिक अवसर प्रदान किया जाता है, जबकि समावेशित शिक्षा में विशेष

आवश्यकता वाले बच्चे को सामान्य विद्यालय की सभी शैक्षिक गति- विधियों में सम्मिलित करते हुए शैक्षिक अवसर प्रदान किया जाता है।

एकीकृत शिक्षा में विशेष आवश्यकता वाला विद्यार्थी एक समस्या के रूप में होता है, जबकि समावेशित शिक्षा में शैक्षिक संस्था एक समस्या के रूप में होती है।

एकीकृत शिक्षा में विशेष आवश्यकता वाले विद्यार्थी से अपेक्षा की जाती है कि वह स्वयं को विद्यालय की आवश्यकतानुसार अपेक्षित सुधार कर साम्जस्य स्थापित करे, जबकि समावेशित शिक्षा में विद्यालय का उत्तरदायित्व है कि वह विशेष आवश्यकता वाले विद्यार्थी के अनुरुप विद्यालय के भवन, पाठ्यक्रम व अन्य सुविधाओं को उसे उपलब्ध कराने हेतु अपेक्षित सुधार करे।

समावेशित शिक्षा एक लम्बी अवधि की प्रक्रिया है, जबकि एकीकृत शिक्षा एक न्यूनतम अवधि का उद्देश्य है। चूँकि एकीकृत शिक्षा के अन्तर्गत विशेष आवश्यकता वाले विद्यार्थी को सामान्य विद्यालय में शिक्षा के अवसर प्रदान किये जाते हैं, अतः इसे न्यूनतम अवधि का उद्देश्य कहा जाता है, क्योंकि विशेष आवश्यकता वाले बच्चे को सामान्य विद्यालय में भर्ती कराना कोई कठिन कार्य नहीं है। कठिन कार्य तथा लम्बी अवधि की प्रक्रिया यह है कि विशेष आवश्यकता वाले बच्चे को सामान्य विद्यालय के सभी कार्यों में पूर्णरूप से भागीदारी हो रही है कि नहीं, इसलिए समावेशित शिक्षा को लम्बी अवधि की प्रक्रिया कहते हैं।

समावेशित शिक्षा सामाजिक प्रारुप पर आधारित है, जबकि एकीकृत शिक्षा व्यक्तिगत प्रारुप पर आधारित है।

अभ्यास प्रश्न 2:

सत्य/असत्य बताइए:-

1. एकीकृत शिक्षा एवं समावेशित शिक्षा में कोई अन्तर नहीं है।
2. एकीकृत शिक्षा सामाजिक प्रारुप पर आधारित है।

4.5 समावेशित शिक्षा की आवश्यकता एवं महत्व

आजकल प्रत्येक जगह समावेशित शिक्षा की ही चर्चा होती है, अतः यह जानने कि जिज्ञासा उत्पन्न होती है कि आखिर क्यों समावेशित शिक्षा जरूरी है? तथा इसका महत्व क्या है?

4.5.1 समावेशित शिक्षा आवश्यकता

अगर हम इस प्रश्न का उत्तर सोचें तो यही कहेंगे कि आज के बदलते परिवेश में कुछ लोगों को ज्यादा महत्त्व देना तथा कुछ लोगों को बिल्कुल ही ना पुछना अनैतिक है। अर्थात् कुछ बच्चों को घर के पास ही अच्छे स्कूल में पढ़ाना तथा कुछ बच्चे जिनकी आवश्यकतायें थोड़ी भिन्न हैं उनको दूर किसी विशेष स्कूल में पढ़ाना एक अनैतिक कार्य है। इसके अलावा हम कह सकते हैं कि समावेशित शिक्षा इसलिए आवश्यक है:-

क्योंकि सभी बच्चे चाहे वो कैसी भी आवश्यकता वाले हों, एक ही समाज में रहना है। अतः शुरु से ही एक साथ रखने में उनको समाज में रहने में आसानी होगी।

क्योंकि सामान्य विद्यालय सभी जगह हैं, जबकि विशेष विद्यालय दूर शहरों में होते हैं, अतः एक विशेष आवश्यकता वाले बच्चे को विद्यालय जाने के लिए दूर तक सफर करना पड़ता है, जो कि उस बच्चे के मूल अधिकार का हनन है।

4.5.2 समावेशित शिक्षा का महत्त्व:

प्रत्येक राष्ट्र अपने यहाँ के सभी लोगों को साक्षर बनाने का प्रयास करता है, ताकि राष्ट्र की उन्नति हो सके। यह बात तो सिद्ध है कि जिस राष्ट्र के ज्यादातर लोग पढ़े-लिखें है, वह राष्ट्र ज्यादा उन्नति कर रहा है, तथा जिस राष्ट्र के कम लोग शिक्षित हैं, वह राष्ट्र गरीब है।

अतः समावेशित शिक्षा होने से सभी प्रकार के बच्चे अपने पास के स्कूल में जाकर पढ़ सकते हैं। जो विशेष आवश्यकता वाले बच्चे पहले विशेष स्कूल दूर होने के शिक्षा पाने से वंचित रह जाते थे वे अब समावेशित शिक्षा के आने से पास के स्कूल में ही दूसरे बच्चों के साथ अपनी शिक्षा ग्रहण कर सकते हैं।

सभी प्रकार के बच्चों के शिक्षा ग्रहण करने पर उस राष्ट्र की साक्षरता दर बढ़ेगी तथा भविष्य में वह राष्ट्र अवश्य ही विकसित राष्ट्र बनेगा।

अभ्यास प्रश्न 3:

सत्य/असत्य बताइए:

1. विशेष शिक्षा विशेष आवश्यकता वाले बच्चों को हमें शा देनी चाहिए।
2. समावेशित शिक्षा राष्ट्र की उन्नति के लिए आवश्यक है।

4.6 समावेशित शिक्षा का दर्शन एवं सिद्धान्त

समावेशित शिक्षा की आवश्यकता एवं महत्त्व जानने के बाद हम संक्षेप में चर्चा करेंगे कि समावेशित शिक्षा किस दर्शन पर आधारित है एवं इसके सिद्धान्त क्या हैं?

4.6.1 समावेशित शिक्षा का दर्शन:

समावेशित शिक्षा का मूल दर्शन है कि 'बच्चे जो एक साथ रहकर सीखते हैं, एक साथ रहकर जीना सीखते हैं।'

समावेशित शिक्षा का दर्शन इस विश्वास पर आधारित है कि सभी व्यक्ति समान हैं तथा मानव के मूल अधिकार के मुद्दे पर सम्मान एवं महत्त्व देनी चाहिए। समावेशित शिक्षा मानवाधिकार शिक्षा को दर्शाता है।

समावेशित शिक्षा के दर्शन के अन्तर्गत स्कूल को एक समुदाय के रूप में संगठित किया जाता है जहाँ सभी बच्चे एक साथ रहना सीख जायेंगे तो भविष्य में एक साथ रहकर जीवन निर्वाह करने में कोई परेशानी नहीं होगी।

4.6.2 समावेशित शिक्षा का सिद्धान्त:

समावेशित शिक्षा का मूल सिद्धान्त यह है कि प्रत्येक बच्चे को समान अवसर, अधिकार एवं भागीदारी मिलनी चाहिए।

इसके अतिरिक्त समावेशित शिक्षा का महत्त्वपूर्ण सिद्धान्त है:-

विशेष आवश्यकता वाले बच्चों को अतिरिक्त सहायता प्रदान करना।

विशेष आवश्यकता वाले बच्चों के प्रति उत्तरदायित्व व सहयोग में सभी कार्यकर्ताओं की साझेदारी।

समुदाय की भागीदारी एवं सहायता सुनिश्चित करना।

विशेष आवश्यकता वाले बच्चे के परिवार एवं सामाजिक वातावरण के बारे में जानकारी रखना।

प्रत्येक बच्चे को यह अवसर मिलना चाहिए कि वह अर्थपूर्ण चुनौतियों का सामना करे, चयन करे व जिम्मेदारी ले। दूसरों के साथ सहभागिता के साथ अर्न्तक्रिया करे व शैक्षिक प्रक्रिया की सभी विकासशील शैक्षिक व अशैक्षिक, आंतरिक व अंतैयक्तिव गतिविधियों में भाग ले।

अभ्यास प्रश्न 4:

रिक्त स्थान भरिए:

1. बच्चे जो साथ रहकर सीखते हैं, एक साथ रहकर......... सीखते हैं।
2. समावेशित शिक्षा का एक सिद्धान्त यह है कि .... भागीदारी एवं सहायता सुनिश्चित करना।

4.7 समावेशित शिक्षा के लाभ

समावेशित शिक्षा का अर्थ, महत्त्व, आवश्यकता एवं सिद्धान्त जानने के बाद अब हम इसके लाभों के बारे में अध्ययन करेंगे। समावेशित शिक्षा जो आज इतना प्रचलित शब्द है, इसके क्या लाभ हैं, तथा इससे लाभांवित होने वाले कौन लोग हैं?

समावेशित शिक्षा से मुख्यतः चार लोग प्रभावित होते हैं, वे हैं:-

- विशेष आवश्यकता वाले बच्चे
- सामान्य बच्चे
- सामान्य शिक्षक
- माता-पिता

अतः हम इन्हीं चारों को समावेशित शिक्षा से होने वाले लाभों के बारे में चर्चा करेंगे।

4.7.1 विशेष आवश्यकता वाले बच्चों के लिए लाभ

a. जब एक विशेष आवश्यकता वाले विद्यार्थी को सामान्य विद्यालय के कक्षा में रखा जाता है तो, उस विद्यार्थी को अपने प्रति बहुत सारे साकारात्मक बातें आती हैं। विशिष्ट रूप से यह परम्परागत विशेष शिक्षा के कक्षा के वातावरण की तुलना में ज्यादा प्रेरक वातावरण प्रदान करता है। विशेष आवश्यकता वाले बच्चों के लिए यह वातावरण प्रायः सीखने एवं विकास करने में अग्रीण भूमिका निभाता है। (रेशलन फॉर एण्ड बेनफिट्स आफ इन्क्लूशन, 2004)

ii. शोध बताते हैं कि विशेष आवश्यकता वाले विद्यार्थी जिनको समावेशित शिक्षा में रखा गया है। वे अनुदेशात्मक समय में ज्यादा व्यस्त रहते हैं, और शैक्षिक क्रियाओं में ज्यादा प्रदर्शन कर पाते हैं। (सेलेन्ड, 2001)

iii. विशेष आवश्यकता वाले विद्यार्थीयों को नये दोस्त बनाने एवं अपने अनुभवों को बाँटने का मौका मिलता है, जो कि विशेष विद्यालय में नहीं हो पाता है।

iv. विशेष आवश्यकता वाले बच्चे अपने उम्र के बच्चों के साथ दोस्ती विकसित करते हैं, जो विद्यालय में और विद्यालय के बाहर समुदाय में उनके साथी समूह द्वारा स्वीकृति करने में अग्रसर भूमिका निभाता है।

v. समावेशित शिक्षा में आकर विशेष आवश्यकता वाले बच्चे अपने आप को व्यक्ति के रूप में ज्यादा अभिज्ञ रखते हैं, तथा लेबलिंग (वर्गीकरण) की चिंता कम हो जाती है।

vi. समावेशित शिक्षा से विशेष आवश्यकता वाले बच्चों का आत्मसम्मान एवं स्वाभिमान बढ़ता है। जब वे सामान्य विद्यार्थी एवं शिक्षक से संपर्क स्थापित करना शुरु करते हैं तो वे अपने आप को योग्य महसूस करना शुरु कर देते हैं।

vii. विशेष आवश्यकता वाले बच्चे अपने आप को ऐसे व्यक्ति के रूप में देखने लगते हैं, जो अपने अनुभवों को अपने दोस्तों के साथ बाँट कर आनन्द प्राप्त करता है। जबकि यही अनुभव उसे विशेष विद्यालय में अच्छे नहीं लगते थे।

viii. शोध यह भी दर्शाते हैं कि समावेशित शिक्षा विशेष आवश्यकता वाले बच्चों के मानक टेस्ट स्कोर, पढ़ने की क्षमता और ग्रेड को बढ़ाता है। (सेलेन्ड, 2001)

ix. समावेशित शिक्षा में रहकर विशेष आवश्यकता वाले बच्चे संप्रेषण कौशल एवं सामाजिक योग्यता सीखते हैं।

x. विशेष आवश्यकता वाले बच्चों में अवांछित व्यवहार कम होते हैं, तथा सामाजिक वांछनिय व्यवहार विकसित होते हैं।

xi. विशेष आवश्यकता वाले बच्चे नये अविष्कारों, तकनीकियों और सामान्य ज्ञान से अवगत होते हैं।

xii. जीवन में आगे क्या करना है, कौन सी नौकरी करनी है, इत्यादि बातें विशेष आवश्यकता वाले बच्चे सामान्य बच्चों से चर्चा करके निश्चित कर सकते हैं।

4.7.2 सामान्य बच्चों के लिए लाभः

i. समावेशित शिक्षा के कारण सामान्य बच्चों को विभिन्न प्रकार के बच्चों से मिलने व उनको स्वीकार करने की आदत बचपन से पड़ जाता है। सामान्य बच्चे व्यक्तिगत विभिन्नता, तथा विशेष आवश्यकता वाले बच्चों की आवश्यकतायें एवं उनसे किस प्रकार व्यवहार किया जाय समझने लगते हैं। (सेलेन्ड, 2001)

ii. विशेष बावश्यकता वाले बच्चों के सम्पर्क में आने से सामान्य बच्चे यह सीख जाते हैं कि बौधिक, शारीरिक एवं भावानात्मक अंतर सभी के जीवन का एक भाग है। जिससे उन्हें भविष्य में ऐसे लोगों से सम्पर्क बनाने में आसानी होगी। (वूड, 1993)

iii. समावेशित शिक्षा में सामान्य विद्यार्थी समाज की विविधताओं को कक्षा में एक छोटे पैमाने पर देखने लगते हैं, जिससे भविष्य में समाज में ऐसे लोगों की सहन एवं सम्मान करने का अनुभव हो जाता है।(बेनफिट्स ऑफ इन्क्लूसिव क्लासरूम फॉर ऑल, 1999)

iv. सामान्य बच्चे अपने विशेष आवश्यकता वाले सहपाठी को अच्छी तरह जान-पहचान जाते हैं, जिससे उनके मन में ऐसे बच्चों के प्रति बना डर व भ्रम टूट जाता है तथा वे ऐसे बच्चों का धीरे-धीरे सम्मान करने लगते हैं।

v. सामान्य बच्चे अपने विशेष आवश्यकता वाले सहपाठी के कमियों की तरफ संवेदना विकसित करना शुरु कर देते हैं, और इनकी तरफ सहानुभूति रखने वाले कौशल विकसित करते हैं। ये दोनो कौशल सामान्य बच्चे के भावी जीवन में हर पग पर काम आते हैं।

vi. समावेशित शिक्षा में सामान्य विद्यार्थी कुछ महत्वपूर्ण कौशलों को सीखते हैं जो कि उनके व्यवस्क जीवन के लिए महत्वपूर्ण होते हैं, ये कौशल हैं:-

   a. नेतृत्व, एक दूसरे की सहायता करना एवं पढ़ाने की योग्यता, परामर्शदाता, सिखाना, अधिकारिता तथा स्वाभीमान को बढ़ाना। (बेनेफिट्स ऑफ इन्क्लूसिव क्लासरुम फॉर आल, 1999)

vii. समावेशित शिक्षा में सामान्य बच्चों को अक्सर शिक्षक की भूमिका अदा करने का अवसर मिलता है, ताकि अपने विशेष आवश्यकता वाले सहपाठी को पढ़ा सके तथा सहायता कर सके। इससे सामान्य बच्चे का आत्मविश्वास बढ़ता है जो उसके खुद के लिए बहुत लाभदायक है।

viii. सामान्य बच्चे अपने विशेष आवश्यकता वाले सहपाठी के साथ रहने के अनुभव के आधार पर समाज एवं स्कूल के बीच संपर्क स्थापित करने में मदद कर सकते हैं।

ix. विशेष आवश्यकता वाले बच्चों के उत्तरदायित्व को संभालते हुए सामान्य बच्चे व्यवस्क होकर समाज के उत्तरदायित्वों को संभालने में सक्रिय भूमिका निभा सकते हैं।

x. समावेशित शिक्षा के सामान्य बच्चों में सकारात्मक सोच, अनुकरणीय व्यवहार, स्वीकृति, धैर्य, सहन एवं मित्रता आदि कौशलों का विकास होता है। (रेशनल फॉर एण्ड बेनिफिट्स ऑफ इन्क्लूसन, 2004)

4.7.3 सामान्य शिक्षक के लिए लाभ:

i. समावेशित शिक्षा से सामान्य शिक्षक यह स्वीकार करने लगते हैं कि सभी विद्यार्थीयों में कुछ ना कुछ गुण होता है और यह गुण मिलकर एक अच्छे कक्षा के निर्माण में सहायक होता है, तथा शिक्षक को कक्षा प्रबन्ध में आसानी होती है। (बेनिफिट्स ऑफ इन्क्लूसिव क्लासरूम फॉर आल, 1999)

ii. समावेशित शिक्षा से सामान्य शिक्षकों में यह जानकारी उत्पन्न होती है कि व्यक्तिगत विभिन्नता क्या है, तथा कैसे अलग-अलग लोगों से अलग-अलग व्यवहार, करके एक अच्छा कक्षीय वातावरण बनाये।

iii. समावेशित शिक्षा के कारण सामान्य शिक्षक विशेष आवश्यकता वाले बच्चों को पढ़ाने के लिए नये शैक्षिक तकनीक सीखता है, जो उसके कक्षा के सभी विद्यार्थियों के लिए लाभदायक होता है।

iv. समावेशित शिक्षा में विद्यार्थियों को पढ़ाने के लिए परम्परागत शैक्षिक प्रणालियों (जैसे व्याख्यान विधि, नोट लिखना) का प्रयोग उपयुक्त नहीं होता है, अतः सामान्य शिक्षक अपने पराम्परागत शैक्षिक प्रणाली को छोड़कर रचनात्मक तथा नये शैक्षिक प्रणाली से अपने कक्षा में पढ़ाता है, जिससे उसके कक्षा के सभी विद्यार्थी रुचिपूर्वक शिक्षा ग्रहण करते हैं।

v. समावेशित शिक्षा सामान्य शिक्षक को सामूहिक कार्य कौशल विकसित करने का मौका देती है। (बेनेफिट्स ऑफ इन्क्लूसिव क्लासरूम फॉर आल, 1999)

vi. सामान्य शिक्षक समावेशित शिक्षा के कारण विभिन्न प्रकार के प्रफेशनल (व्यवसायी) जैसे - मनोवैज्ञानिक, विशेष शिक्षक आदि से मिलता है, जिससे उसके ज्ञान में भी वृद्धि होती है।

vii. सामान्य शिक्षक जो समावेशित शिक्षा अथवा समावेशित स्कूल में कार्य करते हैं उनमें समस्या समाधान कौशल, समस्या को अलग तरह से सोचने की तथा मनोबल बढ़ाने की कौशल का होना पाया जाता है। (बेनेफिट्स ऑफ इन्क्लूसिव क्लासरूम फॉर आल, 1999)

viii. सामान्य शिक्षक को प्रत्यक्ष व्यक्तिगत अनुदेशन का महत्त्व समावेशित शिक्षा में रहकर पता चलता है।

ix. समोवशित शिक्षा में कार्य करने वाला शिक्षक विशेष आवश्यकता वाले बच्चों की आवश्यकता को समझकर उसे अपने दूसरे साथियों के साथ बाँटता है जिससे ऐसे बच्चों के प्रति फैली गलत धारणाएं कम हो जाती हैं।

x. सामान्य शिक्षक विभिन्न प्रकार के विशेष आवश्यकताओं वाले बच्चों के सम्पर्क में रहता है, जिसका प्रभाव समाज पर भी पढ़ता है। समाज में भी वह किसी के साथ आसानी पूर्वक रह सकता है।

4.7.4 माता-पिता के लिए लाभ:

i. माता-पिता अपने विशेष आवश्यकता वाले बच्चे को घर के पास के स्कूल में दाखिला मिलने से उनसे हमें शा सम्पर्क में रहते हैं: जिससे उन्हें खुशी का अनुभव होता है, जो विशेष शिक्षा के अन्तर्गत नहीं होता था। (फोरेस्ट, एम. एण्ड पेयरप्वांट, जे., 2004)

ii. सभी माता-पिता की इच्छा होती है कि उसके बच्चे को उसके मित्र समूह द्वारा स्वीकार किया जाय। समावेशित कक्षा में अपने बच्चे को इस प्रकार देखकर उन्हें सपने पूरे होने जैसा लगता है।

iii. जब विशेष आवश्यकता वाले बच्चे सामान्य जीवन व्यतित करने लगते हैं तो उनके माता-पिता अपना ध्यान दूसरे कामों में भी लगा लेते हैं, तथा समावेशित शिक्षा के कारण उन्हें यह अहसास होने लगता है कि उनका बच्चा भी सामान्य बच्चों जैसा ही है।

iv. समावेशित शिक्षा की वजह से विशेष आवश्यकता वाले बच्चों के माता-पिता में अपने बच्चों के अधिकारों को समझने में आसानी होती है।

v. विशेष आवश्यकता वाले बच्चों के लिए दिये जा रहे सुविधाओं का भी ज्ञान माता-पिता को समावेशित शिक्षा के द्वारा होता है।

vi. समावेशित कक्षा में विशेष आवश्यकता वाले बच्चों को पढ़ाने के लिए विभिन्न उपकरणों को देखकर माता-पिता कुछ उपकरण खरीद कर घर पर भी लाते हैं, जिससे उन्हें अपने बच्चे से अच्छी तरह सम्पर्क स्थापित करने में सहायता मिलती है।

vii. समावेशित शिक्षा में अपने बच्चे के उम्र के दूसरे सामान्य बच्चे की शारीरिक, बुद्धिमता इत्यादि देखकर अपने बच्चे में कहाँ कमी है, ये बात माता-पिता आसानी से समझ जाते हैं, तथा उसको दूर करने का प्रयास करते हैं।

viii. विद्यालय में जब शिक्षक और माता-पिता के बीच मीटिंग होती है तब उस समय विशेष आवश्यकता वाले बच्चे के माता-पिता उसी कक्षा के सामान्य बच्चे के माता-पिता से मिलकर उसके द्वारा बच्चे के विकास के लिए किये गये कार्यों को समझकर अपने विशेष आवश्यकता वाले बच्चे के साथ भी वैसा करने का प्रयास कर सकते हैं ताकि उसमें भी वैसे ही विकास हो जैसे सामान्य बच्चे में है।

अभ्यास प्रश्न 5:

बहुविकल्पीय प्रश्न:-

1. समावेशित शिक्षा से लाभांवित नहीं होते हैं:

अ. सामान्य बच्चे ब. विशेष आवश्यकता वाले बच्चे

स. शिक्षक द. इनमें से कोई नहीं

2. समावेशित शिक्षा में विशेष आवश्यकता वाले बच्चे सामान्य बच्चों के साथ

अ. लड़ते हैं ब. मिलते नहीं है

स. मित्र बनाते हैं द. बात नहीं करते हैं

3. समावेशित शिक्षा में सामान्य शिक्षक विशेष आवश्यकता वाले बच्चों को

अ. हमें शा डाँटता है ब. अलग रखता है

ब. ध्यान नहीं देता है द. सामान्य बच्चों के साथ मिलाकर रखता है।

4.8 समावेशित शिक्षा के मुद्दे

'मुद्दे' एक ऐसा शब्द है, जिससे आप सभी लोग परिचित होंगे। रोजमर्रा के जीवन में भी यह शब्द आता रहता है, जैसे देश के मुद्दे, राज्य के मुद्दे, स्कूल में मुद्दे इत्यादि। अर्थात् अगर हर जगह मुद्दे व्याप्त है तो फिर समावेशित शिक्षा इससे कैसे अछूता रह सकता है।

अतः इस खण्ड में हम समावेशित शिक्षा में कुछ प्रमुख मुद्दों की चर्चा करेंगे, जो है:-

- समाज से संबंधित मुद्दे
- वित्तिय संबंधी मुद्दे
- शिक्षा नीति संबंधी मुद्दे
- उपलब्धता एवं सुगम्यता संबंधी मुद्दे
- अध्यापक शिक्षा से संबंधित मुद्दे
- शोध से संबंधित मुद्दे

4.8.1 समाज से संबंधित मुद्दे

समावेशित शिक्षा में सबसे प्रमुख मुद्दा है समाज के लोगों की नकारात्मक मनोवृत्ति। नकारात्मक मनोवृत्ति जो कि समाज के सांस्कृतिक

धारणा में गहराई तक समाहित है, उसको परिवर्तित करना एक मुश्किल कार्य है।

अभी भी समाज के लोगों में विशेष आवश्यकता वाले बच्चों या विकलांग बच्चों के प्रति गलत धारणा बनी हुई जो समावेशित शिक्षा के लिए बहुत बड़ा अवरोध है। इसको परिवर्तित किये बिना समावेशित शिक्षा सफलतापूर्वक नहीं चल सकता है। मनोवृत्ति विश्वास पर आधारित होता है, इनको बदला तभी जा सकता है जब कोई नयी सूचना समाज के लोगों को बताया जाय; जैसे- विशेष आवश्यकता वाले बच्चों एवं सामान्य बच्चों के समावेशित शिक्षा में सफलता की कहानी।

विशेष आवश्यकता वाले बच्चों के कुछ माता-पिता अपने बच्चों को समावेशित शिक्षा में दाखिला करने से डरते हैं कि वहाँ पर उनके बच्चे का सही ढंग से देखभाल नहीं होगा। उनका मानना है कि विशेष स्कूल ही उनके बच्चों के लिए ठीक है।

समाज में व्याप्त यही सब मुद्दे समावेशित शिक्षा के सफल संचालन में बाधा हैं, अतः इनको दूर करना अति आवश्यक है।

4.8.2 वित्तिय संबंधी मुद्दे

उपलब्ध संसाधनों के अलावा सभी देश विशेष आवश्यकता वाले बच्चों की शिक्षा के लिए वित्तिय मुद्दों को लेकर ज्यादा चिंतित हैं। परन्तु फिर भी इस क्षेत्र में वित्तिय संबंधी समस्या है।

समावेशित स्कूल बनाने में ज्यादा पैसे की जरूरत है, मगर

विकासशील देशों में या गरीब देशों में पैसे की कमीं होने के कारण समावेशित शिक्षा लाने में कठिनाइयों का सामना करना पड़ रहा है।

थॉमस (2005) का कहना है कि भारत में समावेशित शिक्षा को कार्यान्वित करने के लिए वास्तव में पर्याप्त संसाधन एवं धन है। उनका कहना है कि यह इस प्रकार हो सकता है कि जो आवश्यक सुविधाएं कुछ विशेष विद्यालय प्रदान कर रहे हैं तथा जो धन इन पर खर्च हो रहे हैं, उनको फैलाया जाय।

समावेशित शिक्षा के सफल संचालन के लिए पर्याप्त मात्रा में धन एवं उसका सही ढंग से उपयोग होना जरूरी है। भारत में प्रत्येक बजट में शिक्षा के लिए धन का प्रावधान होता है, मगर इसका सही ढंग से उपयोग करना अभी भी सरकार के लिए समस्या बनी हुई है, जिससे समावेशित शिक्षा प्रभावित होती है।

4.8.3 शिक्षा नीति संबंधी मुद्दे:

भारत में विशेष आवश्यकता वाले बच्चों के लिए नीतियाँ है मगर इन नीतियों को कार्यान्वित करने में कई समस्यायें आती हैं, जैसे - प्रशासनिक संरचना, समावेशित शिक्षा नीति आदि। इनका हम संक्षेप में चर्चा करेंगे।

प्रशासनिक संरचना-भारत में सन् 1976 से शिक्षा संयुक्त रूप से केन्द्र और राज्य की जिम्मेदारी है। केन्द्र नीतियों की रूपरेखा एवं वित्तिय सहायता देता है, जबकि राज्य अपने नीतियों को संगठित, संरचित एवं कार्यान्वित करता है। विभिनन सांस्कृतिक विभिन्नताओं के कारण केन्द्र सरकार के नितियों के लिए यह असम्भव हो जाता है कि वे प्रत्येक राज्य तक पहुँचे क्योंकि प्रत्येक राज्य ऐसी नीतियों को अपने तरह से प्रस्तुत करता है। केन्द्र सरकार यह मानता है कि, ''राष्ट्रीय योजनाओं में एक प्रमुख चुनौती है कि राज्य के वरीयता के साथ राष्ट्रीय योजना फ्रेम का सामन्जस्य स्थापित करना।'' (जी. ओ. ई. 200)

एक अतिरिक्त नौकरशाही तनाव, जो सामानांतर व्यवस्था उत्पन्न करता है वह है कि विशेष आवश्यकता वाले बच्चों के लिए विशेष स्कूल खराब प्रदर्शन करने वाले (ळप्व्ए 2005: 146-7) सामाजिक न्याय एवं अधिकारिता मंत्रालय के अंतर्गत आता है, जबकि बाकी सामान्य स्कूल मानव संसाधन एवं विकास मंत्रालय के अन्तर्गत आते हैं।

प्रत्येक विभाग समावेशित शिक्षा घटक के साथ अपने शैक्षिक कार्यक्रमों की देखभाल करता है, अतः बच्चे कई सारे विभागों में फैले होते हैं, तथा मानव संसाधन विकास मंत्रालय एवं सामाजिक न्याय एवं अधिकारिता मंत्रालय मिलकर काम नहीं करते हैं। इसके परिणामस्वरूप कार्यों में समानता की कमीं, खराब गुण एवं प्रतिलिपिकरण होता है। (सिंगल, 2005)

समावेशित शिक्षा नीति- विशेष आवश्यकता वाले बच्चों को अथवा विकलांग बच्चों को समावेशित शिक्षा में भेजने का सुझाव सर्वप्रथम् सन् 1944 में सार्जेन्ट रिर्पोट ने दिया, फिर दुबारा सन् 1964 कोठारी कमीशन द्वारा दिया गया, बावजूद इसके अभी तक इस क्षेत्र में ज्यादा उन्नति नहीं हुई है। (जुलका, 2005)

भारत सरकार द्वारा बीस साल पहले ही विशेष आवश्यकता वाले बच्चों के लिए एक्ट पारित किया जा चुका है, परन्तु अभी भी समावेशन में अवरोध बने समाज के लोगों की मनोवृत्ति को परिवर्तित नहीं कर पाये हैं। उदाहरण के तौर पर सन 1993 में सभी के लिए शिक्षा पर दिल्ली घोषणा में वादा किया गया था कि प्रत्येक बच्चे की क्षमता के अनुसार उनको स्कूल में या उपयुक्त शैक्षिक प्रोग्राम में शिक्षा दी जायेगी। (मुखोपाध्याय एण्ड मनी, 2002: 96)

समावेशित शिक्षा को प्रोत्साहित करने के स्थान पर सरकारी दस्तावेज का मुख्य ध्यान विकलांग बच्चों को शिक्षा व्यवस्था में दाखिला दिलाना है....... भले ही पूर्ण रूप से समावेशन हो अथवा नहीं। (सिंगल, 2005)

4.8.4 उपलब्धता एवं सुगमता संबंधी मुद्दे

उपलब्धता एवं सुगमता से तात्पर्य है स्कूल के भवन एवं पाठ्यक्रम। इन्हीं की चर्चा हम इस खण्ड में करेंगे।

स्कूल के भवन- समावेशित शिक्षा के लिए सर्वप्रथम आवश्यक तत्व है स्कूल के भवनों को अवरोध मुक्त करना। परन्तु आज भी स्कूलों के भवनों ना तो रेलिंग है या ना तो रैम्प। अतः एक अस्थि विकलांग बच्चे को स्कूल में दाखिला देना सम्भव नहीं है। अर्थात जब तक स्कूलों के भवनों का पुनःसंरचना या परिवर्तन नहीं दस्तावेजों पर ही रहेगा, व्यवहारिक नहीं हो पायेगा।

पाठ्यक्रम- समावेशित शिक्षा में पाठ्यक्रम भी एक प्रमुख मुद्दा है। विशेष आवश्यकता वाले बच्चों के लिए पाठ्यक्रम में परिवर्तन लाए बिना समावेशित शिक्षा सफलतापूर्वक संचालित नहीं हो पाएगा।

कुछ विशेष आवश्यकता वाले विद्यार्थीयों को सामान्य पाठ्यक्रम में परिवर्तन की जरूरत नहीं पड़ती है। ये बच्चे सामान्य बच्चों की तरह पाठ्यक्रम को समझ सकते हैं, बस प्रस्तुत करने के तरीकों में परिवर्तन करना होता है। जैसे - दृष्टिबाधित बच्चों के लिए ब्रेल में लिखे हुए विषय वस्तु, जो श्यामपट पर लिखे उसको बोलें भी।

परन्तु कुछ विशेष आवश्यकता वाले बच्चों के (जैसे - मानसिक मंद) लिए पाठ्यक्रम अनुकूलन करना पड़ेगा, क्योंकि इसके बिना ऐसे बच्चों का समावेशन मुश्किल कार्य है।

4.8.5 अध्यापक शिक्षा से संबंधित मुद्दे

समावेशित शिक्षा के क्षेत्र में कई शिक्षाशास्त्री इस बात पर बल देते हैं कि कक्षा में समावेशित शिक्षा के कार्यान्वयन में अध्यापक शिक्षा एक महत्वूर्ण घटक है। (एन्सको, 2005, बूथ एट.एफ. 2003)

भारत में सामान्य अध्यापक शिक्षा के लिए डिप्लोमा और डिग्री कोर्सेस देश भर में फैले हैं, उसमें एक ऐच्छिक पेपर 'विशेष आवश्यकता' होता है जिसका उद्देश्य होता है कि विकलांगता को पहचानने एवं निदान करने के लिए अध्यापकों को तैयार करना। फिर भी यह प्रशिक्षण का अनिवार्य भाग नहीं होता, तथा

यह अध्यापक को यह प्रशिक्षण नहीं देता है कि विभिन्नताओं के साथ कैसे व्यवहार किया जाय तथा विकलांग के प्रति नाकारात्मक मनोवृत्ति को कैसे समाज से हटाया जाय। (सिंगल, 2005)

अध्यापक शिक्षा के ऐसे तरीके ही विशेष आवश्यकता वाले बच्चे को सामान्य बच्चे से भिन्न कर देते हैं, तथा यह धारणा बन जाती है कि ऐसे बच्चों को वही अध्यापक पढ़ा सकते हैं जो विशेषतः ऐसे बच्चों को पढ़ाने के लिए प्रशिक्षण लिये हैं।

इस बात के प्रमाण हैं कि बहुत सारे शिक्षक यह महसूस करते हैं कि वे विशेष आवश्यकता वाले बच्चों को पढ़ाने में सक्षम नहीं है, तथा उन्हें इन बच्चों को पढ़ाने के लिए कुछ और समय चाहिए। (मुखोपाध्याय, 2005)

अतः अगर समावेशित शिक्षा का सफलतापूर्वक संचालन करना है, तो सामान्य अध्यापक के प्रशिक्षण के कोर्स में विशेष आवश्यकता वाले बच्चों के बारे में विस्तृत जानकारी देनी होगी, तथा उन्हें ऐसे प्रशिक्षित करना होगा कि उन्हें ही ऐसे बच्चों को पढ़ाना है कोई अलग अध्यापक विशेष प्रशिक्षण लेकर नहीं आयेगा।

4.8.6 शोध से सम्बन्धित मुद्दे

किसी भी क्षेत्र में शोध से ही पता चलता है कि उस क्षेत्र में कितना काम हो चुका है, और कितना बाकी है। परन्तु भारत में समावेशित शिक्षा में प्रयोगाश्रित एवं शैक्षिक शोध की बहुत कमी है। यह अभी प्राथमिक स्टेज पर है (सिंगल, 2005), अतः समावेशित शिक्षा में क्या कार्य करना है, इसकी सही जानकारी नहीं मिल पाता है।

समावेशित शिक्षा के बारे में सूचनाओं का ना होना यह सुझावित करता है कि भारत में समावेशित शिक्षा के प्रभाव एवं कार्यान्वन के क्षेत्र में शोध की भीषण जरूरत है। (डायर, 2000)

विकलांग, बच्चों की जनसंख्या कितनी है, इसका पता सिर्फ सर्वे एवं जनगणना के आधार पर होता है। इसमें घर के मुखिया से ही पुछा जाता है कि उसके घर में कोई विकलांग बच्चा है अथवा नहीं, हो सकता है कि मुखिया अपने बच्चे की विकलांगता छिपाने के लिए झूठ बोले। अतः विकलांग बच्चों की सही संख्या ही पता नहीं चल पायेगी, तो फिर उनके लिए उपाय या नीतियाँ बनाने का तो सवाल ही नहीं उठता है।

उपर्युक्त बातों से यह निश्चित हो गया है कि अगर विशेष आवश्यकता वाले बच्चों को समावेशित शिक्षा में अच्छी शिक्षा देनी है तो शोध के माध्यम से समस्याओ एवं उनके समाधान खोजने की अत्यन्त आवश्यकता है।

अभ्यास प्रश्न 6:

सत्य/असत्य बताइए:-

1. समाज से संबंधित मुद्दे समावेशित शिक्षा में कोई मायने नहीं रखते हैं।
2. भारत में समावेशित शिक्षा नहीं आया है।
3. भारत सरकार ने समावेशित शिक्षा के लिए कोई नीति नहीं बनाई है।
4. भारत में शिक्षा संयुक्त रूप से केन्द्र एवं राज्य की जिम्मेदारी है।
5. समावेशित शिक्षा में कुछ विशेष आवश्यकता वाले बच्चों के लिए पाठ्यक्रम में परिवर्तन की आवश्यकता नहीं पड़ती है।

4.9 सारांश

इस इकाई में हमने पढ़ा कि समावेशित शिक्षा का प्रारम्भ सन् 1994 में सलमानका सम्मेलन के बाद हुआ। समावेशित शिक्षा का अर्थ होता है कि विभिन्न प्रकार के बच्चों की एक साथ शिक्षा अर्थात सामान्य बच्चे एवं विशेष आवश्यकता वाले बच्चे। फिर हमने समावेशित शिक्षा के आवश्यकता एवं महत्त्व पर चर्चा करते हुए इसके दर्शन एवं सिद्धान्त को समझा। फिर हमने देखा कि समावेशित शिक्षा किस प्रकार विशेष आवश्यकता वाले बच्चों, सामान्य बच्चों, सामान्य शिक्षक एवं माता-पिता के लिए लाभदायक है। अंत हमने समावेशित शिक्षा में आने वाले विभिन्न मुद्दों की चर्चा की।

4.10 शब्दावली

समावेशित शिक्षा: सामान्य बच्चों एवं विशेष आवश्यकता वाले बच्चों की एक साथ शिक्षा।

विशेष आवश्यकता वाले बच्चे: वे बच्चे जिनकी आवश्यकतायें सामान्य बच्चों से अलग हों जैसे- दृष्टिबाधित बच्चे, श्रवणबाधित बच्चे, मानसिक मंद बच्चे, अस्थि विकलांग बच्चे इत्यादि।

अवांछित व्यवहार: जो व्यवहार सामाजिक रूप से ठीक नहीं अर्थात जो अच्छा व्यवहार ना हो।

अनुकरणीय व्यवहार: जो व्यवहार इतना अच्छा हो कि उसे दुसरे लोग अनुकरण कर सकें।

मनोवृत्ति: मन में किसी के प्रति विचार रखना यह विचार नकारात्मक भी हो सकता तथा सकारात्मक भी हो सकता है।

विशेष विद्यालय: जहाँ एक प्रकार के विशेष आवश्यकता वाले बच्चे पढ़ते हैं, जैसे - दृष्टिबाधितों के लिए विशेष विद्यालय, मानसिक मंद बच्चों के लिए विशेष विद्यालय इत्यादि।

4.11 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

अभ्यास प्रश्न 1:-

1. सन् 1994 2. यूनेस्को

अभ्यास प्रश्न 2:-

1. असत्य 2. असत्य

अभ्यास प्रश्न 3:-

1. असत्य 2. सत्य

अभ्यास प्रश्न 4:-

1. जीना 2. समुदाय की

अभ्यास प्रश्न 5:-

1. द 2. स 3. द

अभ्यास प्रश्न 6:-

1. असत्य 2. असत्य 3. असत्य

4. सत्य 5. सत्य

4.12 संदर्भ ग्रन्थ सूची

ऐन्सको, एम. (2005) फ्राम स्पेशल एडुकेशन टू इफेक्टीव स्कूल फॉर आल, कीनोट प्रजेनटेशन एट द इन्क्लूसिव एण्ड सर्पोटिव एडुकेशन कांग्रेस 2005, यूनिवर्सिटी ऑफ स्ट्रेथक्लेड, ग्लासो।

बूथ, टी. के एण्ड स्ट्रामस्टैड, एम. (2003). डेवलपिंग इन्क्लूसिव टीचर एडुकेशनः ड्राइंग द बुक टुगेदर। लंदनः रोटलेज फलेमर।

फोरेस्ट, एम. एण्ड पीयरप्वांट, जे. (2004). ‘‘इन्कूजन! द बिर पिक्चर’’ वेबसाइट http://www.inclusion.com/artbiggerpicture.html से लिया।

‘‘बेनेफिट्स ऑफ इन्क्लूसिव क्लासरूम फॉर आल’’ (1999). वेबसाइट http://www.uni.edu/coe/inclusion/philosophy/benefite.html से लिया।

डायर, सी (2002), आपरेशन ब्लैक बोर्ड . पॉलिसी इम्फ्लीमेंटशन इन इंडियन एलिमेंट्री एडुकेशन। आक्सफोर्डः सीमपोजियम बुक्स।

जी. ओ. आई. (2000). इंडियाः एडुकेशन फॉर आल इयर 2000 असेसमेंट, एम. एच. आर. डी. नई दिल्लीः गर्वनमेंट ऑफ इंडिया एण्ड एन. आइ. ई. पी. ए.।

जुलका ए (2005). एडुकेशनल प्रोविजनस एण्ड प्रेक्टिसेस फॉर लरनरस विद डीसेबेलटीसज इन इंडिया, पेपर प्रजेन्टेड एट द इन्क्लूसिव एण्ड सुर्पोटिव एडुकेशन कांग्रेस 2005, यूनिवर्सिटी ऑफ स्ट्रेथक्लेड, ग्लासो।

मुखोपाध्याय, एस. एण्ड मनी, एम. एन. जी. (2002). एडुकेशन ऑफ चिल्ड्रेन विद स्पेशल नीड्स। नई दिल्लीः आक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।

मुखोपाध्याय, एस. (2005). रीथिंकिंग एबाउट इन्क्लूसनः इमर्जिंग एरिया फॉर पॉलिसी रिसर्च, नई दिल्लीः न्यूपा

‘‘रेशलन फॉर एण्ड बेनेफिट्स ऑफ इन्क्लूसन’’ (2004). वेबसाइट http://www.inclusion.com/artbiggerpicture.html से लिया।

सिंगल, एन. (2005). रेसपांडिंग टू डिफरेन्सः पॉलिसिज टू सर्पोट इन्क्लूसिव एडुकेशन इन इंडिया, पेपर प्रजेन्टेड एट द इन्क्लूसिव एण्ड सर्वोटिव एडुकेशन कांग्रेस 2005, यूनिवर्सिटी ऑफ स्टेथक्लेड, ग्लासो।

थॉमस पी. (2005). में नस्ट्रीमिंग डीसएबिलिटी इन डेवलपमेंट: इंडिया कंट्री रिर्पोट। लंदन: डिसएबिलिटी नालेज एण्ड रीसर्च। वेबसाइट http://disasilitykar.net/research/pol_india/html से लिया।

वूड, जे. (1993). में नस्ट्रीमिंग: ए प्रेक्टिकल अप्रोच फॉर टीचर्स। न्यू जर्सी: में रील पब्लिशिंग कम्पनी।

4.13 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री

पांडा, के. सी. (1997). ''एजुकेशन ऑफ एक्सेपसनल चिल्ड्रेन'' नई दिल्ली: विकास पब्लिशिंग एण्ड डिस्ट्रब्यूटर्श।

गोविन्द राव, एल. (2007), पर्सपेक्टिव ऑन स्पेशल एडुकेशन: हैदराबाद: नीलकलम पब्लिकेशन।

4.14 निबंधात्मक प्रश्न

1. समावेशित शिक्षा से आप क्या समझते हैं? इसके आवश्यकता एवं महत्त्व की व्याख्या करें।
2. एकीकृत शिक्षा क्या है? यह समावेशित शिक्षा से किस प्रकार भिन्न है?
3. समावेशित शिक्षा के दर्शन एवं सिद्धान्त पर एक लेख लिखें।
4. समावेशित शिक्षा से लाभांवित होने वाले लोगों के लाभों की विस्तारपूर्वक चर्चा करें।
5. समावेशित शिक्षा के विभिन्न मुद्दों का वर्णन करें।

इकाई 5: मुक्त व दूरवर्ती शिक्षा का अर्थ, उद्देश्य और विशेषताएं (Meaning, Objectives and characteristics of Open and Distance Education)

इकाई की रूपरेखा:-

5.1 प्रस्तावना

5.2 उद्देश्य

5.3 दूरवर्ती शिक्षा

5.4 दूरवर्ती शिक्षा की परिभाषाएँ

5.5 दूरवर्ती शिक्षा के आधारभूत तत्व

5.6 दूरवर्ती शिक्षा की विशेषताएँ

5.7 दूरवर्ती शिक्षा की आवश्यकता

5.8 सारांश

5.9 शब्दावली

5.10 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

5.11 संदर्भ ग्रंथ सूची/सहायक/उपयोगी पाठ्यसामग्री

5.12 निबंधात्मक प्रश्न

5.1 प्रस्तावना:

जैसा कि आप सभी जानते है कि परम्परागत शैक्षिक व्यवस्था में शिक्षक एवं शिक्षार्थी के मध्य पाठ्यक्रम के सापेक्ष अन्तक्रिया होती है ताकि शिक्षा के उद्देश्य की प्राप्ति सम्भव हो सके। परन्तु वर्तमान में यह अन्तक्रिया ही शैक्षिक उद्देश्यों की प्राप्ति का एकमात्र साधन नहीं है। दूरवर्ती शिक्षा के शिक्षार्थी होने के कारण आप शिक्षा के अन्य गैरपरम्परागत साधनों से परिचित हो गये होंगे तथा आपकी यह धारणा बदल गई होगी कि सीखने-सीखाने के लिए शिक्षक तथा शिक्षार्थी का प्रत्यक्ष सम्पर्क तथा अन्तःक्रिया होना आवश्यक है। वर्तमान में दूरवर्ती शिक्षा प्रणाली एक स्वतंत्र एवं आवश्यक शिक्षा प्रणाली बन चुकी है। दूरवर्ती शिक्षा एक ऐसा नवाचार है जिसके द्वारा समाज की निरन्तर बढ़ती हुई शैक्षिक आवश्यकताओं की पूर्ति होती है। प्रस्तुत इकाई में हम दूरवर्ती शिक्षा के अर्थ, परिभाषा तथा अन्य संबंधित पक्षों की चर्चा करेंगे।

5.2 उद्देश्य:

इस इकाई का अध्ययन करने के पश्चात् आप इस योग्य हो जाएंगें कि

- दूरवर्ती शिक्षा का अर्थ समझ सकेंगे।
- दूरवर्ती शिक्षा को परिभाषित कर सकेंगे।
- दूरवर्ती शिक्षा के विभिन्न तत्वों की व्याख्या कर सकेंगे।
- दूरवर्ती शिक्षा की विशेषताओं से परिचित हो सकेंगे।

5.3 दूरवर्ती शिक्षा

दूरवर्ती शिक्षा, एक गैरप्रचलित एवं अपरम्परागत नवाचारी उपागम है क्योंकि इसके मापदण्ड, उपागम तथा प्रविधियाँ परम्परागत प्रणाली से भिन्न हैं। यह शिक्षा की ऐसी व्यवस्था है, जिसमें शिक्षक तथा शिक्षार्थी एक दूसरे से भौगोलिक दृष्टि से दूर रहकर विभिन्न संचार माध्यमों एवं मुद्रित सामग्रियों के प्रभावशाली सम्प्रेषण द्वारा शिक्षा प्राप्त करते हैं। इस शिक्षा व्यवस्था में विद्यालय अथवा किसी औपचारिक शिक्षा संस्थानों में कक्षा कक्षों में आमने सामने बैठकर शिक्षा देने के स्थान पर मुद्रित सामग्रियों के माध्यम से शिक्षा दी जाती है। इस व्यवस्था में अध्यापक की भूमिका औपचारिक शिक्षा संस्थानों अथवा विद्यालयों में कार्य करने वाले शिक्षकों से भिन्न होती है। इस शिक्षा प्रणाली में शिक्षा भाषण अथवा व्याख्यान के माध्यम से नहीं दी जाती है बल्कि शिक्षकों द्वारा विशेष प्रकार के संवाद की नितांत अनौपचारिक भाषा में तैयार की गई मुद्रित सामग्रियों के द्वारा शिक्षार्थी को स्वतः अध्ययन में सहायता प्रदान की जाती है। इस शिक्षा प्रणाली में शिक्षण के स्थान पर विद्यार्थी के सीखने पर अधिक बल दिया जाता है। यह शिक्षा व्यवस्था शिक्षार्थियों को किसी भी प्रकार के कठोर नियमों, समय की सीमाओं में नहीं बांधती है, बल्कि उन्हें अवसर देती है कि वे अपनी क्षमता, सुविधा एवं परिस्थिति के अनुसार शिक्षा प्राप्त कर सके।

5.4 दूरवर्ती शिक्षा: परिभाषाएँ

दूरवर्ती शिक्षा को परिभाषित करने के अनेक प्रयास किये गये हैं तथा निरन्तर किये जा रहे है। विभिन्न विचारकों ने अपने ज्ञान, समझ तथा दृष्टिकोण से दूरवर्ती शिक्षा को परिभाषित किया है। परन्तु अभी भी ऐसी परिभाषा जो कि सर्वमान्य हो तथा दूर शिक्षा के समस्त गुणों से युक्त हो नहीं दी गई है। विभिन्न विचारकों द्वारा दी गई परिभाषाओं में अन्तर का प्रमुख कारण उनके द्वारा दूरवर्ती शिक्षा के किसी एक पहलू अथवा गुण पर ही अत्याधिक बल देना है। आगे दूरवर्ती शिक्षा की कुछ प्रमुख परिभाषाएँ प्रस्तुत की गई हैं जो दूरवर्ती शिक्षा का व्यापक प्रस्तुत करती है।

बोर्जी होमबर्ग (1981) ने दूरवर्ती शिक्षा को परिभाषित करते हुए कहा है कि यह इस प्रकार की शिक्षा है जिसमें शिक्षा के विभिन्न स्तरों पर अध्ययन के विभिन्न प्रकार, उन विद्यार्थियों के लिए जो शिक्षकों

के निरन्तर एवं तुरन्त निरीक्षण में कक्षाओं में नहीं होते है, परन्तु किसी भी प्रकार से सामान्य शैक्षणिक संस्थाओं के नियोजन, निर्देशन एवं शिक्षण के समान ही लाभांवित होते है।

होमबर्ग की परिभाषा की एक प्रमुख विशेषता दूरस्थ शिक्षा को एक संगठित शैक्षिक कार्यक्रम के रूप में प्रकट करना है।

डोहमेंन (1977) ने दूरस्थ शिक्षा को परिभाषित करते हुए स्पष्ट किया है कि दूरवर्ती शिक्षा स्व अध्ययन का एक विधिवत् संगठित रूप है जिसमें छात्र परामर्श, अधिगम सामग्री का प्रस्तुतीकरण तथा छात्रों की सफलता का सुनिश्चितीकरण एवं निरीक्षण अध्यापकों के एक समूह द्वारा किया जाता है तथा जिसमें प्रत्येक अध्यापक का अपना उत्तरदायित्व होता है। संचार माध्यमों के द्वारा बहुत दूर रहने वाले विद्यार्थियों के लिए इसे सम्भव बनाया जाता है। डोहमें न की यह परिभाषा ''स्व अध्ययन'' के महत्व पर बल देती है। साथ ही डोहमें न ने दूरवर्ती शिक्षा में संचार माध्यमों के प्रयोग द्वारा दूर-दूर स्थित विद्यार्थियों तक इस शिक्षा की पहुँच को महत्व प्रदान किया है।

दूरवर्ती शिक्षा की विशेषताओं के प्रति मूरे बहुत स्पष्ट हैं, इन्होंने दूरवर्ती शिक्षा को परिभाषित करते हुए कहा है कि ''दूरवर्ती शिक्षा को अनुदेशन विधियों के समूह के रूप में परिभाषित किया जा सकता है जिसमें शिक्षण व्यवहार, अधिगम व्यवहार से अलग संपादित किये जाते हैं। इसमें अधिगमकर्ता की उपस्थिति में सम्पन्न होने वाली क्रियायें भी सम्मिलित होती हैं। साथ ही शिक्षक तथा शिक्षार्थी के मध्य सम्प्रेषण को मुद्रित सामग्री, इलैक्टॉनिक्स, यांत्रिक एवं अन्य साधनों से सुगम बनाया जाता है।

मूरे की उपरोक्त परिभाषा में दूरवर्ती शिक्षा की तीन विशेषताएँ स्पष्ट होती हैं।

1- शिक्षण व्यवहार, अधिगम व्यवहार से पृथक होता है अर्थात् पत्राचार पाठ्यक्रम।

2- अधिगमकर्ता की उपस्थिति में सम्पन्न होने वाली क्रियाएँ भी सम्मिलित होती हैं- अर्थात् सम्पर्क कार्यक्रम।

3- शिक्षक तथा शिक्षार्थी के मध्य सम्प्रेषण को मुद्रित सामग्री, इलैक्ट्रॉनिक्स, यांत्रिक एवं अन्य साधनों से सुगम बनाया जाता है- अर्थात् दृश्य-श्रव्य सामग्री का प्रयोग किया जाता है

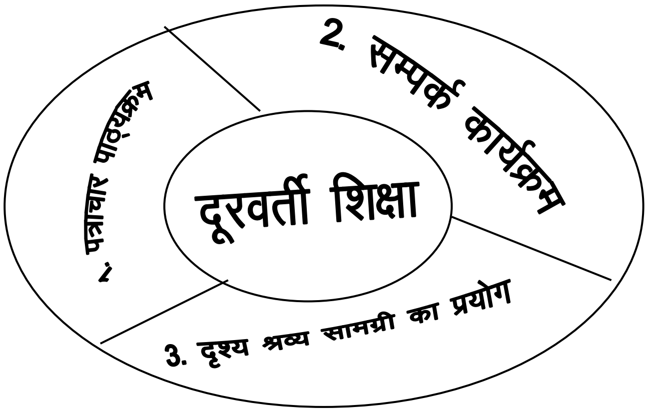

मुरे के अनुसार दूरवर्ती शिक्षा

वेडमेंयर ने दूरवर्ती शिक्षा सम्बन्धी अपने कार्यों में मुक्त अधिगम, दूरवर्ती शिक्षा तथा स्वतंत्र अध्ययन जैसे शब्दों का प्रयोग किया है। परन्तु उसने ''स्वतंत्र अध्ययन'' शब्द को ही अधिक महत्व दिया है।

वेडमें यर ने स्वतंत्र अध्ययन को परिभाषित करते हुये कहा है कि ''स्वतंत्र अध्ययन'' के अन्तर्गत विभिन्न प्रकार की शिक्षण अधिगम व्यवस्थाओं का समावेश होता है जिसमें शिक्षक एवं शिक्षार्थी, अपने-अपने अनिवार्य कार्यों तथा उत्तरदायित्वों का निर्वहन एक-दूसरे से अलग रहकर पूर्ण करते हैं तथा सम्प्रेषण के विविध साधनों का प्रयोग करते हैं। इसका उद्देश्य शिक्षार्थियों को स्कूली परिसर के अनुपयुक्त स्थानों अथवा प्रारूपों से मुक्त रखना, विद्यालय के बाहर के शिक्षार्थियों को अपने वातावरण में अध्ययन करने के अवसर प्रदान करना और सभी शिक्षार्थियों में स्वतः निर्देशित अधिगम के द्वारा आगे बढ़ने की क्षमता का विकास करना है जैसे कि शिक्षित व्यक्ति से परिपक्वता की अपेक्षा की जाती है।

वेडमें यर की उपरोक्त परिभाषा में दो प्रकार के स्वतंत्र अध्ययन का उल्लेख किया गया है। प्रथम वे शिक्षार्थी जो नियमित रूप से कक्षाओं में नहीं जाना चाहते तथा द्वितीय वे शिक्षार्थी जो विद्यालय में नहीं हैं तथा किसी तरह स्वयं अध्ययन करते हैं।

कीगन (1986) ने दूरवर्ती शिक्षा को व्यापक रूप से परिभाषित करते हुए कहा है कि यह शिक्षा का वह रूप है जिसमें अधिगम प्रक्रिया में पूरे समय शिक्षक एवं शिक्षार्थी का पृथककरण होता है, नियोजन तथा अधिगम

सामग्री को तैयार करने तथा छात्रों की सहायता सेवा पर शैक्षिक संगठन का प्रभाव होता है। तकनीकी माध्यमों, छपी हुई सामग्री, दृश्य-श्रव्य माध्यम शिक्षक तथा शिक्षार्थी में सम्पर्क बनाते हैं और पाठ्यक्रम को आगे बढ़ाते हैं।

अभ्यास प्रश्न:

क) अपने उत्तर को नीचे दिए गए स्थान में लिखिए।

ख) अपने उत्तर को इकाई के अंत में दिए गए उत्तर के साथ मिलाइए।

1. किस विचारक ने दूरवर्ती शिक्षा को स्व अध्ययन तथा संचार माध्यमों का सम्मिश्रण कहा है?

----

2. किस विचारक ने दूरवर्ती शिक्षा को एक संगठित शैक्षिक कार्यक्रम के रूप में परिभाषित किया है।

3.वेडमें यर के अनुसार स्वतंत्र अध्ययन के कौन-कौन से प्रकार हैं?

5.5 दूरवर्ती शिक्षा के आधारभूत तत्व:

दूरवर्ती शिक्षा संरचना एवं संगठन की दृष्टि से एक विस्तृत एवं व्यापक शिक्षा प्रणाली है। इसकी गतिविधियों एवं क्रियाकलापों के आधार पर इसकी संरचना को जाना जा सकता है। दूरवर्ती शिक्षा के प्रमुख आधारभूत तत्व निम्नलिखित हैं -

1- मुद्रित सामग्री - मुद्रित सामग्री के अन्तर्गत पुस्तकें, पत्र-पत्रिकाएँ तथा स्व- अनुदेशात्मक अधिगम सामग्री आदि सम्मिलित किए जाते है। यह मुद्रित सामग्री दूरवर्ती शिक्षा की अधिगम व्यूह रचना का सर्वाधिक

महत्वपूर्ण अंग है। सामान्यतया दूरवर्ती शिक्षा की समस्त शिक्षण अधिगम प्रक्रिया मुद्रित सामग्री पर आधारित होती है। मुद्रित सामग्री का निर्माण प्रायः विषय विशेषज्ञों द्वारा किया जाता है। वस्तुतः अब आपको स्पष्ट हो ही गया होगा कि आप जो अध्ययन सामग्री पढ़ रहे हैं उसे मुद्रित सामग्री के अन्तर्गत वर्गीकृत किया जाता है।

2- श्रृव्य - दृश्य सामग्री - इसमें फिल्म, स्लाइड, चलचित्र तथा श्रृव्य-दृश्य कैसेट आदि सम्मिलित किये जाते हैं। ये सामग्री अप्रत्यक्ष शिक्षण का माध्यम है।

3- रेडियो एवं दूरदर्शन - दूरवर्ती शिक्षा में जनसंचार के प्रमुख माध्यम रेडियो तथा दूरदर्शन का उपयोग अधिगम सामग्री संबंधी, सहायता तथा छात्र सहायक सेवा के माध्यम के रूप में किया जाता है, जिनकी सहायता से शिक्षार्थी घर बैठे हुए ही विषय से सम्बन्धी ज्ञान प्राप्त कर सकता है। इन माध्यमों में समय-समय पर विभिन्न कार्यक्रमों जैसे टेली कान्फ्रेसिंग तथा अन्तक्रियात्मक मार्गदर्शन के माध्यम से शिक्षार्थी अपनी जिज्ञासा शान्त कर सकता है।

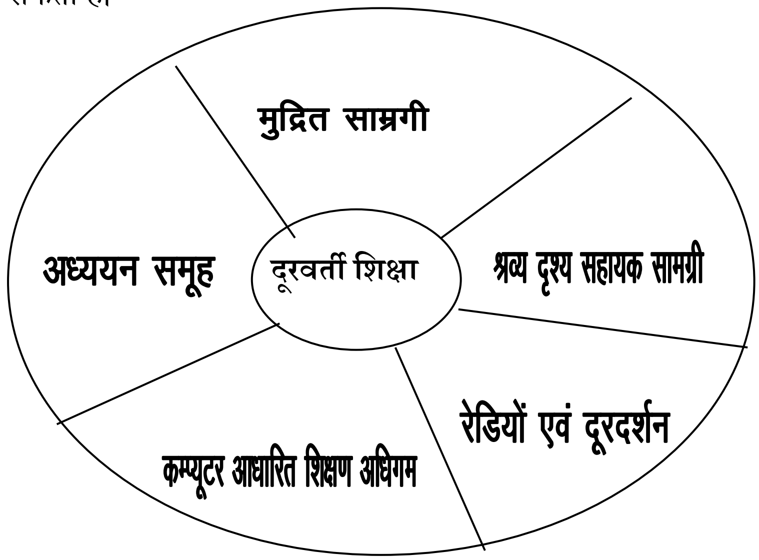

4- कम्प्यूटर आधारित शिक्षण अधिगम - दूरवर्ती शिक्षा में कम्प्यूटर अधिगम का एक प्रभावी माध्यम है। कम्प्यूटर शिक्षार्थी को अपने अध्ययन से संबंधी समस्त सूचनाओं की प्राप्ति का एक प्रबल माध्यम है। जिसकी सहायता से शिक्षार्थी अपने अध्ययन कार्यक्रम में प्रवेश से लेकर परिणाम तक की समस्त सूचनाएँ प्राप्त कर सकता है तथा आवश्यकता पड़ने पर ईमें ल के माध्यम से अपनी जिज्ञासा संबंधी प्रश्न पूछ सकता है।

5- अध्ययन समूह - सम्पर्क कार्यक्रमों तथा काउन्सलिंग के समय, अध्ययन केन्द्रों पर शिक्षार्थी अपने विषय तथा संबंधी विषयों के अन्य शिक्षार्थियों से अनौपचारिक रूप से आमने सामने अपनी कठिनाइयों के संबंध में विचार विमर्श करते हैं तथा समान आधार पर निष्कर्षों पर पहुंचते हैं। दूरवर्ती शिक्षा में इस प्रकार के अध्ययन

समूह, शिक्षार्थियों के अभिप्रेरणा स्रोत के रूप में कार्य करते हैं तथा समस्याओं के वास्तविक समाधान में सहायता करते हैं।

उपरोक्त समस्त तत्व मिलकर दूरवर्ती शिक्षा की संरचना का खाका तैयार करते हैं जिसे सामान्यतया दूरवर्ती शिक्षण अधिगम प्रणाली कहा जाता है तथा इस कार्यप्रणाली का व्यावहारिक रूप मुक्त विश्वविद्यालयों के नाम से जाना जाता है। भारत में दूरवर्ती शिक्षा के प्रचार प्रसार के लिए राष्ट्रीय स्तर पर इन्दिरा गाँधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय की स्थापना 1985 में की गई है। जो अपने 67 क्षेत्रीय केन्द्रों तथा सैकड़ों अध्ययन केन्द्रों के विशाल नेटवर्क के माध्यम से सम्पूर्ण देश में दूरवर्ती शिक्षा का प्रसार कर रहा है। इसके साथ ही समय समय पर विभिन्न राज्य सरकारों द्वारा राज्य मुक्त विश्वविद्यालयों की स्थापना की गई है। कुछ प्रमुख राज्य मुक्त विश्वविद्यालय इस प्रकार से हैं -

1. राजर्षि टन्डन मुक्त विश्वविद्यालय, उत्तरप्रदेश।
2. मध्यप्रदेश भोज मुक्त विश्वविद्यालय, मध्यप्रदेश।
3. नालन्दा मुक्त विश्वविद्यालय, बिहार।
4. के.के. हाडिंक राज्य मुक्त विश्वविद्यालय, आसाम।
5. वर्धमान महावीर मुक्त विश्वविद्यालय, राजस्थान।
6. कर्नाटक राज्य मुक्त विश्वविद्यालय, कर्नाटक।
7. तमिलनाडु राज्य मुक्त विश्वविद्यालय, तामिलनाडु।
8. यशंवत राव चव्हाण महाराष्ट्र राज्य मुक्त विश्वविद्यालय, महाराष्ट्र।
9. डॉ. बी.आर. अम्बेडकर मुक्त विश्वविद्यालय, आन्ध्रप्रदेश।
10. डॉ. बाबा साहब अम्बेडकर मुक्त विश्वविद्यालय, गुजरात।
11. ग्लोबल मुक्त विश्वविद्यालय, नागालैण्ड।
12. नेताजी सुभाष मुक्त विश्वविद्यालय, पश्चिमी बंगाल

अभ्यास प्रश्न

2. दूरवर्ती शिक्षा के आधारभूत तत्व कौन-कौन से हैं ?

----

3. अध्ययन समूहों की प्रकृति कैसी होती है ?

5.6 दूरवर्ती शिक्षा की विशेषताएँ

विभिन्न विद्वानों द्वारा दी गई दूरवर्ती शिक्षा की परिभाषा का विश्लेषण करने पर दूरवर्ती शिक्षा की विशेषताएँ स्पष्ट होती हैं। दूरवर्ती शिक्षा की कुछ प्रमुख विशेषताएँ निम्न प्रकार से हैं -

1- दूरवर्ती शिक्षा की प्रमुख विशेषता शिक्षक तथा छात्र के मध्य की दूरी है। यह विशेषता इसे शिक्षण की आमने-सामने की परम्परागत तथा मौखिक शब्द संचार प्रक्रिया से अलग करती है।

2- दूरवर्ती शिक्षा एक सुनियोजित एवं सुसंगठित शैक्षिक व्यवस्था है, जिसमें अधिगम सामग्री जिसे स्व अनुदेशनात्मक सामग्री के रूप में जाना जाता है, के नियोजन एवं निर्माण पर शैक्षिक संगठन का व्यापक प्रभाव होता है। फलस्वरूप सामग्री की गुणवत्ता उच्च स्तर की होती है।

3- दूरवर्ती शिक्षा, शिक्षार्थी केन्द्रित शैक्षिक प्रक्रिया है। जिसमें शिक्षार्थी की आवश्यकता तथा सुविधाओं का ध्यान रखा जाता है। शिक्षार्थी को अपनी सुविधा, गति तथा स्थान पर सीखने के अवसर प्रदान किये जाते हैं।

4- दूरवर्ती शिक्षा में शिक्षार्थी को अपनी पसन्द के विषय चुनने की स्वतंत्रता रहती है।

5- दूरवर्ती शिक्षा में विभिन्न तकनीकी माध्यमों यथा रेडियो, टेलीविजन, मुद्रित सामग्री, टेलीफोन, कम्प्यूटर आदि का प्रयोग शिक्षार्थियों तक अधिगम सामग्री पहुँचाने तथा छात्र सहायक सेवाओं के एक प्रबल माध्यम के रूप में किया जाता है।

6- दूरवर्ती शिक्षा उन व्यक्तियों के लिए एक वरदान है जो किन्ही कारणोंवश परम्परागत शैक्षिक माध्यमों से शिक्षा प्राप्त करने में असमर्थ हैं अथवा ऐसे व्यक्ति जो अपने पारिवारिक दायित्वों की पूर्ति के लिए किन्ही व्यवसायों से जुड़ गये हैं परन्तु अपने व्यवसायिक विकास अथवा योग्यता विकास के लिए शिक्षा प्राप्त करने की आवश्यकता अनुभव करते हैं।

7- दूरवर्ती शिक्षा की एक विशेषता इसके लचीलेपन में निहित है। इसमें शिक्षार्थी को प्रवेश लेने, अध्ययन करने तथा अपने पाठ्यक्रम को पूरा करने के कठोर नियमों में बांधकर नहीं रखा जाता है। दूरवर्ती शिक्षा में प्रवेश लेने के लिये सामान्यतया कोई आयु सीमा नहीं होती (न्यूनतम आयु सीमा को छोड़कर), शिक्षार्थी अपनी सुविधानुसार पाठ्यक्रम पूरा कर सकता है, पाठ्यक्रम पूरा करने के लिए शिक्षार्थी को 1 वर्ष में दो बार परीक्षा में बैठने का अवसर दिया जाता है।

8- दूरवर्ती शिक्षा उस विशिष्ट जनसंख्या वर्ग को भी शैक्षिक सुविधा प्रदान करती है जो कि भौगोलिक कारणों, अपर्याप्त शैक्षिक सुविधाओं एवं व्यावसायिक शर्तों के कारण पहले शिक्षा से वंचित रह गये हैं।

9- दूरवर्ती शिक्षा परम्परागत् शिक्षण में लगने वाली प्रति विद्यार्थी धनराशि तथा विद्यार्थी की स्वयं अपने अध्ययन पर लगने वाली धनराशि में कमी लाती है। अतएव कहा जा सकता है कि दूरवर्ती शिक्षा द्वारा कम व्यय में शैक्षिक अवसरों की उपलब्धता सुनिश्चित की जाती है।

10- दूरवर्ती शिक्षा में द्विमार्गी सम्प्रेषण की व्यवस्था रहती है। इसके अन्तर्गत शिक्षक व शिक्षार्थी के मध्य की दूरी को सम्प्रेषण के विभिन्न परम्परागत् तथा आधुनिक माध्यमों के उपयोग से कम किया जाता है। शिक्षार्थी विभिन्न माध्यमों का उपयोग कर अपने प्रश्न तथा जिज्ञासाएं, पाठ्यक्रम समन्वयक एवं अकादमिक परामर्शदाताओं के सम्मुख रखते हैं तथा उचित पृष्ठपोषण प्राप्त करते हैं।

11- दूरवर्ती शिक्षा, एक प्रकार का विशिष्ठ औद्योगिक विकास है जिसके फलस्वरूप शिक्षा की प्रक्रिया में खुलापन आया है तथा शिक्षा विशिष्ठ समाज की आवश्यकताओं की पूर्ति में सफल हुई है।

12- दूरवर्ती शिक्षा का सम्प्रत्यय लोकतांत्रिक विचार से युक्त होता है अर्थात् परम्परागत् शिक्षा में अन्तर्गत शिक्षक कक्षा कक्ष में जो भी मौखिक रूप से कहता है, वह बहुत कुछ उसके व्यक्तिगत विचार होते हैं तथा

केवल छात्रों तक ही सीमित रहते हैं। उसके विचारों की समीक्षा तथा संशोधन का प्रावधान नहीं होता है। दूसरी तरफ दूरवर्ती शिक्षा में स्वअनुदेशनात्मक सामग्री श्रव्य-दृश्य सहायक सामग्री एवं छात्र सहायक सेवाओं के माध्यम से जो भी सूचनाएं सम्प्रेषित की जाती हैं उनकी प्रकृति खुली होती हैं, जिसकी समीक्षा तथा समालोचना की जा सकती है एवं आवश्यकता पड़ने पर उसमें संशोधन भी किया जा सकता है कि दूरवर्ती शिक्षा, शैक्षिक प्रक्रिया के लोकतांत्रिक में काफी हद तक सफल रही है।

अभ्यास प्रश्न

4. दूरवर्ती शिक्षा की कोई एक प्रमुख विशेषता लिखिए ?

----

5. दूरवर्ती शिक्षा, किस प्रकार से शिक्षा के लोकतंत्रीकरण में सहायक सिद्ध हुई है?

5.7 दूरवर्ती शिक्षा की आवश्यकता

किसी राष्ट्र की प्रगति एवं विकास उसकी शिक्षा व्यवस्था एवं शिक्षित व्यक्तियों पर निर्भर करता है। वर्तमान में शिक्षा की अवधारणा बहुत व्यापक हो गई है, अब यह व्यक्ति एवं समाज के विकास की एक अनिवार्यता बन गई है। इसी कारण से अब शिक्षा को प्रत्येक व्यक्ति की आवश्यकताओं एवं सुविधाओं के अनुरूप बनाने पर बल दिया जा रहा है। गुणवत्तापूर्ण शिक्षा की बढ़ती हुई आवश्यकता के फलस्वरूप वर्तमान में विभिन्न नवाचारी माध्यमों से शिक्षा प्रदान करने एवं प्राप्त करने का प्रयास किया जा रहा है। दूरवर्ती शिक्षा एक ऐसा ही नवाचारी एवं बहुउपयोगी प्रकार है जो वर्तमान युग की शैक्षिक आवश्यकताओं की पूर्ति का एक सशक्त माध्यम बन गया है। दूरवर्ती शिक्षा को आवश्यकता को निम्न बिन्दुओं से स्पष्ट किया जा सकता है:-

1- दूरवर्ती शिक्षा ज्ञान व अधिगम के विभिन्न उपायों को बढ़ाती है।

2- दूरवर्ती शिक्षा, ऐसे व्यक्तियों को अध्ययन का द्वितीय अवसर प्रदान करती है जो किन्हीं कारणों से प्रथम अवसर में शिक्षा प्राप्त नहीं कर पाये हैं।

3- गुणवत्तापूर्ण शिक्षा प्रदान करने के सशक्त माध्यम के रूप में दूरवर्ती शिक्षा की आवश्यकता स्पष्ट होती है।

4- उच्च शिक्षा संस्थानों पर बढ़ते हुए छात्रों को दबाव को कम करने के लिए तथा कम खर्च व साधनों में सभी को शैक्षिक अवसरों की समानता प्रदान करने के लिए दूरवर्ती शिक्षा की आवश्यकता है।

5- शिक्षार्थियों की व्यक्तिगत विभिन्नताओं को ध्यान में रखते हुए, उनको अपनी गति तथा क्षमता के अनुसार शैक्षिक अवसर प्रदान करने के लिए दूरवर्ती शिक्षा आवश्यक है।

6- प्रौढ़ व्यक्तियों, सेवारत् व्यक्तियों, समाज सेवियों, महिलाओं तथा देश के दूरदराज के क्षेत्रों में रहने वाले व्यक्तियों की शैक्षिक आवश्यकता की पूर्ति दूरवर्ती शिक्षा करती है।

अभ्यास प्रश्न

6. दूरवर्ती शिक्षा की कोई दो आवश्यकताएं बताइये ?

5.8 सारांश

इस इकाई में हमने दूरवर्ती शिक्षा का अर्थ, परिभाषा, आवश्यकता, विभिन्न तत्व तथा विशेषताओं का अध्ययन किया है। आशा है आप दूरवर्ती शिक्षा से भली भांति परिचित हो गये होंगे।इस शिक्षा व्यवस्था में विद्यालय अथवा किसी औपचारिक शिक्षा संस्थानों में कक्षा कक्षों में आमने सामने बैठकर शिक्षा देने के स्थान पर मुद्रित सामग्रियों के माध्यम से शिक्षा दी जाती है। इस व्यवस्था में अध्यापक की भूमिका औपचारिक शिक्षा संस्थानों अथवा विद्यालयों में कार्य करने वाले शिक्षकों से भिन्न होती है। इस शिक्षा प्रणाली में शिक्षा भाषण अथवा व्याख्यान के माध्यम से नहीं दी जाती है बल्कि शिक्षकों द्वारा विशेष प्रकार के संवाद की नितांत अनौपचारिक भाषा में तैयार की गई मुद्रित सामग्रियों के द्वारा शिक्षार्थी को स्वतः अध्ययन में सहायता प्रदान की जाती है।

5.9 शब्दावली

दूरवर्ती शिक्षा : दूरवर्ती शिक्षा स्व अध्ययन का एक विधिवत् संगठित रूप है जिसमें छात्र परामर्श, अधिगम सामग्री का प्रस्तुतीकरण तथा छात्रों की सफलता का सुनिश्चितीकरण एवं निरीक्षण अध्यापकों के एक समूह द्वारा किया जाता है तथा जिसमें प्रत्येक अध्यापक का अपना उत्तरदायित्व होता है।

5.10 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1. डोहमें न

2. होमबर्ग

3. मुद्रित सामग्री, श्रृव्य - दृश्य सामग्री तथा रेडियो एवं दूरदर्शन

4. अध्ययन समूह, शिक्षार्थियों के अभिप्रेरणा स्रोत के रूप में कार्य करते हैं तथा समस्याओं के वास्तविक समाधान में सहायता करते हैं।

5. दूरवर्ती शिक्षा, शिक्षार्थी केन्द्रित शैक्षिक प्रक्रिया है। जिसमें शिक्षार्थी की आवश्यकता तथा सुविधाओं का ध्यान रखा जाता है। शिक्षार्थी को अपनी सुविधा, गति तथा स्थान पर सीखने के अवसर प्रदान किये जाते हैं।

6. दूरवर्ती शिक्षा में स्वअनुदेशनात्मक सामग्री श्रृव्य-दृश्य सहायक सामग्री एवं छात्र सहायक सेवाओं के माध्यम से जो भी सूचनाएं सम्प्रेषित की जाती हैं उनकी प्रकृति खुली होती हैं, जिसकी समीक्षा तथा समालोचना की जा सकती है एवं आवश्यकता पड़ने पर उसमें संशोधन भी किया जा सकता है।

7. दूरवर्ती शिक्षा, ऐसे व्यक्तियों को अध्ययन का द्वितीय अवसर प्रदान करती है जो किन्हीं कारणों से प्रथम अवसर में शिक्षा प्राप्त नहीं कर पाये हैं तथा उच्च शिक्षा संस्थानों पर बढ़ते हुए छात्रों को दबाव को कम करने के लिए तथा कम खर्च व साधनों में सभी को शैक्षिक अवसरों की समानता प्रदान करने के लिए दूरवर्ती शिक्षा की आवश्यकता है।

5.11 संदर्भ ग्रंथ सूची व सहायक/उपयोगी पाठ्यसामग्री

1. डॉ. सीयाराम यादव (2008): दूरवर्ती शिक्षा, अग्रवाल पब्लिकेशन,आगरा -2
2. आर.ए. शर्मा (1995): दूरवर्ती शिक्षा, आर.लाल बुकडिपो, में रठ
3. डॉ. कल्पलता पान्डेय (1991): शिक्षा के नये आयाम दूरवर्ती शिक्षा, विजय प्रकाशन मंदिर, वाराणसी

4. दूरवर्ती शिक्षा (2007): ई. एस. 364 खण्ड एक (दूरवर्ती शिक्षा) तथा खण्ड तीन (दूरवर्ती अधिगम) इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविधालय की बी.एड स्व अध्ययन सामग्री

5.12 निबंधात्मक प्रश्न

1. दूरवर्ती शिक्षा का अर्थ स्पष्ट करते हुए इसे परिभाषित कीजिए।
2. दूरवर्ती शिक्षा के विभिन्न तत्वों की व्याख्या कीजिए।
3. दूरवर्ती शिक्षा की विशेषताओं की व्याख्या कीजिए।

इकाई : 6 दूरवर्ती शिक्षार्थी: प्रकृति, विशेषतायें तथा प्रकार (Distance Learners: Charecteristics and Types of Learners)

इकाई की रूपरेखा:-

6.1 प्रस्तावना

6.2 उद्देश्य

6.3 दूरस्थ शिक्षा का अर्थ

6.4 दूरवर्ती शिक्षार्थी की प्रकृति

6.5 दूरवर्ती शिक्षार्थी की विशेषताएँ

6.6 दूरवर्ती शिक्षार्थियों के प्रकार

6.6 सारांश

6.7 शब्दावली

6.8 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

6.9 संदर्भ ग्रंथ सूची/सहायक/उपयोगी पाठ्यसामग्री

6.10 निबंधात्मक प्रश्न

6.1 प्रस्तावना

दूरवर्ती शिक्षा एक सुनियोजित एवं सुसंगठित शैक्षिक व्यवस्था है जिसमें परम्परागत् शैक्षिक व्यवस्था के विपरीत शिक्षक तथा शिक्षार्थी के मध्य दूरी विद्यमान रहती है। जिसमें शिक्षार्थी स्वअनुदेशनात्मक अधिगम सामग्री के माध्यम से अपनी आवश्यकता, सुविधा एवं गति से स्वअध्ययन करता है। शिक्षार्थी के इस स्वअध्ययन में विभिन्न तकनीकी माध्यमों जैसे रेडियो, टेलीविजन, टेलीफोन एवं कम्प्यूटर आदि का प्रयोग सहायता प्रदान करने के लिए किया जाता है। प्रस्तुत इकाई में दूरवर्ती शिक्षा के सर्वाधिक महत्वपूर्ण अंग शिक्षार्थी का अध्ययन करेंगे तथा दूरवर्ती शिक्षार्थी की प्रकृति, विशेषताओं तथा प्रकारों से परिचित हो सकेंगे।

6.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप इस योग्य हो जाएंगे कि -

- दूरवर्ती शिक्षार्थी की प्रकृति की व्याख्या कर सकेंगे।

- दूरवर्ती शिक्षार्थी की विशेषताओं का वर्णन कर सकेंगे।
- विभिन्न प्रकार के दूरवर्ती शिक्षार्थियों में विभेद कर सकेंगे।

6.3 दूरस्थ शिक्षा अर्थ

दूरस्थ शिक्षा' जैसा कि इसके शब्द से स्पष्ट होता है कि 'दूर' से 'स्थान' पर शिक्षा की व्यवस्था । दूरस्थ शिक्षा से तात्पर्य है कि सुदूर बैठकर शिक्षा प्राप्त करना। दूरस्थ शिक्षा वास्तव में मुक्त शिक्षा का ही एक रूप है। विविध पृष्ठभूमि वाले विविध भौगोलिक क्षेत्रों में बिखरे अधिगमकर्त्ताओं के हेतु दूरस्थ शिक्षा वरदान सिद्ध हुई है। इस शिक्षा में अधिगम प्रक्रिया शिक्षक द्वारा न होकर संचार माध्यमों द्वारा होती है। अधिगमकर्त्ता की स्वेच्छा और स्वक्रिया अधिक महत्त्वपूर्ण होती है। रम्परागत शिक्षा व्यवस्था में शिक्षक छात्र के निकट रहकर शिक्षा प्रदान करता है। इसके साथ ही इसके लिए एक विद्यालय इमारत, फर्नीचर, शैक्षिक उपकरण आदि की भी आवश्यकता होती है। ऐसे में अधिक जनसंख्या वाले देशों में सभी को संस्थागत परम्परागत व्यवस्था करना अत्यधिक कठिन हो जाता है।

अतः इस समस्या को दूर करने तथा सभी को शिक्षा प्रदान करने के लिए दूरस्थ शिक्षा की अवधारणा को अपनाया गया जिसे पहले पत्राचार शिक्षा (Correspondence Education) कहते थे। इसमें शिक्षक दूर होते हुए भी शिक्षा को सीखने वाले के द्वार पर भेजता है। इस प्रत्यय या अवधारणा को ही दूरस्थ शिक्षा कहते हैं।

दूरस्थ शिक्षा अनौपचारिक शिक्षा की आधुनिक प्रणाली है। इसमें शिक्षक तथा छात्र का प्रत्यक्ष सम्बन्ध नहीं होता है। दूरस्थ शिक्षा का शाब्दिक अर्थ है, दूर स्थित शिक्षा अर्था दूर रहते हुए शिक्षा प्राप्त करना। दूसरे शब्दों में शिक्षा देने वाले और शिक्षार्थी के मध्य दूरी होते हुए भी प्रदान की जाने वाली शिक्षा दूरस्थ शिक्षा कहलाती है। इसे मुक्त शिक्षा (Open Education) भी कहा जाता है। दूरस्थ शिक्षा अप्रत्यक्ष शिक्षण की व्यवस्था है। आधुनिक प्रौद्योगिकी के उपकरणों के माध्यम से शिक्षार्थियों से सम्पर्क स्थापित किया जाता है। दूरस्थ शिक्षा उन बालकों, युवाओं एवं प्रौढ़ों के लिए शिक्षा की एक व्यवस्था है. जो किसी कारणवश औपचारिक शिक्षा प्राप्त करने में असमर्थ रहें हैं और भविष्य में भी समर्थ नहीं हो सकते हैं। वास्तव में दूरस्थ शिक्षा उन लोगों तक शिक्षा पहुँचाने की व्यवस्था है, जो किसी आयु के एवं किसी स्थान पर रहने वाले हैं या स्व-व्यवसाय में या किसी सेवा में संलग्न है तथा अपनी शिक्षा को जारी रखना चाहते हैं।

दूरस्थ शिक्षा शब्द का प्रयोग सन् 1982 से शुरू हुआ जब चार दशक पुरानी पत्राचार शिक्षा की अन्तर्राष्ट्रीय परिषद् (International Council for Correspondence Education or ICCE) ने

अपना नाम बदलकर दूरस्थ शिक्षा की अन्तर्राष्ट्रीय परिषद् (International Council for Distance Education or ICDE) रखा। इस परिषद में विश्व के लगभग 50 देश सदस्य हैं। इसके परिणामस्वरूप भारत सहित समस्त विश्व में पत्राचार शिक्षा को दूरस्थ शिक्षा कहा जाने लगा।

6.4 दूरवर्ती शिक्षार्थी की प्रकृति

दूरस्थ शिक्षा एक नवाचार है, जो कि परम्परागत शिक्षा प्रणाली से तुलना में अत्यन्त उदार है। दूरस्थ शिक्षा में शिक्षण व्यवहार व अधिगम व्यवहार में सीधा सम्पर्क नहीं होता है। इसमें छात्र की उपस्थिति से सम्बंधित क्रियायें यदा कदा सम्मिलित हैं। इस विधा में श्रम विभाजन एवं संगठनात्मक सिद्धान्तों का प्रयोग करके इसे तर्कसंगत बनाया जाता है। इसमें उच्च स्तरीय स्व अधिगम सामग्री के निर्माण पर विणेण बल दिया जाता है। दूरस्थ शिक्षा का नियोजन किसी शैक्षिक संस्था एवं संगठन द्वारा किया जाता है। इस प्रकार यह व्यक्गित अध्ययन से भिन्न है। इस प्रणाली में शिक्षक कक्षा तथा विद्यालय की आवश्यकता नहीं पड़ती है। इसमें आयु एवं समय की आबद्धता नहीं है, यह आवश्यकता आधारित है। इसमें शिक्षक एवं शिक्षार्थी दोनों एक-दूसरे से अलग होते हैं, और आपस में सीधा सम्पर्क व प्रत्यक्ष संवाद नहीं या न्यूनतम रहता है। दोनो दूर रहकर अपने दायित्वों का निर्वहन करते हैं। दूरस्थ शिक्षा में विद्यार्थियों को स्व-निर्मित वातावरण में स्व-निर्देशित स्व अर्मिागम का अवसर दिया जाता है। शिक्षार्थियों को अधिगम सामग्री के सम्प्रेषण के लिये मुद्रित, तकनीकी, संचार माध्यमों का प्रयोग किया जाता है, जैसे- रेडियो, दूरदर्णन, वीडियो, कैसेट्स, तथा कम्प्यूटर सहायिका अधिगम, प्रिन्टेड पत्र पत्रिकायें प्रयुक्त होते हैं। इस प्रणाली में शिक्षक एवं शिक्षार्थियों के माध्यम द्विपक्षीय सम्पर्क बना रहता है। शिक्षक की सामग्री के प्रस्तुतीकरण को समाकलित एवं सम्पोशित करता रहता है। यह प्रणाली शिक्षार्थियों का आवश्यकता एवं व्यवसायनुरूप उसके ज्ञान एवं कौशल में वश्द्धि करने तथा उसमें परिमार्जन लाने के लिये शिक्षण, पुन: शिक्षण का अवसर प्रदान करने में सक्षम है। विद्यार्थियों का अपने ही समूह के सदस्यों से अलगाव रहता है। यह शिक्षण व अधिगम का एक औद्योगीकश्त रूप है। यह शैक्षिक प्रक्रिया का वैयक्तीकरण को बढ़ावा देता है।

दूरवर्ती शिक्षार्थी की प्रकृति को निम्न प्रकार से स्पष्ट किया जा सकता है:

1- दूरवर्ती शिक्षार्थी अपनी शैक्षिक क्रियाओं को प्रारम्भ करने, उन्हें गति देने तथा समाप्त करने के लिए स्वतंत्र होता है तथा वह अपनी प्रगति एवं असफलता के लिए स्वयं उत्तरदायी भी होता है।

2- दूरवर्ती शिक्षार्थी, अपने भौतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक तथा भौगोलिक परिवेश में रहते हुए सीखने के वास्तविक अवसर प्राप्त करता है।

3- दूरवर्ती शिक्षार्थी को परम्परागत् शैक्षिक परिस्थितियों की अपेक्षा अधिक उत्तरदायित्व एवं जवाबदेही का निर्वाहन करना होता है।

4- दूरवर्ती शिक्षार्थी को अपनी पाठ्यवस्तु एवं अध्ययन विधियों के चयन में पर्याप्त सुविधा प्राप्त होती है।

5- दूरवर्ती शिक्षार्थी की उपलब्धि का मूल्यांकन स्वतंत्र रूप से किया जाता है। मूल्यांकन करते समय दूरवर्ती शिक्षार्थी द्वारा पाठ्यवस्तु को पढ़ने में अपनाई गई विधियों, अध्ययन गति की दर अर्थात् अध्ययन करने में लिए गए समय एवं स्थान आदि का ध्यान नहीं रखा जाता है।

6- दूरवर्ती शिक्षार्थी को प्रभावशाली अधिगम की परिस्थिति प्रदान करने के लिए निम्नलिखित व्यवस्थाएं दूरवर्ती शिक्षण प्रणाली में होती है:-

a. पाठ्यवस्तु संगठन पूर्व अनुभवों के आधार पर किया जाता है।
b. पाठ्यवस्तु के निर्माण के समय छात्रों के भावनात्मक पक्ष को विशेष महत्व दिया जाता है।
c. मुद्रित पाठ्यसामग्री में चित्रों, मानचित्रों, चार्ट, ग्राफ आदि का प्रयोग अधिगम को प्रभावशाली बनाने में सहायता प्रदान करता है।
d. शिक्षार्थी को अपनी आवश्यकताओं एवं सुविधाओं के अनुसार सम्प्रेषण माध्यमों के चयन की स्वतंत्रता रहती है।
e. दूरवर्ती शिक्षार्थी की अध्ययन प्रक्रिया सामाजिक नियंत्रण एवं पाठ्यक्रम की प्रक्रियाओं की अपेक्षा व्यक्तिगत अध्ययन की स्वतंत्रता तथा सहायक व्यवस्था प्रणाली पर अधिक निर्भर होती है।

अभ्यास प्रश्न:

1.

(i) दूरवर्ती शिक्षार्थी सम्प्रेषण माध्यमों के चयन करने में ------- रहता है।

(ii) दूरवर्ती शिक्षार्थी अपने अधिगम करने का समय का निर्धारण ---- करता है।

(iii) दूरवर्ती अध्ययन में अधिगमकर्ता अधिगम के लिए अधिगम विधि का चयन ------ करता है।

6.5 दूरवर्ती शिक्षार्थी की विशेषताएँ

दूरवर्ती शिक्षार्थी स्वयं के निर्णय के आधार यह जानता है कि उसने यह पाठ्यक्रम क्यों चुना है? उसके द्वारा पाठ्यक्रम के चयन में कई कारण सम्मिलित होते हैं जैसे कि उसके परिवार की आकांक्षाएं तथा अपेक्षाएं। इसके अतिरिक्त दूरवर्ती शिक्षार्थी की अन्य कई विशेषताएं होती हैं जिनका वर्णन आगे प्रस्तुत किया जा रहा है।

आयु: दूर अध्येयता की महत्वपूर्ण विशेषता उसका प्रौढ़ होना है। प्रौढ़ की सीमाएं 18 वर्ष से 80 वर्ष तक या इससे भी अधिक हो सकती है। 30 से 40 वर्ष की आयु के प्रौढ़ों की ग्रहणशीलता बच्चों की अपेक्षा अधिक रहती है। वे भावनात्मक रूप से अधिक समयावधि की परीक्षा (3 घण्टे) में उत्तर लिखने में अपने आपको असहज महसूस करते हैं। अतः दूरवर्ती शिक्षा में मूल्यांकन करते समय इस तथ्य को ध्यान में रखा जाना आवश्यक है।

लिंग: दूरवर्ती शिक्षा में दूरवर्ती शिक्षार्थी को समझने के लिए लिंग दूसरा प्रमुख कारक है। आमतौर पर आर्थिक, सामाजिक, शैक्षिक रूप से पिछड़ी महिलाएं किसी पाठ्यक्रम को समझने में असुविधा महसूस करती हैं क्योंकि प्रायः इस प्रकार की महिलाओं को अनेक असुविधाओं तथा भेदभाव से ग्रस्त रहता पड़ता है। यदि पाठ्यक्रम में सामाजिक, आर्थिक, मनोवैज्ञानिक, सामाजिक, धार्मिक पूर्वाग्रहों से बचना चाहिए जिससे उनमें अविधायक अभिवृत्ति (नकारात्मक दृष्टिकोण) का विकास न हो पाये।

सामाजिक स्तर: शिक्षा के सार्वजनिकरण, लोकतांत्रिकरण, वैज्ञानिक अभिवृत्ति के निर्माण, पंथ निरपेक्षता, समता आदि के विकास में जातियता तथा सामाजिक स्तरीकरण ने बहुत अवरोध पैदा किए हैं। साथ ही अपने व्यवसाय के उन्नयन में जाति प्रथा एक अवरोध का कार्य भी करती है। सामाजिक विभेद समाप्त करने के लिए हमें प्रौढ़ शिक्षा के पाठ्यक्रमों में सामाजिक सुविधाओं से वंचित वर्गों जैसे कि - महिलाओं, पिछड़ी जातियों, अनुसूचित तथा जनजातियों के सदस्यों, धार्मिक अल्प संख्यकों, अपंगों को शैक्षिक अभिरूचियों तथा अधिगम क्षमताओं के विकास का कार्य भी करना चाहिए।

आर्थिक स्तर: आमतौर पर प्रबंधन पाठ्यक्रमों, कम्प्यूटर विज्ञान जैसे पाठ्यक्रमों में अधिक फीस की माँग की जाती है। जो कि निर्धन अधिगमकर्ताओं की सामर्थ्य से बाहर होते हैं। अतः दूरवर्ती शिक्षा के माध्यम से इस प्रकार के व्यवसायों के पाठ्यक्रमों में दूरवर्ती शिक्षार्थियों को आवश्यक रूप से छात्रवृत्ति का प्रबंध किया जाना आवश्यक है।

भौगोलिक अवस्थिति: भौगोलिक अवस्थिति भी दूरवर्ती शिक्षार्थी के शिक्षण में बाधक है। दूरस्थ स्थानों जहां यातायात के साधन समयानुकूल नहीं हैं पहाड़ी क्षेत्रों, रेगिस्तानों, वनवासियों के लिए दूरशिक्षा इतनी सरल और सस्ती नहीं होती जितनी कि शहरी क्षेत्रों में रहने वालों के लिए होती है। क्योंकि जब वे अध्ययन केन्द्र की सहायता प्राप्त करना चाहते हैं तो उन्हें यात्रा करने में धन तथा समय आदि में कठिनाई आती है अथवा उन्हें अस्थाई रूप से अध्ययन केन्द्रों पर (जो कि प्रायः शहरी क्षेत्रों में होते हैं) रहना पड़ता है। आज भी गाँवों में डाक व्यवस्था की कमी है। दूरदर्शन तथा टेलीफोन यद्यपि गाँवों तक पहुँच गए हैं परन्तु वहां पर विद्युत का संचार प्रायः नहीं होता जो कि नियत समय पर आने वाले शैक्षिक कार्यक्रमों को देखने में सहायक हो सके। वनवासियों पर्वतवासियों के लिए तो यह ओर भी अधिक समस्या पैदा कर देते हैं। अतः दूर शिक्षा के शिक्षार्थियों के लिये विशिष्ट प्रबंध किये जाने आवश्यक हैं।

भाषा: भारत में उच्च स्तर के सभी पाठ्यक्रम अंग्रेजी भाषा के माध्यम से पढ़ाये जाते हैं। इन पाठ्यक्रमों में उपलब्धि प्राप्त करने के लिए अंग्रेजी में कुशल होना आवश्यक हो जाता है। परन्तु अंग्रेजी अधिकांश भारतीयों की मातृभाषा नहीं हैं। जहां तक अध्ययन सामग्रियों का प्रश्न है वह अधिकांश रूप से अंग्रेजी में ही उपलब्ध कराये जाते हैं। या फिर कुछ पाठ्यक्रमों में अंग्रजी से अनुवाद की गई पाठ्यक्रम सामग्री उपलब्ध कराई जाती है। अनुवाद आमतौर पर स्तरीय नहीं हो पाता। जिससे दूरवर्ती शिक्षार्थी को जूझना पड़ता है। अतः दूरवर्ती पाठ्यवस्तु मातृभाषा में उपलब्ध कराया जाना आवश्यक है।

गुरू शिष्य परम्परा: भारत में गुरू शिष्य परम्परा आज भी अपना विशेष महत्व रखती है। आज भी नृत्य, संगीत, मूर्तिकला, चित्रकला आदि के ज्ञानार्जन में गुरू शिष्य परम्परा अपना महत्वपूर्ण स्थान बनाए हुए है। प्रायोगिक विषयों के शिक्षण में यह समस्या और अधिक प्रभावी तब हो जाती है जब बिना पूर्व परीक्षण के प्रौद्योगिक आधारित पाठ्यवस्तु प्रस्तुत कर दी जाती है। इस प्रकार के विषयों के लिये पाठ्यवस्तु तैयार करने के लिए वैज्ञानिक विधियों पर आधारित पाठ्यक्रम सामग्री प्रस्तुत की जाये।

अपंग शिक्षार्थी: अपंगता अभिशाप नहीं बल्कि एक असुविधा है। हमारे देश में यद्यपि इग्नू द्वारा अध्ययन शुल्क में छूट, विशेष अध्ययन केन्द्र, सक्षमता प्रदाता प्रौद्योगिकी, यथोचित माध्यमों द्वारा पाठ्न सामग्री और आवश्यकता आधारित पाठ्यक्रमों एवं कार्यक्रमों द्वारा अपंग शिक्षार्थियों को आवश्यकता पूर्ति हेतु विशेष प्रयास किये जा रहे हैं।

अभ्यास प्रश्न:

2. दूरवर्ती शिक्षार्थियों की विशेषताओं को बिन्दुओं के रूप में लिखें।

6.6 दूरवर्ती शिक्षार्थियों के प्रकार:

दूरवर्ती शिक्षार्थियों को कई प्रकारों से विभाजित किया जा सकता है, प्रमुख प्रकार इस प्रकार है।

1. आयु के आधार पर - आयु के आधार पर दूरवर्ती छात्र युवा प्रौढ़ और वृद्ध हो सकते हैं। इसमें आयु की कोई सीमा नहीं है। 4 वर्ष तक की आयु के बच्चे सर्वशिक्षा अभियान के अंतरगत आते हैं। इसके बाद माध्यमिक विद्यालयों के प्रमाण पत्र वाले छा़त्र, इसके पश्चात ग्रेजूएट तथा पोस्ट ग्रेजूएट के छात्रों की आयु प्रायः अधिक रही है मुक्त विद्यालयी शिक्षा के कोई आयु सीमा नहीं होती है परंतु माध्यमिक पाठ्यक्रम में प्रवेश के लिये 15 वर्ष की आयु होनी चाहिये। कई बार 80 वर्ष से अधिक आयु के शिक्षा र्थी भी दूरवर्तीशिक्षा में आते हैं।

2. पाठ्यक्रम के आधार पर - दूरवर्तीशिक्षा के शिक्षा र्थी शैक्षिक पाठ्यक्रम तथा व्यावसायिक पाठ्यक्रम के होते है। शैक्षिक पाठयक्रमों में माध्यमिक शिक्षा प्रमाण पत्र से लेकर स्नातकोत्तर पाठयक्रमों होते है। अनुसंधान के लिये पी.एच.डी और डी.लिट के शिक्षार्थी भी होते हैं। व्यावसायिक पाठयक्रमों की एक लंबी सूची होती है, जिसमें अपनी आवश्यकता एवं रूचि के अनुसार छात्र पाठ्यक्रम का चयन करते हैं।

3. समयावधि के अनुसार - मुक्त विधालयी शिक्षा के पाठ्यक्रम, एक वर्षीय पैकेज पाठ्यक्रम, छैमाही प्रमाण पत्र होते है। जबकि मुक्त विश्वविद्यालयी शिक्षा में पाठयक्रमों की समयावधि 4 वर्ष, 3 वर्ष, 2 वर्ष 1 वर्ष 9 मास, 6 मास के पाठ्यक्रम होते है जो कि शिक्षार्थी के स्तर तथा पाठ्यक्रम के प्रकार पर आधारित होते हैं|

4. शैक्षिक स्तर के आधार - शिक्षार्थियों की स्थिति अलग - अगल होती है। इसमें व्यावसायिक उन्नयन के लिये पाठ्यक्रम आयोजित किये जाते है। उदाहरण के लिये जो अध्येयता पहले से ही उच्च प्रोग्राम या पाठ्यक्रम सीख चुके हैं । उनकी अधिगम सामग्री उच्च स्तर की होनी चाहिये। लेकिन कम शिक्षित अध्येताओं की सामग्री का स्तर निम्न होना आवश्यक है ।

5. भौगोलिक अवस्थिति के आधार पर - भारत का भौगोलिक क्षेत्र विशाल है। प्रत्येक क्षेत्र की अपनी परम्परायें, उपज, खाने - पीने की व्यवस्थायें अलग - अलग होती है। उनके अपनी अपनी पसंदगियों तथा नापसंदिया अलग अलग रहती है। उदाहरण के लिये खाद्य परिरक्षण (फूड प्रिजरवेशन) के पाठ्यक्रम में विभिन्न खाद्य सामग्रियों के परिरक्षण में उनके परिवेश की खाद्य सामग्रियों को स्थान देना आवश्यक होता है अन्यथा होने पर उन्हें उतना लाभ नहीं हो पाता। इसी प्रकार कृषि शिक्षा में उनके स्थानीय उपज, कृषि उपकरण, वर्षण की स्थिति,सिंचाई के साधन, तापमान के आधार पर कृषि करने के व्यावहारिक ज्ञान को महत्व देना आवश्यक हो जाता है। भौगोलिक अवस्थिति के कारण फसलों की बुआई का समय, कर्षण क्रियायें तथा फसलों का चयन के आधार पर अध्येयताओं को अधिगम सामग्री प्रस्तुत किया जाना आवश्यक हो जाता है। कई बार ऐसा न होने पर प्रस्तुत सामग्री अध्येयता के लिये उपयोगी होने के स्थान पर खतरनाक सिद्ध हो सकती है । भौगोलिक अवस्थिति का प्रयुक्त भाषा से भी गहरा संबंध है। क्योंकि भाषा भौगोलिक आधार पर परिवर्तित होती रहती है तथा प्रत्येक भाषा में अपनी आंचलिक बोलियां होती है। क्योंकि अध्येयता अपनी भाषा में सरलता पूर्वक सीखता है तथा आंचलिक बोली में और अधिक सरलतापूर्वक सीख जाता है।

6. लिंग के आधार पर - अध्येता की अपनी आवश्यकतायें अलग - अलग होती है उनकी रूचिंया तथा वरीयता क्रम भी अलग - अलग होते हैं शिशुपालन, मातृ तथा शिशु स्वास्थ्य ग्रामीण महिला स्वास्थ्य रक्षक पाठ्यक्रम कढ़ाई सिंलाई, फैशन प्रौधोगिकी की पाठयक्रमों में महिला अध्येता आसानी से सीख जाती है जबकि पुरूष उतने ग्रहणशील नहीं हो पाते । लिंग में भी पारस्परिक विभेद है। शहर की उच्च स्थिति की महिलाओं को जो पाठ्यक्रम आयोजित किये जाते है वे पाठ्यक्रम ग्रामीण, शहरी की झोपड पट्टियों, आदिवासी क्षेत्र की महिलाओं के लिये उपयुक्त नहीं हो सकते। उपेक्षित वर्गों की महिलायें अनेक असुविधाओं और भेदभाव से ग्रस्त रहती है। इस प्रकार की महिलायें आमतौर पर सांस्कृतिक एवं धार्मिक पूर्वाग्रहों से ग्रस्त रहती है, जिससे वे अपने प्रति नकारात्मक दृष्टिकोण का निर्माण कर लेती है। अंधविश्वास जिनकी संख्या सैकडों में होती है, उन्हें मिटाने के लिये वैज्ञानिक तथा प्रभावी सरल भाषा और विधियों के द्वारा उचित प्रयासों की आवश्यकता रहती है।

7. आर्थिक आधार पर - आर्थिक स्तर का महत्वपूर्ण स्थान है। शिक्षार्थी अपनी आर्थिक स्थिति के आधार पर पाठ्यक्रम का चयन करते है। निम्न आर्थिक स्तर के शिक्षार्थियों को दूरवर्ती पाठयक्रमों में पूर्ण अथवा अर्द्ध शुल्क मुक्ति का प्रावधान किया जाना चाहिये।

अभ्यास प्रश्न

3. दूरवर्ती अध्येता के प्रकार लिखिये।

6.7 सारांश

इस इकाई में हमने दूरवर्ती शिक्षार्थी की प्रकृति को समझा, उनकी विशेषताओं को जाना तथा विभिन्न अध्येयताओं के प्रकारों में विभेद कर सकने की क्षमता का विकास किया। यह ज्ञान हमें दूरवर्ती अध्येताओं को समझने में तथा उनके लिये पाठयवस्तु का निर्माण करने में लाभ पहुचायेगा।

6.8 शब्दावली

दूरवर्ती शिक्षार्थी: मुक्त एवं दूरस्थ प्रणाली के अन्तर्गत नामांकित विद्यार्थी

6.9 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1.

(i) स्वतंत्र

(ii) स्वयं

(iii) स्वयं

3. अध्येयता के प्रकार

- आयु के आधार पर
- पाठ्यक्रम के आधार पर
- पाठ्यक्रम की समयावधि के आधार पर
- शैक्षिक योग्यताओं के आधार पर

- भौगोलिक स्थिति के आधार पर
- लिंग के आधार पर

6.10 संदर्भ ग्रंथ सूची/सहायक/उपयोगी पाठ्यसामग्री

1. डॉ. सीयाराम यादव (2008): दूरवर्ती शिक्षा, अग्रवाल पब्लिकेशन, आगरा -2

2. आर.ए. शर्मा (1995): दूरवर्ती शिक्षा, आर.लाल बुकडिपो, में रठ

3. डॉ. कल्पलता पान्डेय (1991): शिक्षा के नये आयाम दूरवर्ती शिक्षा, विजय प्रकाशन मंदिर, वाराणसी

4. दूरवर्ती शिक्षा (2007): ई. एस. 364 खण्ड एक (दूरवर्ती शिक्षा) तथा खण्ड तीन (दूरवर्ती अधिगम) इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविधालय की बी.एड स्व अध्ययन सामग्री

6.11 निबंधात्मक प्रश्न

1. दूरवर्ती अध्येयताओं की प्रकृति की व्याख्या करें।
2. दूरवर्ती अध्येयताओं की विशेषताओं की व्याख्या कीजिए|
3. दूरवर्ती अध्येयताओं के प्रकारों का वर्णन कीजिए।

इकाई 07: दूरवर्ती शिक्षा में अध्ययन सामग्री- अर्थ, प्रकार व महत्त्व (Study Materials in Distance Education- Meaning, Types, and Their Importance)

इकाई की रूपरेखा:-

7.1 प्रस्तावना
7.2 उद्देश्य
7.3 अध्ययन सामग्री का अर्थ
7.3.1 अनुदेशानात्मक अध्ययन सामग्री
7.3.2 पाठ्यपुस्तक एवं अनुदेशानात्मक सामग्री में अंतर
7.3.3 स्वअनुदेशानात्मक सामग्री के प्रमुख गुण
7.3.4 मुद्रित अध्ययन सामग्री
7.3.5 अमुद्रित अध्ययन सामग्री
7.4 पाठ सामग्री का नियोजन एव विकास
7.4.1 पाठ लेखक
7.4.2 टीम द्वारा लेखन
7.5 पाठ सामग्री का सम्पादन
7.6 सम्पादन की प्रक्रिया
7.7 नवीन संस्था/ नवीन पाठ्यक्रम को प्रारम्भ करने हेतु सम्पादक के कार्य
7.8 दूरवर्ती शिक्षा में अध्ययन सामग्री का महत्व
7.9 दूरवर्ती शिक्षा में अध्ययन सामग्री की सामाऐं
7.10 सारांश
7.11 शब्दावली
7.12 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
7.13 संदर्भ ग्रंथ सूची/सहायक/उपयोगी पाठ्यसामग्री
7.14 निबंधात्मक प्रश्न

7.1 प्रस्तावना:

दूरस्थ शिक्षा, शिक्षा का एक व्यापक एवं सघन रूप है, जिसकी सफलता शिक्षण सामग्री के गुणवत्ता पर आधारित होती है। दूरस्थ शिक्षा के अध्ययन सामग्री को व्यापक रूप से स्वअनुदेशन सामग्री (Self

Istructional Material, SIM) **एस0 आई0 एम0** के नाम से पुकारा जाता है। स्वअनुदेशन सामग्री का मुख्य उद्देश्य विद्यार्थी द्वारा स्वतंत्र अधिगम को अभिप्रेरित करना तथा सुगम बनाना है। इस प्रकार दूरशिक्षा में स्वअनुदेशन सामग्री की भूमिका महत्वपूर्ण मानी जाती है, हम इस इकाई में आप शिक्षण सामग्री का अर्थ, प्रकार तथा योजना का प्रभावशाली अध्ययन कर सकेंगे साथ ही शिक्षण प्रक्रिया में स्वअनुदेशन सामग्री के महत्व की समीक्षा भी कर सकेंगे।

7.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के उपरान्त आप:-

- अध्ययन सामग्री का अर्थ स्पष्ट कर सकेंगे।
- अध्ययन सामग्री के उद्देश्यों से परिचित हो सकेगें।
- अध्ययन सामग्री के प्रकारों का विवेचन कर सकेंगे।
- दूरवर्ती शिक्षा में अध्ययन सामग्री के महत्व को स्पष्ट कर सकेगें।
- दूरवर्ती शिक्षा में अध्ययन सामग्री की सीमाओं का उल्लेख कर सकेगें।

7.3 अध्ययन सामग्री का अर्थ:

अध्ययन सामग्री पाठ्यक्रम का घटक होता है जो छात्रों के शिक्षण अधिगम प्रकिया में सहयोगी आधार के रूप में उपयोगी होता है। दूरशिक्षा में अध्ययन सामग्रियाँ पाठ्यपुस्तक अथवा विषय पत्रिकाओं से भिन्न होती हैं। प्रभावी स्वअध्ययन सामग्रियां शिक्षार्थी में अधिगम जागृत रखती है तथा अभिरूचि बनाये रखती है। किसी पुस्तक के विपरीत स्वअध्ययन सामग्री का उद्देश्य विवेकपूर्ण प्रस्तुतीकरण नहीं होता इस प्रकार स्वअध्ययन सामग्री पहचाने गये लक्ष्य, वर्गों को ज्ञान, अभिवृत्तियों के कौशलों के अर्जन के योग्य बनाने के प्रयोजन से शिक्षण प्रदान करने के लिए विशेष रूप से अभिकल्पित की जाती है। अतः अध्ययन सामग्री इस प्रकार अभिकल्पित की जाती है कि उसी में एक प्रभावी अध्यापक के प्रकार्यों का निर्माण हो जाऐ।

7.3.1 अनुदेशनात्मक अध्ययन सामग्री:

अनुदेशनात्मक सामग्री से अभिप्राय उस विधि व विधि में प्रयुक्त विभिन्न साधनों से होता है जिनकी सहायता से विषय सामग्री को शिक्षार्थी तक पहुचाया जाता है। दूरवर्ती शिक्षा में शिक्षक व शिक्षार्थी

आमने सामने नहीं होते तथा प्रत्यक्ष शिक्षण संभव नहीं होता है अतः इसमें विभिन्न वैकल्पिक विधियों का प्रयोग किया जाता है। जिन्हें अनुदेशनात्मक माध्यम कहते हैं। दूरवर्ती शिक्षा में शिक्षण का प्रमुख साधन स्वतः अनुदेशनात्मक सामग्री होती है। यह शिक्षण दूसरे प्रकार के औपचारिक शिक्षण से भिन्न होता है। स्वतः अनुदेशनात्मक सामग्री का लेखन भी अध्ययन लेखन तथा पत्र पत्रिकाओं हेतु लेख लेखन से भिन्न होता है। इस प्रकार की सामग्री का समावेश भी निर्माण में शिक्षार्थी को निरन्तर ध्यान रखना आवश्यक है। अतः स्वतः अनुदेशात्मक सामग्री की प्रमुख विशेषताएँ निम्नलिखित प्रकार की होनी चाहिए-

- आत्म व्याख्यायित,
- आत्म समाहित,
- आत्म निर्देषित,
- आत्म अभिप्ररित, व
- आत्म मूल्यांकन,

इनके अतिरिक्त अन्य विशेषताऐं निम्नलिखित हैं-

1. इसकी अन्तर्वस्तु को बार बार दुहराने से शिक्षार्थी को विषय सामग्री को समझने तथा आगे बढ़ने का तरीका स्वंय प्राप्त होते जाना चाहिए।

2. इसमें इस बात के निर्देश दिये होने चाहिए कि शिक्षार्थी को विषय सामग्री को किस प्रकार अध्ययन करना है।

3. इसमें उद्देश्यों का स्पष्टीकरण होना चाहिए अर्थात् शिक्षार्थी को यह स्पष्ट हो जाना चाहिए कि सामग्री को अध्ययन करने के पश्चात् वह किन किन कार्यों को करने में सक्षम हो सकेगा।

4. इसकी अन्तर्वस्तु को इस प्रकार से व्याख्यायित एवं व्यवस्थित किया जाना चाहिए जिससे शिक्षार्थी उसे अपने पूर्व ज्ञान से जोड़ सके।

5. इसमें सामग्री के अध्ययन से सम्बन्धित विभिन्न कार्यों को सम्पादित करने (जैसे इकाई के विभिन्न भागों पर दिया जाने वाला समय, गृहकार्य की तैयारी आदि) के बारे में उपयुक्त निर्देश दिये होने चाहिए।

6. शिक्षार्थी की विषय सामग्री में रूचि विकसित करने तथा उसे बरकरार रखने हेतु विशेष प्रयास के प्रावधान होने चाहिए।

7. सामग्री को पढ़ने के साथ साथ अभ्यास कार्यों एवं सम्बन्धित क्रियाओं के निष्पादन पर भी बल दिया जाना चाहिए।

8. अभ्यास कार्यों की स्वंय जाँच हेतु उत्तर सकेंतों का प्रावधान होना चाहिए जिससे शिक्षार्थी को पृष्ठपोषण प्राप्त होता रहे।

9. इकाई के अन्त में सारांश भी प्रस्तुत किया जाना चाहिए जिससे शिक्षार्थी को सामग्री को पुनः स्मरण करने में सहायता मिल सके तथा वह स्वंय भी अध्ययन सामग्री निकाल सके।

10. इकाई के अन्त में अध्ययन से सम्बन्धित अन्य सन्दर्भ सामग्री का भी उल्लेख किया जाना चाहिए जिससे शिक्षार्थी अधिक जानकारी हेतु उनके प्रयोग का प्रयास कर सके।

7.3.2 पाठ्यपुस्तक एवं अनुदेशनात्मक सामग्री में अन्तरः-

सामान्यतः जो शिक्षण सामग्री परमपरागत शिक्षा में प्रयोग की जाती है वे पाठ्यवस्तु कहलाती है। पाठ्य वस्तु एवं स्वअनुदेशनात्मक सामग्री में काफी अन्तर पाया जाता है, परन्तु लॉकवुड ने परमरागत पाठ्यवस्तु एवं स्वअनुदेशनात्मक सामग्री का तुलनात्मक अध्ययन किया तथा उन्होंने अपने उस अध्ययन में निम्न प्रकार के अन्तर पाये-

पाठ्यवस्तु-	स्वअनुदेशनात्मक सामग्री-
पूर्व निधारित रूचि।	अनुक्रमित रूचि।
अध्यापकों के प्रयोग के लिए लिखी जाती है।	अधिगमकर्ता के लिए लिखा जाता है।
पढाई के लिए कोई निश्चित समय नहीं ।	अध्ययन के लिए निश्चित समय।
विस्तृत क्षेत्र के लिए निर्मित की जाती है।	व्यक्तिगत शिक्षार्थी हेतु प्रारूप तैयार किया जाता है।
लक्ष्य व उद्देश्य बिरले होते हैं।	लक्ष्य व उद्देश्य पर हमेशा बल दिया जाता है।
एक मार्ग के द्वारा किया जाता है।	शिक्षार्थी की आवश्यकता के अनुसार संरचित।
विशेषज्ञ के लिए संरचित।	व्यक्ति प्रारूप।
अव्यक्तिगत प्रारूप।	सक्रिय अनुक्रिया की आवश्यकता।
निष्क्रियता में बल।	

स्वअनुदेशनात्मक सामग्री के प्रमुख गुण-

- व्यक्तिगत अधिगम
- स्वगति अध्ययन
- निजी अधिगम
- किसी समय, किसी स्थान तथा किसी संख्या पर उपलब्ध होना।
- प्रमाणीकृत विषय वस्तु।
- विशेषज्ञ विषय वस्तु।
- संरचित शिक्षण।
- सक्रिय अधिगम।
- प्रवाही पृष्ठपोषण ।
- सुस्पष्ट उद्देश्य ।

7.3.4 मुद्रित अध्ययन सामग्रीः-

मुद्रित अनुदेशनात्मक माध्यम से अभिप्राय उस माध्यम से है जिसमें शिक्षार्थी को अनुदेशन मुद्रित सामग्री से दिया जाता है। दूरस्थ शिक्षण बहु माध्यम वाली प्रक्रिया है, अधिकांश दूर शिक्षण संस्थाओं द्वारा प्रमुख रूप से मुद्रित सामग्री द्वारा अनुदेशन को ही माध्यम के रूप में अपनाया जाता है इसका प्रमुख कारण यह है कि मानवीय ज्ञान को संरक्षित एवं प्रसारित करने का प्रमुख साधन हस्त लिखित एवं मुद्रित पुस्तकें ही हैं। इसलिए शिक्षण के क्षेत्र में पुस्तको को अधिक महत्व दिया जाता है।

7.3.5 अमुद्रित अध्ययन सामग्रीः-

शिक्षण अधिगम प्रक्रिया में सम्प्रेषण माध्यम की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। सम्प्रेषण माध्यम से तात्पर्य उन साधनों से होता है जिनके सहायता से शिक्षण अधिगम प्रक्रिया को रूचिकर बनाया जाता है। अमुद्रित अनुदेशनात्मक माध्यम से तात्पर्य इन्हीं सम्प्रेषण माध्यम (दूरदर्शन, रेडियो, कम्पयूटर,ऑडियो विडियो कैसेट, फिल्म प्रोजैक्टर एवं उपग्रह) से है, जिनकी सहायता से दूरवर्ती शिक्षा को उसके उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु सहायता प्रदान की जाती है।

7.4 पाठ सामग्री का नियोजन एव विकास:

दूरवर्ती शिक्षार्थी की बात अनुदेशात्मक सामग्री के अध्ययन से स्वतः अधिगम प्राप्त करना होता है। अतः इसके निर्माण में व्यवस्थित नियोजन की आवश्यकता होती है। पाठ्यक्रम नियोजन के अनेक उपागम हो सकते हैं। किन्तु दूरवर्ती शिक्षण की सफलता हेतु जिस उपागम को अपनाया जाता है, उसमें निम्नलिखित पदों का अनुसरण किया जाना आवश्यक होता है।

किसी भी संस्थान द्वारा नवीन पाठ्यक्रमों को प्रारम्भ करने से पूर्व उपर्युक्त बिन्दुओं के आधार पर उसका नियोजन करना होता है। इन बिन्दुओं पर पूर्व अभ्यास में हम प्रकाश डाल चुके है। इस अध्याय में हमारा उद्देश्य पाठ सामग्री के निर्माण पर विशेष रूप से चर्चा करना है। अतः हम पाठ सामग्री के उत्पादन सम्बन्धी पक्षों तक ही अपने को सीमित रखने का प्रयास करेंगे

मुक्त विश्वविद्यालयों/पत्राचार संस्थानों द्वारा प्रायः मुद्रित शिक्षण सामग्री का निर्माण एवं उत्पादन किया जाता है। कुछ विश्वविद्यालयों में सामग्री निर्माण एवं उत्पादन ही अपनी स्वंय व्यवस्था होती है तथा इन कार्यों के लिए उनका स्टाफ होता है। जबकि कुछ संस्थानों/विश्वविद्यालयों द्वारा अधिकांश कार्य बाहर से करवाये जाते हैं। ये सभी प्रशासनिक व्यवस्था से सम्बन्धित होते हैं।

पाठ्यक्रम प्रारम्भ के बारे में अन्तिम निर्णय हो जाने के पश्चात् उसके लिए पाठ सामग्री/अन्तर्वस्तु का नियोजन एवं चयन करना होता है। सामान्यतया यह कार्य पाठ्यक्रम सलाहकार समिति द्वारा किया जाता है। इस समिति में शैक्षिणक स्टाफ, लेखक, सम्पादक, विषय विशेषज्ञ, प्रशासक, तकनीकी विशेषज्ञ आदि को सम्मिलित किया जाता है। दूरवर्ती शिक्षा के पाठ्यक्रम विकास में विभिन्न विकास योजनाओं से सम्बन्धित अभिकरणों, उद्योगों एवं सरकारी मंत्रालयों आदि से भी सहयोग प्राप्त किया जाता है। विभिन्न सर्वक्षणों एवं शोध निष्कर्षो तथा प्रोजेक्ट कार्यों से भी से भी पाठ्यक्रम नियोजन में सहायता प्राप्त की जाती है।

पाठ्यक्रम एवं पाठ सामग्री के निर्धारण के पश्चात पाठ सामग्री के वास्तविक निर्माण का कार्य प्रारम्भ होता है। इसके अन्तर्गत सबसे महत्वपूर्ण कार्य पाठ लेखन का होता है।

7.4.1 पाठ लेखन

पाठ लेखन का कार्य पाठ लेखक का होता है। यह कार्य दो प्रकार से किया जा सकता है।

1. एक ही लेखक द्वारा, या

2. लेखकों की एक टीम द्वारा।

एक ही लेखक द्वारा लेखन अथवा एकल लेखन

एकल लेखन भी दो प्रकार के लेखकों द्वारा किया जा सकता है। पहला- पूर्णकालिक लेखकों द्वारा तथा दूसरा- अल्पकालिक लेखकों द्वारा। पूर्णकालिक लेखक लेखन कार्य हेतु ही स्थायी, रूप से नियुक्त किये जाते हैं। तथा पूरी तरह से पाठ लेखन के लिए ही समर्पित समझे जाते हैं । इस प्रकार के लेखकों को नियुक्ति करने से लेखन कार्य अबाध गति एंव संस्थान की आवश्यकतानुसार चलता रहता है किन्तु इस प्रकार के लेखकों की सबसे बड़ी कमी यह होती है कि इनसे अपने विषय के अतिरिक्त कोई अन्य लेखन कार्य नहीं कराया जा सकता है। अतः इनके स्थान पर अल्पकालिक लेखकों की नियुक्ति का प्रचलन अधिक उपयोगी माना जाता है।

अल्पकालिक लेखक प्रायः कालेजों / विश्वविद्यालयों के पूर्णकालिक शिक्षक होते हैं वे अपने विषयों से सीधे जुड़े जाते है। तथा विषय सामग्री पर उनका स्वामित्व होता है। अतः सामान्य प्रशिक्षण अथवा समुचित निर्देशन के उपरांत वे दूरवर्ती शिक्षा हेतु पाठों को लिखने में पूर्णता सक्षम होते हैं। किन्तु अच्छे शिक्षक प्रायः पाठ लेखन कार्य को स्वीकार करने की इच्छा नहीं रखते है। इसका कारण इस कार्य हेतु बहुत कम पारिश्रमिक दर होती है। अतः अच्छे एवं प्रभावशाली शिक्षकों को पाठ लेखन हेतु आकर्षित करने के लिए इसकी पारिश्रमिक दरो में पर्याप्त वृद्धि की जानी चाहिए।

7.4.2 टीम द्वारा लेखन

दूरवर्ती शिक्षा में पाठ इकाई यद्यपि एक ही विषय से सम्बन्धित होती है किन्तु एक ही लेखक के स्थान पर यदि उसे उसी विषय के विभिन्न विशेषज्ञों द्वारा एक साथ मिलकर तैयार किया जाता है तब वह अधिक प्रभावी हो सकती है। इसी दृष्टि से मुक्त विश्वविद्यालयों द्वारा प्रायः पाइ लेखन हेतु एक लेखक मण्डल की नियुक्ति की जाती है। जिसमें विषय विशेषज्ञों के अतिरिक्त मुद्रण एवं सम्पादन से सम्बन्धित विशेषज्ञ भी सम्मिलित किये जाते है। इस टीम में निम्नलिखित व्यक्तियों को सम्मिलित किया जा सकता है।

1. संयोजक या अध्यक्ष: संयोजकसामग्री निर्माण के सभी पक्षों के लिए उत्तरदायी होता है।

2. पाठ लेखक: वे विषय विशेषज्ञ होते है तथा पाइ सामग्री नियोजन, चयन, लेखन, व्यावहारिक विधियों के प्रावधान, मूल्यांकन सामग्री निमाण आदि के लिए उत्तरदायी होते है।

3. सम्प्रेषण माध्यम निर्माता: श्रव्य- दृश्य सामग्री के निर्माण हेतु उत्तरदायी होते है।

4. शैक्षिक तकनीकी विशेषज्ञ: स्वतः अनुदेशानात्मक सामग्री को प्रभावी बनाने (जैसे-उद्देश्यों की परिभाषित करने, शिक्षण अधिगम विधियों को चुनने तथा उन्हे सही ढंग से प्रयुक्त करने आदि के लिए उत्तरदायी होते है।

5. सम्पादक: लेखकों को अन्तर्वस्तु को प्रभावशाली ढंग से प्रस्तुत करने, उसमें निखार लाने तथा उसकी निरन्तरता एवं तारतम्यता को सुनिश्चित करने में सहायता प्रदान करता है वह सम्पूर्ण सामग्री पर नियंत्रण भी रखता है।

6. ग्राफिक प्रारूप निर्माता: पाठ सामग्री को कलात्मक ढंग से प्रस्तुत करने, चित्रों, ग्राफों आंकड़ो को व्यवस्थित एवं सुरूचिपूर्ण ढंग से प्र्रस्तुत करने में लेखकों की सहायता करता है। मुद्रण की टाइप शैली को सुनिश्चित करने में भी मानव प्रमुख भूमिका निभाता है।

7.5 पाठ सामग्री का सम्पादन

पाठ लेखन के पश्चात् उसकी पाण्डूलिपि मुद्रण हेतु भेजी जानी होती है। किन्तु मुद्रण से पूर्व उसे सम्पादित करने की आवश्यकता होती है। सम्पादक को पाठ्यक्रम सामग्री निर्माण के तीन स्तरों पर काय्र करना होता है।

- वह अधिगम उपलब्धियों के सन्दर्भ में पाठ सामग्री की शैक्षिक प्रभावशीलता को सुनिश्चित करता है।
- अन्तर्वस्तु की उपयुक्तता के सम्बन्ध में निर्णय लेने में सहायकी की सहायता करता है तथा
- भाषा एवं शैली की शुद्धता एंव उपयुक्तता की जाँच करता है।

इस प्रकार एक अच्छा सम्पादक पाठ सामग्री में पर्याप्त सुधार ला सकता है। उसका कार्य शैक्षिक एवं प्रशासनिक दोनों तरह का होता है। दूरवर्ती शिक्षा से सम्बन्धित सम्पादक का कार्य अन्य सम्पादकों (पुस्तकों, समाचार पत्रों, पत्रिकाओं आदि) से भिन्न होता है। क्योंकि यहाँ पर पाठ सामग्री के द्वारा शिक्षार्थी को प्रभावी अधिगम प्रदान करना होता हैं तथा निर्धारित उद्देश्यों की पूर्ति भी करनी होती है। इन्टरनेशलन एकस्टेंशन कॉलेज मैनुअल में दूरवर्ती शिक्षण सामग्री के सम्पादक के कार्यों की जो अनुसूची प्रस्तुत की गई है, उसके अनुसार सम्पादक के कार्य निम्नलिखित हैं-

- पाठ्यक्रम लेखन हेतु लेखकों की नियुक्ति करना/अल्पकालिक सेवायें प्राप्त करना।
- लेखकों को लेखन हेतु तैयार करना।

- लेखकों की सुविधा हेतु पाठ्यक्रम विकास की रूपरेखा तैयार करना।
- इकाई की संरचना के सम्बन्ध में निर्णय लेना।
- लेखक को विषय सामग्री एवं छात्र क्रियाओं के प्रावधान को प्रस्तुत करने हेतु सामान्य निर्देश प्रदान करना।
- दूरवर्ती शिक्षार्थियों को अध्ययन हेतु सुझाव प्रदान करना।
- शिक्षार्थियों के अध्ययन स्तर के सम्बन्ध में निर्णय लेना|
- पाण्डुलिपि की भाषा को ठीक करना।
- मुद्रण से पूर्व सामग्री की विधिवत् जाँच करना (मुख्य रूप से शीर्षकों, उपशीर्षकों, वर्तनी, विराम चिन्हो आदि की जाँच।
- कापी सम्पादन
- मुद्रण एवं उत्पादन
- पाठ्यक्रम रखरखाव एंव पुनरीक्षण
- समन्वय, लेखन एंव उत्पादन
- सम्प्रेषण माध्यम का चयन (विशेष रूप से श्रव्य दृश्य कार्यक्रम हेतु)।

7.6 सम्पादन की प्रक्रिया

सम्पादन प्रक्रिया के अन्तर्गत सामान्यतया निम्नलिखित पदो का अनुसरण किया जाता है।

7.6.1. लिखित सामग्री को व्यवस्थित एवं संशोधित करना

यदि इकाई/पाठ किसी टीम द्वारा लिखा गया होता है तथा उस टीम में सम्पादक भी सम्मिलित होता है तब उस सामग्री का सम्पादन सरल होता है। किन्तु यदि लेखन कार्य किसी एक व्यक्ति द्वारा किया गया होता है। तब सम्पादक को कई प्रकार के दायित्वों को निर्वहन करना होता है। फिर भी दोनों स्थितियों में लिखित सामग्री कच्चे माल की तरह की होती है। इस सामग्री को उसी रूप में दूरवर्ती शिक्षण हेतु प्रयुक्त नहीं किया जा सकता है। इस कच्ची सामग्री को विषय विशेषज्ञों एवं शैक्षिक तकनीकी विशेषज्ञों के द्वारा अथवा उनकी सलाह के अनुसार संशोधित, परिवर्धित एंव व्यवस्थित करना होता है। जिससे वह दूरवर्ती शिक्षार्थियों के लिए उपयोगी सिद्ध हो सके। इस प्रक्रिया में अन्तर्वस्तु को ब्लाक, इकाइयों, पाठों के रूप में शिक्षार्थी को

भेजने हेतु व्यवस्थित भी किया जाता है। किन्तु इस प्रक्रिया से पूर्व सम्पादक को अन्तर्वस्तु, प्रस्तुतीकरण, भाषा शैली आदि की उपयुक्तता को सुनिश्चित करना आवश्यक होता हैं अतः इस प्रक्रिया में निम्नलिखित बिन्दुओं पर सम्पादक को ध्यान देना होता है।

अन्तर्वस्तु :इसकी उपयुक्तता, कठिनाई, विस्तार, शिक्षण अधिगम प्रभावशीलता आदि के सम्बन्ध में निर्णय लेना।

पाठ्य वस्तु की संरचना: अन्तर्वस्तु को प्रस्तुत करने के ढंग की जाँच करना अर्थात इस बात का निर्णय लेना कि क्या पाठ्य पुस्तक स्वतः अनुदेशात्मक सामग्री का यप ले सकी है? इसके लिए सम्पादक को यह देखना होता है कि सामग्री प्रस्तुत करने के साथ साथ पाइ की भूमिका, उसके उद्देश्यों, भागों एवं अनुभागों, अन्तर्वस्तु के अनुक्रम, पृष्ठपोषण आदि की व्यवस्था किनते अच्छे ढंग से की गई है। इसके लिए वह तकनीकी विशेषज्ञों की सहायता भी प्राप्त कर सकता है। पाठ्य पुस्तक की संरचना के प्रमुख बिन्दुओं का संक्षिप्त विवरण नीचे दिया जा रहा है।

भूमिका: किसी भी इकाई/पाठ/पुस्तक में भूमिका का बहुत महत्वपूर्ण स्थान होता है। भूमिका शिक्षार्थी को पाठ अथवा इकाई को पढ़ने के लिए तैया एवं प्रोत्साहित करने में सहायता करती है। इससे शिक्षार्थी को यह जानने का अवसर मिलता है कि इकाई किस या किन विचार बिन्दुओं से सम्बन्धित है। भूमिका में वर्तमान इकाई से पूर्व एवं बाद की इकाई का सम्बन्ध भी स्थापित करने का प्रयास किया जाना चाहिए। इससे शिक्षार्थी को नवीन ज्ञान से अपने पूर्व ज्ञान एवं अनुभवों को जोड़ने का अवसर प्राप्त होता है।

उद्देश्य एवं प्राप्य उद्देश्य: उद्देश्यों के स्पष्टीकरण अर्थात उन्हे व्यावहारिक रूप में लिखकर प्रस्तुत करने से शिक्षार्थी को इस बात का पूर्व आभास हो जाता है। कि इकाई को पढ़ने के पश्चात उसकी योग्यता एवं क्षमता में किस प्रकार के और कितने परिवर्तन हो सकेंगे। इससे उसे यह भी पता लग जाता है कि लेखक द्वारा यह सामग्री क्यो प्रस्तुत की गई है। दूरवर्ती शिक्षार्थी के लिए उद्देश्यों का स्पष्टीकरण और भी अधिक महत्वपूर्ण होता है क्योंकि इससे उसे सामग्री की उपयोगिता के बारे में सही जानकारी मिलती है। जिससे वह उसके अध्ययन के प्रति अभिप्रेरित होता है।

प्रस्तुतीकरण: स्वतः अनुदेशनात्मक सामग्री को प्रभावी बनाने में उसके प्रस्तुत करने के ढंग का महत्वपूर्ण स्थान होता है। यदि सामग्री की सरल भाषा, उपयुक्त शीर्षकों, छोटे छोटे पैराग्राफों, छोटे छोटे भागों, पर्याप्त एवं उपयुक्त उदाहरणों के साथ प्रस्तुत किया जाता है तो शिक्षार्थी की उसके अध्ययन में रूचि बनी रहती है तथा वह सामग्री उसे बोझिल नहीं लगती है। अतः सम्पादक का यह भी दायित्व होता है कि वह सामग्री को

शिक्षार्थी की उपयोगिता की दृष्टि से व्यवस्थित करे अथवा इसके लिए लेखक को पहले से ही उपयुक्त निर्देश दे। अन्तर्वस्तु को प्रभावी बनाने वाले प्रमुख संरचनात्मक तत्व निम्नलिखित हो सकते है।

- अन्तर्वस्तु को विचार बिन्दुओं के आधार पर उपयुक्त भागों एवं उपभागों में विभक्त करना।
- सरल एवं स्पष्ट भाषा का प्रयोग।
- छोटे वाक्यों एवं छोटे पैराग्राफों का प्रयोग।
- वार्तालाप शैली का अधिक से अधिक प्रयोग।
- चित्रों, रेखाचित्रों, ग्राफों आंकड़ों का आवश्यकतानुसार प्रयोग।
- अन्तर्वस्तु का तार्किक क्रम में प्रस्तुतीकरण।
- स्वयं जाँच प्रश्नों का प्रावधान।
- पुनर्बलन एवं पृष्ठपोषण का प्रावधान।
- रूचिकर सामग्री।
- सारांश का प्रस्तुतीकरण।
- गृहकार्य की पर्याप्त संख्या एंव उसकी उपयुक्तता

मुद्रण से पूर्व पाण्डुलिपि का पुनरीक्षण- लिखित सामग्री की अन्तर्वस्तु एंव संरचना से सन्तुष्ट होने के पश्चात् भी सम्पादक को एक बार छोटी- छोटी गलतियों जैसे शीर्षकों एंव उप शीर्षकों के प्रारम्भिक अक्षरों, पैराग्राफ के आरम्भ हेतु छोड़े गये स्थान, विराम चिन्हों आदि को सुधारा जा सकता है। इस स्तर पर विषय विशेषज्ञों एवं भाषा विशेषज्ञों से भी पाण्डुलिपि का पुनरीक्षण कराया जा सकता है। विशेषज्ञों के सुझावों के आधार पर सम्पादक पाण्डुलिपि में स्वंय भी आवश्यक संशोधन कर सकता है किन्तु अन्तर्वस्तु में अधिक संशोधन हेतु लेखक से सहमति लेनी आवश्यक होती है तथा इसके लिए उसे विश्वास में भी लिया जाना चाहिए।

मुद्रण हेतु पाण्डुलिपि की टाइप कॉपी तैयार करना- लेखक द्वारा हस्तलिखित पाण्डुलिपि को मुद्रण स्टाफ विशेष रूप से कम्पोजीटर को पढ़ने में कभी कभी कठिनाई का सामना करना पड़ता है क्योंकि विभिन्न लेखकों की लिखावट अलग अलग होती है तथा कुछ की लिखावट तो अपठनीय ही होती है। अतः मुद्रण से पूर्व पाण्डुलिपि की टाइप कॉपी तैयार करना ही इसका एकमात्र विकल्प होता है| पाण्डुलिपि की टाइप कॉपी

तैयार करना, करवाना सम्पादक का ही कार्य होता है तथा इसे सम्पादन प्रक्रिया का एक महत्वपूर्ण पक्ष माना जाता है। इसे कॉपी सम्पादन के नाम से भी जाना जाता है।

कॉप सम्पादन हेतु टाइपिस्ट को आवश्यक निर्देश देने होते है तथा थोड़े थोड़े अन्तराल पर उसके द्वारा टंकित सामग्री का निरीक्षण भी करते रहना आवश्यक होता है। पाण्डुलिपि की तैयारी के समय छूटे हुए अनेक आवश्यक संशोधनों को टाइप के समय पूरा किया जा सकता है। सामान्यतया टाइप कॉपी की दो प्रतियाँ तैयार करवायी जाती है। एक कॉपी सम्पादक के अपने लिए होती है तथा दूसरी कॉपी मुद्रक के लिए। किन्तु मुद्रक के पास भेजने से पूर्व टाइप कॉपी की सावधानीपूर्वक जाँच आवश्यक होती है। यह जाँच मुख्य रूप से शीर्षकों, इकाई के विभिन्न भागों एवं उपभागों को समुचित ढंग से टाइप द्वारा प्रस्तुत करने, वर्तनी की अशुद्धियों को दूर करने, विराम चिन्हों को शुद्ध करने, पैरोग्राफों के बीच समान दूरी छोड़ने, आकड़ों एवं रेखाचित्रों को सही टाइप करने, तकनीकी शब्दों को सही ढंग से प्रस्तुत करने, अभ्यास कार्यों को सही स्थान पर प्रस्तुत करने आदि के बारे में की जानी होती है। अतः सम्पादक को इस कार्य को सावधानीपूर्वक करना चाहिए तथा टाइप कॉपी में आवश्यक संशोधन करने के उपरान्त एक कॉपी मुद्रक सौंपनी चाहिए तथा दूसरी प्रति अपने पास सुरक्षित रखनी चाहिए

मुद्रण के प्रकार के सम्बन्ध में निर्णय लेना- मुद्रण तकनीकी के विकास ने मुद्रण के अनेक साधन भी विकसित किये हैं। सम्पादक शैक्षणिक के साथ साथ प्रशासनिक अधिकारी भी होता है। अतः अपन आवश्यकताओं एवं संसाधनों के अनुसार उसे मुद्रण के प्रशासनिक तरीके का भी चयन करना होता है। कभी कभी यह निर्णय संस्था प्रधान/प्रबन्धक सम्पादक मण्डल द्वारा भी किया जाता है किन्तु सभी स्थितियों में सम्पादक की भूमिका महत्वपूर्ण होती है। अतः मुद्रण के तरीके बारे में उसे ही निर्णय ही लेना होता है। मुद्रण के विभिन्न तरीकों के अपने लाभ एवं कमियाँ होती है। अत- उनकी सक्षिंप्त चर्चा यहाँ पर समीचीन प्रतीत होती है।

स्वतः अनुदेशानात्मक सामग्री के मुद्रण हेतु सामान्यतया चार साधनों का प्रयोग किया जाता है।

1. फोटोस्टट कॉपी मशीन
2. स्टेंलिस डुप्लीकेट मशीन
3. परम्परागत मुद्रण तकनीक
4. आफसेट लिथो मुद्रण तकनीक

फोटोकॉपी मशीन से टाइप की गई सामग्री की हूबहू प्रतियाँ प्राप्त की जा सकती है। किन्तु इस मशीन से फोटो प्रतियाँ तभी निकाली जानी चाहिए जब टाइप की गई सामग्री सुस्पष्ट एंव बहुत ही कम त्रुटियाँ वाली हो तथा इन त्रुटियों को इस प्रकार संशोधित किया गया हो तथा उससे टाइप की स्पष्टता पर कोई विपरीत प्रभाव न पड़ा हो। यह प्रणाली तभी उपयोगी होती हैं जब शिक्षार्थियों की संख्या कम हो तथा सामग्री की बहुत प्रतियाँ तैयार करनी हो क्योंकि अधिक संख्या में प्रतियाँ निकालने पर यह बहुत खर्चीली बैठती है।

स्टेंलिस डुप्लीकेटिंग मशीन का प्रयोग भी कम संख्या में प्रतियों की आवश्यकता होने पर किया जाना चाहिए। यह विधि फोटो कापियर के प्रयोग की अपेक्षा कम खर्चीली होती है। इसमें विषय सामग्री को स्टेंसिल कागज पर टाइप अथवा स्टेंसिल पेन के प्रयोग से चित्रित किये जा सकते हैं । टाइप किये हुए अर्थात कटे हुए स्टेंसिल पेपर को डुप्लीकेट मशीन पर चढ़ाकर उपयुक्त रंग की स्याही का प्रयोग करके डुप्लीकेट प्रतियाँ निकाली जाती है। यह मशीन हस्तचालित भी होती है तथा बिजली द्वारा चलने वाली भी। विद्युत चालित मशीनों से प्राप्तियाँ निकालना बहुत कम खर्चीला होता है। तथा इसकी गुणवत्ता भी अच्छी होती है।

परम्परागत मुद्रण तकनीक के अन्तर्गत धातु के उभरे हुए अक्षरों के माध्यम से पाठ सामग्री को मुद्रित किया जाता है। ये अक्षर अलग अलग होते हैं तथा प्रत्येक अक्षर का एक रखने का खाना या बॉक्स होता है। कुशल तकनीशियन जिसे कम्पोजिटर कहा जाता है, के द्वारा इन धातु के अक्षरों से पाठ सामग्री की शब्द, वाक्य पैराग्राफ एवं पृष्ठवार कम्पोजिंग की जाती है। पृष्ठों के आकार के अनुसार एक या अधिक पृष्ठों के आकार के अनुसार एक या अधिक पृष्ठों का एक फर्मा कई पृष्ठों को एक साथ मुद्रित करने वाला ब्लाक तैयार किया जाता है। इस फार्मा के अक्षरों के ऊपर छपाई स्याही लगाकर प्रेस मशीन द्वारा एक फर्मा से हजारों स्पष्ट प्रतियाँ बिना किसी दोष के बनाई जा सकती है। इस विधि से ग्राफ, रेखाचित्रों, चित्रों आदि के लिए अलग से कलाकारों द्वारा मुद्रण हेतु ब्लाक तैयार किये जाते है जिन्हें आवश्यकतानुसार फर्मा में स्थान निश्चित करके समायोजित किया जाता है। कुछ समय पहले तक इसी विधि का सर्वाधिक प्रयोग प्रचलित था।

आफसेट लिथो मुद्रण, मुद्रण की नवीन तकनीक है। इसके अन्तर्गत पाठ सामग्री को फोटोग्राफिक्स माध्यम से कागज, प्लास्टिक अथवा धातु प्लेट पर परिवर्तित स्थानान्तरित कर लिया जाता है तथा इससे आफसेट लिथो सिद्धान्त के आधार पर हजारों प्रतियां सरलता से बनाई जाती है। आफसेट लिथो सिद्धान्त इस तथ्य पर आधरित है कि तेल और पानी आपस में नहीं मिल पाते है। अतः इसमें मुद्रण हेतु प्रयुक्त की जाने वाली प्लेट तैलीय होती है। जिस पर लगाई जाने वाली स्याही उससे मिलकर चिपकती नहीं है। इस प्रकार हजारों प्रतियाँ बहुत कम खर्चे में बहुत अधिक सफाई के साथ तैयार की जा सकती है। बड़ी संख्या में पुस्तको की छपाई हेतु वर्तमान समय में इसी विधि का प्रयोग किया जा रहा है।

मुद्रक को आवश्यक निर्देश प्रदान करना- स्वतः अनुदेशनात्मक सामग्री को प्रस्तुत करने का ढंग अर्थात सामग्री की साज सज्जा (आवरण पृष्ठ, इकाई का शीर्षक, छपाई की कलात्मकता, पृष्ठ का आकार तथा कागज की गुणवत्ता आदि) शिक्षार्थी को इकाई का शीर्षक आकर्षित करता है। अतः सम्पादक को इन बिन्दुओं पर ध्यान देना होता है। इसके लिए उसे मुद्रक को आवश्यक निर्देश देने होते हैं। मुद्रक को उसके द्वारा मुख्य रूप से पृष्ठों के आकार प्रकार, मुद्रण हेतु प्रयुक्त किये जाने वाले अक्षरों के आकार, मोटाई एवं शैली तथा आवरण पृष्ठ के शीर्षक एवं परिचयात्मक चित्र आदि के बार में उपयुक्त निर्देश दिये जाने चाहिए।

अक्षरों के आकार को तकनीकी भाषा में पिच कहा जाता है। इसका अर्थ यह होता है कि एक इंच की लम्बाई में कितने अक्षर समायोजित किये जाने है। उदाहरणार्थ- एक इंच में 10 अक्षर के समायोजन को 10 पिच वाले अक्षर कहा जाता है। इसी प्रकार अक्षरों की मोटाई को तकनीकी भाषा में प्वांइट के नाम से जाना जाता है। जितने अधिक प्वांइट का अक्षर होगा, उसकी मोटाई उतनी ही अधिक होगी। शीर्षकों के लिए अधिक प्वांइट वाले (15 से लेकर 20 प्वांइट तक) तथा सामान्य पाठ सामग्री के लिए प्रायः 10 प्वांइट के अक्षर प्रयुक्त किये जाते हैं। मुद्रण की शैली हेतु प्रयुक्त अक्षरों को टाइप-फेस के नाम जाना जाता है। मुद्रण की शैली सामान्य, मोटी एवं इटेलिक्स हो सकती है। पाठ की अधिकांश छपाई सामान्य शैली में की जानी चाहिए किन्तु कुछ आवश्यक बिन्दुओं जिन पर ध्यान आकृष्ट करने की अधिक आवश्यकता होती है की छपाई मोटी अथवा इटेलिक्स शैली में की जा सकती है।

आवरण पृष्ठ को कलात्मक ढंग से प्रस्तुत करने हेतु डिजाइनर की सेवायें ली जानी चाहिए| आवरण पृष्ठ के बाद शीर्षक पृष्ठ की एक ओर (सीधी तरफ) पुस्तक अथवा इकाई का शीर्षक, संस्थान का नाम, लेखक या लेखक मण्डल का नाम एवं प्रकाशक का नाम दिया जा सकता है। तथा दूसरी ओर (पीछे की तरफ) प्रकाशन सम्बन्धी संकेत जैसे- श्रंखला की संख्या, कॉपीराइट, छपाई का वर्ष, संस्करण आदि के बार में जानकारी दी जानी चाहिए। विषय सूची पृष्ठ पर पूरी इकाई/पुस्तक के सभी अध्यायों एवं अध्यायों के अन्तर्गत आने वाले प्रमुख बिन्दुओं/शीर्षकों की जानकारी दी जानी चाहिए।

कम्पोजिंग की शुद्धता की कच्चे मुद्रण द्वारा जाँच- मुद्रण-स्टाफ अपने कार्य में, तो कुशल हो सकता है किन्तु वे विषय अथवा विषय सामग्री के विशेषज्ञ नहीं होते हैं। कम्पोजिटर द्वारा पाठ सामग्री की कम्पोजिंग यद्यपि सावधानी पूर्वक की जाती है किन्तु कभी कभी जल्दबाजी में अथवा थकान आदि के कारण कुछ गलतियाँ हो जाती है। इसके अतिरिक्त विषय सामग्री की कम समझ होने के कारण भी कुछ त्रुटियों का होना स्वाभाविक होता हैं। अतः कम्पोजिंग के पश्चात् एक पृष्ठ अथवा पूरे ब्लोक की कच्ची छपाई की जाती है। इस

कच्ची मुद्रित सामग्री की पुनः जाँच की जाती है। तथा वास्तविक टाइप कॉपी से इसको अक्षर अक्षर एवं विराम चिन्हो आदि को मिलाया जाता है। यह कार्य प्रुफ रीडिंग कहलाता है।

अच्छे मुद्रकों के स्टाफ में प्रुफ रीडर भी होते हैं किन्तु फिर भी इस कार्य का अन्तिम दायित्व सम्पादक का ही होता है। कही-कही पर यह कार्य लेखक को ही करना होता है इनमें से किसी के भी द्वारा प्रुफ रीडिंग की जा सकती है। किन्तु यह कार्य बहुत ही सावधानी एवं धैर्यपूर्वक किया जाना चाहिए क्योंकि रीडिंग के बाद भी कोई त्रुटि रह जाती है तब त्रुटि मुद्रित सामग्री में सदैव बनी रहेगी तथा उसको दूसरे संस्करण में ही दूर किया जा सकेगा। अतः सम्पादक को प्रूफ रीडिंग का कार्य स्वंय अथवा अपनी देख-रेख में किसी कुशल स्टाफ से करवाना चाहिए।

कम्पोजिंग की सामान्य त्रुटियाँ निम्नलिखित प्रकार की हो सकती है-

- वर्तनी सम्बन्धी अशुद्धियाँ
- किसी अक्षर का छूट जाना
- किसी लाइन अथवा पैराग्राफ का छूट जाना
- विराम चिन्हो की गलतियाँ
- अन्तर्वस्तु का गलत व्यवस्था
- शब्दों अथवा पंक्तियों अथवा पैराग्राफो के बीच असमान दूरी या रिक्त स्थान का छोड़ा जाना
- चित्रों, अभ्यास कार्यों आदि के स्थान एवं प्रस्तुतीकरण क्रम में त्रुटि
- बड़े एवं छोटे अक्षरो का गलत प्रयोग

प्रुफ रीडिंग के स्तर: प्रुफ रीडिंग तीन स्तरों पर की जाती है।

1. प्रारम्भिक स्तर: कम्पोजिटर/मुद्रक द्वारा मुद्रा अक्षरो को ट्रे में बैठाते समय ही कुछ गलतियों का आभास हो जाता है जिसे वह स्वयं दूर कर लेता है।

2. सामान्य जाँच स्तर: मुद्रक द्वारा पृष्ठों को चिन्हांकित करने के पश्चात कच्ची छपाई की सामान्य जाँच की जाती है। यह जाँच बहुत ही सामान्य तथा मात्र दिखावटी होती है। इसे आभासी प्रुफ रीडिंग कहा जाता है।

3.अन्तिम जाँच स्तर: इस स्तर पर सम्पादक अथवा लेखक द्वारा टाइप कॉपी से एक एक अक्षर/शब्द मिलाते हुए प्रत्येक पक्ष की जाँच की जाती है।

7.7 नवीन संस्था/ नवीन पाठ्यक्रम को प्रारम्भ करने हेतु सम्पादक के कार्य:

दूरवर्ती शिक्षण सामग्री निर्माण का पर्याप्त अनुभव होने पर सम्पादक को कोई नया पाठ्यक्रम प्रारम्भ करने हेतु पाठ सामग्री का निर्माण करने अथवा नई दूरवर्ती संस्था के लिए पाठ्यक्रम तैयार करने में कोई विशेष कठिनाई नहीं होती है। किन्तु यदि संस्था भी नई हो, नया पाठ्यक्रम भी प्रारम्भ करना हो तथा सम्पादक को दूरवर्ती शिक्षण सामग्री के निर्माण का पूर्व अनुभव भी न हो तब सम्पादकीय कार्य कठिन होता है तथा सम्पादक को कई प्रकार की समस्याओं का सामना करना पड़ता है। इस स्थिति में सम्पादक को स्वतः अनुदेशनातम्क सामग्री के निर्माण हेतु निम्नलिखित स्तरों से गुजरना होता है।

1. विषय विशेषज्ञों से सम्पर्क करना तथा उनके माध्यम से अच्छे लेखकों के बारे में जानकारी प्राप्त करना।

2. लेखकों से सम्पर्क करना, उन्हे पाठ लेखन के लिए तैयार करना, दूरवर्ती शिक्षा हेतु पाठ लेखन की विशेषताओं से उन्हे अवगत कराना तथा लेखन हेतु सहमति पत्र तैयार करवाना।

3. यदि पाठ्यक्रम की जटिलता को देखते हुए एक से अधिक लेखकों की आवश्यकता हो तो लेखक मण्डल की व्यवस्था करना।

4. लेखक/लेखकों से लिखित सामग्री प्राप्त करना|

5. लिखित सामग्री पर विषय विशेषज्ञो की राय लेना तथा उसमें सुधार हेतु उपयुक्त टिप्पणियों को अंकित करवाना।

6. विषय विशेषज्ञों के सुझावों के अनुसार विषय सामग्री का पुनरीक्षण करवाना अथवा आवश्यकता होने पर दुबारा लिखवाना।

7. भाषायी विशेषज्ञों द्वारा भाषा सम्बन्धी त्रृटियों का निराकरण करवाना।

8. शैक्षिक तकनीकी विशेषज्ञों द्वारा विषय सामग्री को दूरवर्ती शिक्षार्थियों के उपयोग की दृष्टि से प्रारूपित करवाना।

9. विषय सामग्री के प्रारूप को अन्तिम रूप देने में दूसरे दूरवर्ती शिक्षण संस्थाओं में पहले से उपलब्ध सामग्री की सहायता प्राप्त करना।

10. विषय सामग्री तथा उसके प्रारूप के बारे में दूरवर्ती शिक्षा विशेषज्ञों की राय लेना एवं मतानुसार उसमें संशोधन करना।

11. पाण्डुलिपि की टाइप कॉपी तैयार करवाना।

12. टाइप कॉप की जाँच करना।

13. टाइप कॉपी को अन्तिम रूप देना तथा उसकी दो प्रतियाँ (मास्टर कॉपी) तैयार करवाना।

14. टाइप कॉपी को मुद्रक को सौंपना तथा छपाई हेतु उसे उपयुक्त निर्देश प्रदान करना।

15. प्रुफ रीडिंग करना अथवा उसके लिए उपयुक्त व्यवस्था करना।

16. आवश्यक संख्या में सामग्री की मुद्रित प्रतियाँ तैयार करवाना।

17. सामग्री के आवरण पृष्ठ को विषयानुकूल एवं आकर्षक बनाने हेतु कलाकारों/डिजाइनरों की सहायता प्राप्त करना।

18. पाठ इकाई की पुस्तिका तैयार करवाना।

इन उपर्युक्त कार्यों के निष्पादन में सम्पादक को अनेक प्रकार की कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। सबसे प्रमुख समस्या उपयुक्त लेखकों की सेवायें प्राप्त करने की होती है। विषय के अच्छे ज्ञाता लेखक तो मिल जाते हैं किन्तु वे प्रायः दूरवर्ती शिक्षण सामग्री को प्रस्तुत करने के ढंग से अनभिज्ञ होते हैं। ऐसे लेखकों को सही प्रशिक्षण की आवश्यकता होती है। अतः सम्पादक का यह भी दायित्व होता है कि वह दूरवर्ती शिक्षण सामग्री के लेखन हेतु लेखकों के समुचित प्रशिक्षण की भी व्यवस्था करें। दूरवर्ती शिक्षकों एवं लेखकों के प्रशिक्षण के बारे में सम्यक जानकारी अलग से एक अध्याय में दी गई है।

7.8 दूरवर्ती शिक्षा में अध्ययन सामग्री का महत्व:

दूरवर्ती शिक्षा से तात्पर्य शिक्षा के ऐसे गैर प्रचलित एवं अपरंपरागत उपागम से है जो परंपरागत शिक्षा के मानकों पर प्रश्न चिन्ह लगाता हुआ उससे इतर मानकों को प्राथमिकता प्रदान करता है। दूरवर्ती शिक्षा का महत्व पीटर्स के निम्न परिभाषा द्वारा स्पष्ट किया जा सकता है- "दूरवर्ती शिक्षा ज्ञान, कौशल एवं

अभिवृत्ति प्रदान करने की एक विधि है जिसे तकनीकी संचार माध्यमों के व्यापक प्रयोग के साथ साथ श्रम विभाजन एवं संगठनात्मक सिद्वान्तों के प्रयोग द्वारा तर्क संगत बनाया जा सकता है। इसमें विशेष रूप से उच्च स्तरीय शिक्षण सामग्री के पुनरनिर्माण का उद्देश्य निहित होता है जिससे छात्रों की बहुल संख्या को एक ही समय में जहॉ पर भी वह रह रहा हो अनुदेशन प्राप्त करना सम्भव होता है। यहाँ शिक्षण अधिगम का एक औद्योगिक रूप है। अध्ययन सामग्री किसी भी छात्र का सूचना का मूल स्त्रोत होता है, अध्ययन सामग्री विशेष रूप से दूरवर्ती शिक्षा में स्वअनुदेशनात्मक सामग्री के नाम से जाना जाता है। वास्तव में स्वअनुदेशनात्मक सामग्री का महत्व दूरवर्ती शिक्षा में इतना ही है जितना कि परमपरागत शिक्षा में पाठ्य सामग्री का। मुख्य रूप से अध्ययन सामग्री का महत्व निम्न बिन्दुओं पर अध्ययन किया गया है-

1. सूचना के स्त्रोत के रूप में,

2. शिक्षार्थी के लक्ष्य निर्धारण करने में,

3. आत्मविश्वास में ,

4. आत्म आकलन में,

5. अभिप्रेरित करने में,

6. सामाजिकता लाने में,

7. मनोवैज्ञानिक प्रवृत्ति के विकास करने में,

8. क्रमबद्ध ज्ञान प्राप्त करने में,

9. विशेष रूप से दूरस्थ विद्यार्थियो के लिए लाभदायक,

इसके अतिरिक्त निम्न महत्व हैं-

1. दूरवर्ती शिक्षा में अध्ययन सामग्री छात्र के लिए लचीली एवं आसानी से प्राप्त होने वाली सामग्री है।

2. दूरवर्ती शिक्षा में अध्ययन सामग्री छात्र के पाठ्यक्रम संबधी कठिनाई का निवारण करती है।

3. दूरस्थ शिक्षा में अध्ययन सामग्री छात्र को वास्तविक व कृत्रिम परिस्थियों में विभिन्न प्रकार के कैाशलों का अभ्यास कराती है।

4. दूरवर्ती शिक्षा में अध्ययन सामग्री शिक्षक के लिए एक महत्वपूर्ण उपकरण का कार्य करती है।

5. दूरवर्ती शिक्षा में अध्ययन सामग्री शिक्षक को अतिरिक्त बोझ से मुक्त कराती है।

7.9 दूरवर्ती शिक्षा में अध्ययन सामग्री की सीमाऐं

अध्ययन सामग्री की महत्ता तो दूरवर्ती शिक्षा में पायी जाती है परन्तु इस सामग्री का अध्ययन गहनता के साथ होना चाहिए वो नहीं हो पाता कारण अध्ययन सामग्री के प्रति जागरूगता का अभाव| इन अच्छाइयों के साथ अध्ययन सामग्रियों में कुछ कमियां भी पायी जाती हैं जो निम्न हैं-

- विषय विशेषज्ञ का अभाव,
- भावनात्मक शिक्षा का अभाव,
- पारस्परिक अन्तः क्रिया का अभाव,
- सैद्धान्तिक पक्ष की बहुलता,
- नवीनीकरण सूचनाओं का अभाव,
- आत्मगत स्वरूपों पर अधिक बल देना,
- उदासीन मुद्रित सामग्री,
- समस्या का पर्याप्त समाधान नहीं हो पाता,

अभ्यास प्रश्न

टिप्पणीः

1. प्रश्नों के उत्तर देने के लिए निम्न रिक्त स्थान का प्रयोग कीजिए।

2. अपने उत्तर की जॉच इकाई के अन्त में दिये गये उत्तरों से कीजिए।

प्रश्न 1. अध्ययन सामग्री का अर्थ स्पष्ट कीजिए।

उत्तरः-

....

....

....

....

....

प्रश्नः 2. अनुदेशन सामग्री से आप क्या समझते हैं?

उत्तरः-

....

....

....

....

....

....

प्रश्न 3. अनुदेशन सामग्री की किन्ही चार विशेषताओं को बताइये।

उत्तरः-

....

....

....

....

....

प्रश्न 4. पाठ्यवस्तु व स्वअनुदेशन सामग्री में अन्तर स्पष्ट कीजिए।

उत्तरः-

....

....

....

....

....

प्रश्न 5. स्वअनुदेशन सामग्री के मुख्य गुणों पर प्रकाश डालिए।

उत्तरः-

....
....
....
....
....
....

प्रश्न 6. दूरवर्ती शिक्षा में स्वअध्ययन सामग्री का महत्व समझाइये।

उत्तरः-

....
....
....
....
....
....

प्रश्न 7. दूरवर्ती शिक्षा में स्वअध्ययन सामग्री की सीमाओं को स्पष्ट कीजिए।

उत्तरः-

....
....
....
....
....
....

7.10 सारांश:

इस इकाई में अध्ययन सामग्री का अर्थ, प्रकार तथा अधिगम कर्ता के लिए किस प्रकार उपयोगी है आदि का प्रभावी ढंग से वर्णन किया गया है। अध्ययन सामग्री शिक्षक एवं शिक्षार्थी के बीच आधार होता है यह आधार जितना स्वच्छ,सरल, गुणात्मक होगा उतना ही अधिगम कर्ता लाभ प्राप्त करेगा। अध्ययन सामग्री को मुद्रित एवं अमुद्रित दो रूपों में विभाजित किया गया है तथा साथ ही साथ व्याख्या की गयी है कि यह अध्ययन सामग्री किस तरह हमारे जीवन में उपयोगी सिद्ब हो सकती है। इसके अतिरिक्त इस इकाई में अध्ययन सामग्री के विकास में निहित प्रमुख अंगो को सुचारू रूप से वर्णन किया गया है।

7.11 शब्दावली:

अल्पकालिक: अत्यधिक कम समय के लिए,

संप्रेषण : संचार का एक स्थान से दूसरे स्थान तक हस्तानान्तरण,

बोझिल: अत्यधिक भार या दबाव,

पाण्डुलिपि: वह प्राचीन लिपि जो तत्कालिक भाषा का प्रतिनिधित्व करती है,

7.12 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर:

उत्तर 1.अध्ययन सामग्री पाठ्यक्रम का घटक होता है जो छात्रों के शिक्षण अधिगम प्रकिया में सहयोगी आधार के रूप में उपयोगी होता है।

उत्तर 2. अनुदेशनात्मक सामग्री से अभिप्राय उस विधि व विधि में प्रयुक्त विभिन्न साधनों से होता है जिनकी सहायता से विषय सामग्री को शिक्षार्थी तक पहुचाया जाता है।

उत्तर 3. 1. इसकी अन्तर्वस्तु को बार बार दुहराने से शिक्षार्थी को विषय सामग्री को समझने तथा आगे बढ़ने का तरीका स्वंय प्राप्त होते जाना चाहिए।

2. इसमें इस बात के निर्देश दिये होने चाहिए कि शिक्षार्थी को विषय सामग्री को किस प्रकार अध्ययन करना है।

3. इसमें सामग्री के अध्ययन से सम्बन्धित विभिन्न कार्यो को सम्पादित करने (जैसे इकाई के विभिन्न भागों पर दिया जाने वाला समय, गृहकार्य की तैयारी आदि) के बारे में उपयुक्त निर्देश दिये होने चाहिए।

4. शिक्षार्थी की विषय सामग्री में रूचि विकसित करने तथा उसे बरकरार रखने हेतु विशेष प्रयास के प्रावधान होने चाहिए।

उत्तर 4. पाठ्यवस्तु तथा स्वअनुदेशनात्मक सामग्री में अन्तर-

पाठ्यवस्तु:- 1.अध्यापकों के प्रयोग के लिए लिखी जाती हैं।

2. विस्तृत क्षेत्र के लिए निर्मित की जाती है।

3. एक मार्ग के द्वारा किया जाता है।

स्वअनुदेशनात्मक सामग्री- 1. अधिगमकर्ता के लिए लिखा जाता है।

2. युक्तिगत शिक्षार्थी हेतु प्रारूप तैयार किया जाता है।

3. शिक्षार्थी की आवष्यकता के अनुसार संरचित।

उत्तर 5. स्वअनुदेशनात्मक सामग्री के प्रमुख गुण निम्नलिखित हैं-

व्यक्तिगत अधिगम, स्वगति अध्ययन, निजी अधिगम, किसी समय, किसी स्थान तथा किसी संख्या पर उपलब्ध होना,प्रमाणीकृत विषय वस्तु,विशेषज्ञ विषय वस्तु।

उत्तर 6. अध्ययन सामग्री का महत्व निम्न बिन्दुओं से स्पष्ट किया गया है-

1. सूचना के स्त्रोत के रूप में,

2. शिक्षार्थी के लक्ष्य निर्धारण करने में,

3. अभिप्रेरित करने में,

4. मनावैज्ञानिक प्रवृत्ति के विकास करने में,

5. विशेष रूप से दूरस्थ विद्यार्थियों के लिए लाभदायक,

उत्तर 7. दूरवर्ती शिक्षा में अध्ययन सामग्री की सामाऐं निम्नवत् हैं-

विषय विशेषज्ञ का अभाव, भावनात्मक शिक्षा का अभाव, पारस्परिक अन्तः क्रिया का अभाव, सैद्धान्तिक पक्ष की बहुलता,नवीनीकरण सूचनाओं का अभाव।

7.13 सन्दर्भ ग्रन्थ सूचीः-

दूरवर्ती शिक्षा: डॉ0 सिया राम यादव,

शैक्षिक एवं व्यावसयिक निर्देशन: वर्मा एवं उपाध्याय,

दूरवर्ती शिक्षा: इग्नू पाठ्यसामग्री,

7.14 निबंधात्मक प्रश्न

1. अध्ययन सामग्री का अर्थ स्पष्ट कर इसके उद्देश्यों की व्याख्या कीजिए।

2. अध्ययन सामग्री के प्रकारों का विवेचन कीजिए।

3. दूरवर्ती शिक्षा में अध्ययन सामग्री के महत्व को स्पष्ट कीजिए।

4. दूरवर्ती शिक्षा में अध्ययन सामग्री की सीमाओं का उल्लेख कीजिए।

इकाई 8 – अनुदेशन के साधन (Modes of Instructions)

इकाई की रूपरेखा:-

8.1 प्रस्तावना

8.2 उद्देश्य

8.3 स्वअनुदेशित अध्ययन सामग्री

8.4 ऑडियो विज़ुअल सहायक सामग्री

8.5 ऑडियो विज़ुअल सहायक सामग्री के प्रकार

8.6 सूचना संचार प्रौद्योगिकी

8.6.1 अंतः क्रियात्मक विडियो

8.6.2 टेली कान्फ्रेंसिंग

8.6.3 इन्सेट

8.6.4 एडुसैट

8.6.5 शैक्षिक टेलीविजन

8.7 सारांश

8.8 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

8.9 संदर्भ ग्रंथ सूची

8.10 निबंधात्मक प्रश्न

8.1 प्रस्तावना

पिछले कुछ वर्षों में दूरस्थ शिक्षा, शिक्षा के क्षेत्र में मुख्य आधार के रूप में आधार गई है। नई-नई प्रौद्योगिकी के प्रयोग से दूरस्थ शिक्षा शिक्षार्थियों हेतु प्रभावी हो गई है। प्रस्तुत इकाई में विषय की उपयोगिता के सन्दर्भ में, परामर्शदात्री के कार्यों के रूप में, पाठ्य सामग्री के केन्द्र के रूप में , दुर्गम क्षत्रों में इनकी भूमिकाओं की चर्चा की गयी इसके अतिरिक्त इलैक्ट्रॉनिक मीडिया, अंतः क्रियात्मक विडियो, टेली कान्फ्रेंसिंग, सीसीटीवी, कम्प्यूटर नेटवर्किंग माध्यम, इन्सेट, एडुसैट और शैक्षिक टेलीविजन के उपयोग, शैक्षिक टेलीविजन के विषय, कार्यप्रणाली व शिक्षा के क्षेत्र में क्या-क्या उपयोग हैं, इसकी विस्तृत रूप में चर्चा की गई है।है। मुद्रित सामाग्रियों की रूपरेखा एवं प्रकारों को बताया गया है। स्व अनुदेशन अध्ययन सामग्री को की रूपरेखा एवं महत्व को स्पष्ट बताया गया है।

8.2 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई का अध्यनन करने के बाद आप :-

1. दूरस्थ शिक्षा में मुद्रित सामग्रियों के महत्व व उपयोगिता के बारे में जान जायेंगे।
2. मुक्त एवं दूरस्थ शिक्षा में मुद्रित सामग्रियों के विभिन्न प्रकारों से अवगत हो जायेंगे।
3. अंतः क्रियात्मक विडियो, टेली कान्फ्रेंसिंग, इन्सेट, एडुसैट और शैक्षिक टेलीविजन के शिक्षा के क्षेत्र में उपयोग के बारे में जान जायेंगें।

8.3 स्वअनुदेशित अध्ययन सामग्री

स्व अनुदेशित अध्ययन सामग्री (सिम) शिक्षा और प्रशिक्षण के सभी स्तरों पर शिक्षण - अधिगम प्रक्रिया में एक प्रमुख भूमिका निभाते हैं. इस सामग्री को विशेष रूप से शिक्षार्थियों को आंशिक रूप से या पूरी तरह से खुद के द्वारा अध्ययन करने के लिए सक्षम बनाया है और ट्यूटोरियल में प्रिंट "के रूप में वर्णित किया गया है। स्व - शिक्षण सामग्री को घर बैठ कर पढ़ाई, कंप्यूटर आधारित प्रशिक्षण, संकुल शिक्षण, लचीला अधिगम, स्वतंत्र सीखने, व्यक्तिगत सीखने, प्रोग्राम अनुदेश और इसके आगे जैसे कई अन्य नामों के साथ संबद्ध किया गया है। तेजी से किताबें और स्व - शिक्षण सामग्री के बीच के मतभेदों को संकरा कर रही है। स्कूलों और उच्च शिक्षा में स्व - शिक्षण सामग्री की तरह इस्तेमाल कर पाठ्यपुस्तकों को अधिक डिजाइन किया जा रहे हैं। उदाहरण के लिए, कई विश्वविद्यालयों में पाठ्यपुस्तकों को अधिक संरचित कर इस्तेमाल किया जा रहा हैं, जो कि एक विशिष्ट पाठकों पर लक्षित है, स्पष्ट उद्देश्यों और सीखने के परिणामों के लिए, पाठ में उपयुक्त

अंक पर गतिविधियों, परीक्षण आइटम डाल कर और एक मैत्रीपूर्ण शैली में लिखा गया है। एक स्व अनुदेशित अध्ययन सामग्री के अच्छे लक्षण क्या हैं? Rowntree (1997) अच्छी गुणवत्ता स्व अनुदेशित अध्ययन सामग्री के ग्रंथों हेतु निम्न सुझाव देते हैं-

1. छात्रों के एक विशिष्ट समूह से मेल खाने के लिए लिखा जा सकता है।
2. शिक्षार्थियों के अपने अनुभव के साथ संबंध बनाने हेतु।
3. शिक्षार्थियों को अपने स्वयं अधिगम कौशल को विकसित करने के लिए और साथ ही उन्हें अच्छी तरह से सामग्री जानने के लिए मदद करने के लिए।
4. विशेष रूप से अधिगम उद्देश्यों को स्पष्ट करते हैं (और शिक्षार्थियों को अपने स्वयं के उद्देश्यों को स्थापित करने के लिए भी मदद के लिए)।
5. एक तरीका है जो शिक्षार्थियों के लिए स्पष्ट है में संरचित है, उन्हें पाठ के माध्यम से मार्गदर्शन देने हेतु।
6. शिक्षार्थियों की मौजूदा कौशल या ज्ञान पर निर्माण

मुद्रित सामग्री

दूरस्थ शिक्षा संस्थायें, शेक्षिक अनुदेशन के लिए अधिकतर मुद्रित सामग्री पर ही निर्भर रहती है। प्रभावशाली संप्रेषण के लिए दूरस्थ शिक्षा संस्थायें अपने प्रत्येक कोर्स के लिए मुद्रित सामग्री तैयार कर उसका उपयोग करती है। यह मुद्रित सामग्री कोर्स के छात्रों के आयु वर्ग की विशेषताओं एवं आवश्यकताओं को ध्यान में रख कर विशेषज्ञों से तैयार कराई जाती है। दूरस्थ शिक्षा में शिक्षक एवं छात्रों का प्रत्यक्ष संपर्क संभव नही होता अत: यह सामग्री इस प्रकार से तैयार की जाती है की छात्र इसे पढ़ कर स्वयं अध्ययन कर, सीख सकें और सफलता प्राप्त कर सकें। मुद्रित सामग्री के निम्नलिखित प्रकार हैं-

1. पाठ्य पुस्तकें-इसमें विषय सामग्री को व्यवस्थित क्रम में प्रस्तुत करते हैं।
2. सन्दर्भ पुस्तकें- इनसायकलोपीडिया, शब्दकोश, वार्षिकी, पंचांग, जीवनियाँ, तथा भूगोलिक ग्रन्थ।
3. सामान्य पुस्तकें
4. धारावाहिक

8.4 ऑडियो विजुअल सहायक सामग्री

ऑडियो-विज़ुअल एड्स ने हमारे पढ़ाने और सीखने के तरीके में क्रांति की लहर पैदा की है। ये निर्देशात्मक उपकरण विषय वस्तु की समझ और अवधारण को बढ़ाने के लिए श्रव्य और दृश्य इंद्रियों को शामिल करते हैं। जैसे फोनोग्राफ, रेडियो, साइलेंट या मोशन पिक्चर्स, डायग्राम और टेलीविजन आदि, इनके द्वारा शिक्षक अधिक गतिशील और इंटरैक्टिव सीखने का माहौल बना सकते हैं। हालांकि, दृश्य-श्रव्य साधनों के प्रभावी उपयोग के लिए शिक्षकों को आवश्यक कौशल विकसित करने की आवश्यकता होती है, और स्कूलों को उपकरणों की खरीद के लिए बजट आवंटित करना चाहिए। सही प्रशिक्षण और संसाधनों के साथ, ऑडियो-विज़ुअल एड्स छात्रों के लिए शैक्षिक अनुभव में काफी सुधार कर सकते हैं, शिक्षा और सीखने की प्रक्रिया को अधिक सुलभ और आनंददायक बना सकते हैं।

शिक्षा की दुनिया में, समय के साथ शिक्षण विधियों का विकास हुआ है। पुराने समय में, पाठ्यपुस्तकें ही प्राथमिक शिक्षण सहायक सामग्री थीं, जिन्हें संदर्भ पुस्तकों, पत्रिकाओं और समाचार पत्रों द्वारा पूरा किया जाता था। हालाँकि, प्रौद्योगिकी (टेक्नोलॉजी) के क्षेत्र में प्रगति के साथ, ऑडियो-विज़ुअल एड्स (श्रव्य- दृश्य सामग्री) के रूप में जाने, जाने वाले नए उपकरण सामने आए हैं। ये सहायता, सीखने के अनुभव को बढ़ाने के लिए श्रवण और दृश्य इंद्रियों का उपयोग करती हैं। इस लेख में, हम दृश्य-श्रव्य साधनों के अर्थ के बारे में जानेंगे, ऐसे साधनों के उदाहरण प्रदान करेंगे और उनके विभिन्न प्रकारों पर चर्चा करेंगे।

8.5 ऑडियो विज़ुअल सहायक सामग्री के प्रकार

इस वर्ग में वे सभी साधन सामग्री तथा उपकरण शामिल किए जाते हैं जो हमारी श्रवण तथा चक्षु दोनों ही इन्द्रियों को एक साथ प्रभावित करते हैं और इस तरह देखकर तथा सुनकर दोनों तरह से ही ज्ञान प्राप्ति तथा हमारी सहायता करते है। दृश्य-श्रव्य सामग्री की प्रभावशाली क्रियाएँ निम्नलिखित है:-

(1) कम्प्यूटर (Computer)

(2) दूरदर्शन (Television)

(3) चलचित्र (Movie / Moving Picture)

1. कम्प्यूटर (Computer)

सूचना एवं सम्प्रेषण के इस युग में सहायक सामग्री के रूप में कम्प्यूटर का प्रयोग सभी विषयों में किया जा रहा है। सामाजिक अध्ययन भी इसका प्रयोग किया जाता है क्योंकि यह बालकों को अपने विषय में भूत, वर्तमान एवं भविष्य की जानकारी देता है एवं इसमें छात्र अपनी गति से सीखते हैं। छात्राओं की सीखने में रुचि बनी रहती है। अतः अधिगम के लिए छात्र तत्पर रहते है। इसकी सहायता से छात्राओं को प्रेरणा मिलती हैं। छात्र स्वानुशासित रहते हैं । कम्प्यूटर का शिक्षा के क्षेत्र में महत्वपूर्ण स्थान है। उपरोक्त विवरण में यह

तात्पर्य है कि कम्प्यूटर की सहायता से छात्र सामाजिक अध्ययन में दक्षता प्राप्त करने का प्रयत्न करते हैं एवं कम्प्यूटर उन्हें प्रत्येक क्षेत्र में सहायता प्रदान करता है।

शिक्षा के क्षेत्र में कम्प्यूटर (Computer in Field of Education)

शिक्षा के क्षेत्र में कम्प्यूटर का महत्व निम्न कारणों से है-

(1) कम्प्यूटर के द्वारा शिक्षा क्षेत्र से सम्बन्धित तथ्यों, आँकड़ों व सूचनाओं की प्राप्ति हो जाती है।

(2) कम्प्यूटर सह अनुदेशन द्वारा छात्रों को व्यक्तिगत अनुदेशन प्राप्त होता है। छात्र अपनी गति व क्षमता के अनुसार सीख सकते हैं।

(3) कम्प्यूटर द्वारा जटिल गणनाएँ काफी कम समय में की जा सकती हैं।

(4) इसके द्वारा तथ्यों को लम्बे समय तक संग्रहित करके रखा जा सकता है।

(5) छात्र किसी भी विषय-वस्तु को अपनी आवश्यकतानुसार पुनः दोहरा सकते हैं।

(6) कम्प्यूटर द्वारा किया गया मूल्यांकन निष्पक्ष होता है।

(7) उच्च शिक्षा के विभिन्न क्षेत्रों में कम्प्यूटर अत्यन्त उपयोगी है।

(8) विद्यालयों में कम्प्यूटर द्वारा छात्रों को उपचारात्मक शिक्षण दिया जा सकता है।

(9) प्रकरण को छात्रों की आवश्यकता व क्षमता के अनुसार पढ़ाया जा सकता है।

(10) कम्प्यूटर द्वारा छात्रों के अभिलेख सुरक्षित रखे जा सकते हैं।

(11) कम्प्यूटर में शिक्षक अपनी पढ़ायी जाने वाली सामग्री को संग्रहित कर भविष्य में आवश्यकतानुसार प्रयोग कर समय व श्रम की बचत कर सकते हैं।

(12) कम्प्यूटर छात्रों को विभिन्न प्रयोग के अवसर देता है।

2. दूरदर्शन (Television)

आज हम टेलीविजन के युग में निवास कर रहे हैं। सर्वप्रथम अमेरिका में हेराल्ड हण्ट नामक व्यक्ति ने इसका आरम्भ करते हुए कहा था, अब हमें परम्परागत शिक्षण तथा पिछड़ी हुई शिक्षा प्रणाली को त्यागकर टेलीविजन जैसी आधुनिक उपकरण द्वारा शिक्षा का आरम्भ करना चाहिए। आज विश्व के अनेक विकासशील देश इसे शिक्षा के एक सशक्त तथा उपयोगी साधन के रूप में काम में ले रहे है। दूरदर्शन शिक्षा से छात्र या सीखने वाले को प्रत्यक्ष उद्दीपन प्राप्त होते हैं। यह उसके ऊपर प्रत्यक्ष प्रभाव डालती है। यह अधिगम शिक्षण से सुसंगतता कायम करने में भी सहायक है साथ ही यह मितव्ययी भी है इसलिए शिक्षा के क्षेत्र में दूरदर्शन विशेष महत्व रखता है।

टेलीविजन के शैक्षिक लाभ (Educational Benefits of Television)

टेलीविजन के शैक्षिक लाभ निम्नलिखित हैं-

(1) यह एक दृश्य-श्रव्य सामग्री है जिसमें छात्र किसी कार्यक्रम को देख भी सकते हैं तथा सुन भी सकते हैं।

(2) अध्यापक के निजी विकास में भी दूरदर्शन सहायक सिद्ध हो सकता है।

(3) दूरदर्शन कार्यक्रम पाठ्यक्रम को विस्तृत करने और शैक्षिक कार्यक्रमों को सरलता तथा मितव्ययिता से समृद्ध करने में सहायक सिद्ध हो सकते हैं।

(4) स्क्रीन के माध्यम से दूरदर्शन कक्षा भवन में संसार की वास्तविकता को प्रस्तुत कर सकता है।

(5) इसके द्वारा बालकों का सर्वांगीण विकास होता है।

(6) यह विद्यार्थियों का ध्यान आकर्षित करने के लिए बहुत उपयोगी साधन है।

(7) टेलीविजन के कार्यक्रम को रिकॉर्ड किया जा सकता है व आवश्यकता पड़ने पर इसे पुनः देखा या दिखाया जा सकता है।

(8) इसके प्रयोग से शिक्षण में गतिशीलता बनी रहती है।

(9) इसमें किसी भी क्रिया या कार्य में लगने वाला समय नष्ट नहीं होता है।

(10) यह कम खर्चीला साधन है तथा इसके माध्यम से छात्रों की एक बड़ी संख्या का शिक्षण एक साथ हो सकता है।

टेलीविजन की सीमाएँ (Limitations of Television)

टेलीविजन की निम्नलिखित सीमाएँ हैं-

(1) यह भी रेडियों की तरह एक तरफा साधन है।

(2) इसमें पृष्ठपोषण का कोई स्थान नहीं होता है।

(3) व्यक्तिगत विभिन्नता की प्रतिपूर्ति भी इस माध्यम से सम्भव नहीं होती है।

(4) विद्युत व्यवस्था के अभाव में इसका उपयोग सम्भव नहीं है।

(5) कार्यक्रम प्रसारण के दौरान विद्युत चले जाने कोई खराबी आने या सिग्नल सही न आने की स्थिति में व्यवधान उत्पन्न होता है।

3. चलचित्र (Movie/ Moving Picture)

आधुनिक युग में पाश्चात्य देशों में सिनेमा जितना मनोरंजन हेतु अनिवार्य समझा जाता है. उतना ही शिक्षण के लिए भी आवश्यक माना जाता है। वहाँ अन्य विषयों के शिक्षण, जैसे- विज्ञान, भूगोल, इतिहास, भाषा आदि में इसका प्रचलन बढ़ता जा रहा है। परन्तु जीव-विज्ञान विषयों के अध्यापन में अभी उन उन्नत देशों में भी सिनेमा को कोई महत्वपूर्ण स्थान नहीं मिला। जीव-विज्ञान के स्वरूप और व्यापक क्षेत्र को देखते हुए यह आश्चर्यजनक प्रतीत होता है क्योंकि इसमें चलचित्र द्वारा अध्यापन का क्षेत्र यथेष्ट है।

भारत जैसे निर्धन देश में साधारण स्कूल में चलचित्र प्रदर्शनी सम्भव नहीं है। इसके लिए एक तो अंधेरे कमरे की आवश्यकता होती है और दूसरे 16 से 32 मिलीमीटर तक प्रक्षेपक यंत्र होना चाहिए परन्तु यह कुछ ही भाग्यशाली स्कूलों में उपलब्ध है। जिन स्कूलों के पास इसके लिए साधन एवं सुविधा दोनों हैं, उन स्कूलों में शिक्षण हेतु इसका पर्याप्त प्रयोग अवश्य होना चाहिए । चलचित्र शिक्षा का एक अमूल्य साधन है। इसे सरकार ने भी स्वीकार कर लिया है। देश की अपार अज्ञानता को दूर करके जागृति के मार्ग पर लाने का यह अद्वितीय साधन राज्य के सूचना एवं प्रसारण विभाग तथा शिक्षा विभाग इस ओर विशेष रुचि ले रहे हैं।

चलचित्र के शैक्षिक लाभ (Educational Benefits of Moving Picture)

चलचित्र से निम्नलिखित लाभ हैं-

(1) अभ्यास के द्वारा फिल्मों से सीखने की योग्यता से ज्ञान में वृद्धि होती है।

(2) चलचित्र एक साधन है जिसके द्वारा कार्य कौशल विकसित होते हैं।

(3) इससे समस्या समाधान की योग्यता विकसित होती है।

(4) फिल्मों को बार-बार देखने से सीखने की क्रिया में वृद्धि होती है।

(5) चलचित्रों की सहायता से पाठ्यवस्तु को शुद्ध रूप से प्रस्तुत करने का प्रयास किया जाता है जिसमें दृश्य-श्रव्य दोनों ज्ञानेन्द्रियाँ क्रियाशील रहती हैं। इसके उपयोग से छात्रों में पाठ्यवस्तु के प्रति रुचि उत्पन्न होती है। छात्र एकाग्र होकर देखते तथा सुनते हैं।

(6) इस सहायक प्रणाली को प्रयुक्त करने से छात्रों में बोधगम्यता एवं धारण शक्ति (Retentiveness) का विकास होता है।

(7) छात्रों की एकाग्रता, घटनाओं एवं वस्तुओं के निरीक्षण या अवलोकन में गहनता आती है।

(8) चलचित्र द्वारा जटिल पाठ्यवस्तु को पढ़ाने या प्रस्तुत करने से छात्रों को सीखने में सुगमता या सरलता होती है और छात्र उसका परिपाक (Assimilation) भी कर लेते हैं।

(9) इस उपकरण के द्वारा प्रस्तुतीकरण की गति को घटाया और बढ़ाया भी जा सकता है साथ ही ध्वनि में उतार चढ़ाव भी लाया जा सकता है।

(10) इस उपकरण के द्वारा एक बड़े समूह के छात्रों को एक साथ शिक्षण दिया जा सकता है।

8.6 सूचना संचार प्रौद्योगिकी (Information Communication Technology)

दूरस्थ शिक्षा प्रणाली में, शिक्षार्थियों के लिए संस्था बड़े पैमाने में दूरदराज में हैं। एक शिक्षार्थी के लिए एक पारंपरिक प्रणाली में और एक ही समय में एक सेवा / सहायता के रूप में उपलब्धता पाने के लिए हर दिन संस्था का दौरा करना मुश्किल है। उपलब्ध सीमित मानव संसाधन के कारण, एक छात्र शिक्षा जीवन चक्र के विभिन्न चरणों में शिक्षार्थियों को विभिन्न सेवाएं प्रदान करने के लिए संस्था के लिए स्वयं भी मुश्किल है। लेकिन पिछले कुछ वर्षों में दूरस्थ शिक्षा, शिक्षा के क्षेत्र में मुख्य आधार के रूप में आ गई है। सूचना और संचार प्रौद्योगिकी (आईसीटी) ऐसी सीमाओं को पार करने के लिए एक प्रमुख संसाधन है। नई-नई प्रौद्योगिकी के प्रयोग से दूरस्थ शिक्षा शिक्षार्थियों हेतु प्रभावी हो गई है। इकाई के इस खण्ड में इलैक्ट्रॉनिक मीडिया, अंतः क्रियात्मक विडियो, टेली कान्फ्रेंसिंग, सीसीटीवी, कम्प्यूटर नेटवर्किंग माध्यम, इन्सेट, एडुसैट और शैक्षिक टेलीविजन के उपयोग, शैक्षिक टेलीविजन के विषय, कार्यप्रणाली व शिक्षा के क्षेत्र में क्या-क्या उपयोग हैं, इसकी विस्तृत रूप में चर्चा की गई है।

8.6.1 अंतः क्रियात्मक विडियो

एक परिचय- कम्प्यूटर समर्थित अनुदेशन के क्षेत्र में 80 के दशक में अंतःक्रियात्मक विडियो एक उभरती हुई तकनीक है जोकि अपनी विकासशील अवस्था से गुजर रहा है। इसके अंतर्गत रिकार्ड की हुई सूचनाओं को कम्प्यूटर के द्वारा प्रदर्शित किया जाता है।

कार्यप्रणाली-अन्तःक्रियात्मक विडियो को आधुनिकतम जटिल दृश्य-श्रव्य प्रणाली के रूप में देखा जाता है। इसके अंतर्गत गतिशील चित्रों, स्थिर चित्रों एवं संकेतों, पाठ्यवस्तु, ग्राफ आदि को विडियो डिस्क में रिकार्ड कर दिया जाता है, जिसके द्वारा चित्रों व अन्य पाठ्य सामग्री और संकेतों को ध्वनि प्रभावों के साथ मिला कर उभारा जा सकता है। विडियो डिस्क प्लेयर पर कम्पयूटर द्वारा सीधे-2 कुछ संख्यात्मक संकेत दिये जाते हैं। इसमें चित्र, संकेतों और पाठ्य वस्तु को धीमे तथा तेज आगे अथवा पीछे चलाने की सूविधा होती है।

उपयोगिता- अन्तःक्रियात्मक विडियो की प्रमुख उपयोगितायें निम्नलिखित है-

1. शिक्षार्थी अपनी रूचि तथा गति के अनुसार प्रस्तुत शब्दों, तस्वीरों व ध्वनि प्रभावों को क्रम से ग्रहण करता है।
2. विडियो डिस्क में बहुत बड़ी संख्या में सूचना संकलन की क्षमता होती है।
3. अन्तःक्रियात्मक विडियो का उपयोग गतिशील चित्रों, स्थिर चित्रों एवं संकेतों पाठ्य सामग्री आदि को दिलाने के लिये किया जाता है।
4. दूरस्थ शिक्षा का एक शक्तिशाली माध्यम है, जिसमें ज्ञानात्मक, संज्ञात्मक तथा कौशल पर आधारित पाठ्यक्रमों को शिक्षार्थियों तक इसके द्वारा पहुँचाया जाता है।

8.6.2 टेली कान्फ्रेंसिंग

एक परिचय- टेलीकान्फ्रेसिंग दूरसंचार की एक नवीनतम दृश्य-श्रव्य प्रणाली है। इस प्रणाली द्वारा दो या दो से अधिक व्यक्ति दूर बैठ कर भी किसी विषय पर वार्तालाप अथवा विचार विमर्श कर सकते हैं। इस प्रक्रिया में भाग लेने वाले व्यक्ति वास्तविकता में तो दूर बैठे होते हैं किंतु वार्ता करते समय प्रतिभागियों के चित्र भी पर्दे पर सजीव रूप में आते हैं। शिक्षाप्रणाली में तो इस पद्धति ने क्रांति ही ला दी है। दूर विदेश में बैठा कोई भी शिक्षक विश्व में कहीं भी किसी भी व्यक्ति के आमने-सामने बैठकर उससे निकट का संपर्क स्थापित कर सके और तत्काल शिक्षण क्रिया कर सकता है।

कार्य प्रणाली- टेलीकान्फ्रेसिंग एक इलैक्ट्रॉनिक कार्यप्रणाली है, जिसमें दूर बैठे हुए दो व्यक्ति या दो समूह भाग ले सकते हैं। इसमें भाग लेने वाले व्यक्ति सामूहिक रूप से अन्तः क्रिया प्रतिक्रिया संचार तकनीक के माध्यम से बातचीत करते हैं। यह एक द्वि-मार्गीय प्रसारण प्रक्रिया है जिसमें वार्तालापके माध्यम से दो पक्ष एक दूसरे की बात बिना किसी प्रतीक्षा के तत्काल सुन सकते हैं और उस पर अपनी राय अथवा प्रतिक्रिया भी उसी समय सम्प्रेषित कर सकते हैं। इस प्रकार दूरस्थ स्थानों पर ज्ञान, सूचनाओं, अनुदेशों, परामर्श और आदेशों का आदान-प्रदान बिना यात्रा किये हुये अविलम्ब किया जा सकता है।

टेलीकान्फ्रेसिंग के प्रकार- टेलीकान्फ्रेसिंग निम्नलिखित 3 प्रकार की होती हैं-

i. **आडियो कान्फ्रेसिंग**- यह एक श्रव्य शैक्षिक तकनीकी है जिसमें टेलीफोन का उपयोग दूरसंचार तकनीक के रूप में किया जाता है। इसमें प्रतिभागियों के चित्र नहीं आते हैं किंतु वार्तालाप द्वारा वांछित जानकारी और सूचनाओं का आदान-प्रदान भली प्रकार से हो जाता है।

ii. **वीडियो कान्फ्रेन्सिंग-** इसमें टेलीफोन के स्थान पर टेलीविजन का प्रयोग किया जाता है और सम्बन्धित तकनीकी द्वारा दूर-दर्शन बैठे दो व्यक्ति या 2 समूह आमने-सामने बैठ कर परस्पर वार्तालाप कर सकते हैं और अपनी क्रियाओं व प्रतिक्रियाओं का सजीव प्रदर्शन कर सकते हैं।

iii. **कम्प्यूटर कान्फ्रेंसिंग-** कम्प्यूटर का विडियो कान्फ्रेसिंग का ही परिष्कृत और उच्चीकृत रूप है। इसमें सूचना तकनीक के रूप में कम्प्यूटर का प्रयोग किया जाता है। विषय से सम्बन्धित सूचना तथा जानकारी को दूरस्थ स्थान पर भेजने के लिये ग्राफिक्स सम्प्रेषण तकनीकी का सहारा लिया जाता है। जिसके अन्तर्गत किसी चित्र या सामग्री को अत्यन्त छोटे-2 भागों में विभाजित करके सम्प्रेषित किया जाता है। सूचानाओं का आदान-प्रदान ई मेल तथा इण्टरनेट के माध्यम से किया जाता है।

टेलीकान्फ्रेसिंग का शिक्षा में उपयोग- टेलीकान्फ्रेंसिंग का प्रयोग शिक्षा के क्षेत्र में अत्यन्त लाभकारी है। राबर्टसन ने अपने अध्ययन से यह सिद्ध किया है- कि टेलीकान्फ्रेसिंग द्वारा शिक्षित और विश्वविद्यालय में पढ़ने वाले छात्रों के अधिगम स्तर में कोई अंतर नहीं होता है। इस प्रकार इसका सबसे बड़ा शैक्षिक उपयोग तो नहीं है कि इसे कुछ सीमा तक विद्यालयी शिक्षा के विकल्प के रूप में ग्रहण किया जा सकता है। इस तकनीकी के कुछ अन्य लाभदायक उपयोग निम्नलिखित हैं-

1. यह शिक्षण के एक सजीव साधन के रूप में कार्य कर सकती है।
2. यह प्रत्यक्ष शिक्षण के समान लाभदायक है।
3. इसके प्रयोग से शिक्षा देशकाल और परिस्थितियों की सीमा में न बंध कर पूरे विश्व को एक जैसा ज्ञान प्रदान कर सकती है।
4. इसके द्वारा एक ही शिक्षक पूरे विश्व में एक ही समय में शिक्षण कार्य कर सकता है।
5. इसमें शिक्षण कार्य के दौरान छात्रों के मन में उठने वाले प्रश्नों का समाधान किया जा सकता है।
6. इस प्रणाली के माध्यम से विभिन्न विषयों के जटिल एवं दुरूह प्रसंगों पर विशेषज्ञों से परामर्श करके तत्काल अपेक्षित सुधार लाया जा सकता है, जिससे उच्चकोटि की उपलब्धि प्राप्त की जा सकती है।
7. यह प्रणाली दूरस्थ शिक्षा, पत्राचार-शिक्षा एवं मुक्त विश्वविद्यालयों आदि के लिये बहुत उपयोगी है।

अभ्यास प्रश्न

3. टेलीकान्फ्रेंसिंग कितने प्रकार की होती है-
   (अ) 2 (ब) 3 (स) 4 (द) 5
4. टेलीकान्फ्रेंसिंग सम्बन्धित है-
   (अ) दृश्य प्रणाली से (ब) श्रव्य प्रणाली से (स) श्रव्य-दृश्य दोनों से

8.6.3 इन्सेट

एक परिचय- भारतीय राष्ट्रीय उपग्रह प्रणाली (Indian National Satellite-INSAT) के संक्षिप्त रूप को INSAT कहा जाता है। यह एक बहुउद्देशीय प्रणाली है। INSAT का पहली बार 1983 में प्रयोग किया गया

तथा पूरे राष्ट्र में एक साथ टेलीविजन कार्यक्रम उपलब्ध कराये गये। पूरे राष्ट्र में प्रसारण हेतु एक माइक्रोवेब नेटवर्क लगाया गया। जिसके द्वारा अनेक प्रकार के प्रोग्राम प्रसारित किये गये।

आज का युग सूचना-तकनीकी का है। भारत इस युग में निरंतर प्रगति पथ पर चल रहा है। आज उपग्रह संचार भी सूचानाओं का आदान-प्रदान बन गया है। बहुउद्देशीय उपग्रह इंसेट के आधार पर शिक्षा सम्बन्धी, मौसम सम्बन्धी कई कार्यक्रम तैयार किये गये हैं जिन्हें दूरदर्शन व दूर संचार के द्वारा सम्प्रेषित किया जाता है। अब तक भारत द्वारा INSAT श्रृखंला की चार पीढ़ियों के कुल 17 उपग्रह छोड़े जा चुके हैं। कुछ उपग्रह निम्नलिखित हैं-

इंसेट IA - अप्रैल 1982 में प्रक्षेपित किया गया। यह तकनीकी कारणों से सफल नहीं रहा।

इंसेट IB - अगस्त 1983 में प्रक्षेपित किया गया। सफलतापूर्वक कार्य किया।

1990 के दशक में INSAT-II श्रृंखला प्रारम्भ की गई, जो दूरसंचार, दूरदर्शन व मौसम विज्ञान सम्बन्धी सूचनायें प्रदान करने में ज्यादा सक्षम है।

उपयोग- इन्सेट के विभिन्न क्षेत्रों में निम्न उपयोग हैं-

i. इन्सेट उपग्रहों की सहायता के माध्यम से यू जी सी से छात्रों के लिये विशेष शिक्षण सामग्री का प्रसारण करना शुरू कर दिया है।
ii. उच्च शिक्षा में कार्यरत शिक्षकों के कार्यक्रम प्रसारित होने शुरू हुये हैं।
iii. CIFL हैदराबाद तथा जामिया मीलिया दिल्ली को रेडियो व टेलीविजन साफ्टवेयर बनाने का कार्य दिया गया है।
iv. INSAT टेलीविजन का मुख्य उपागम बच्चों, युवकों तथा व्यस्कों एवं प्रौढ़ों के लिये शिक्षा के विकल्प उपागमों को प्रस्तुत करना है।
v. देश के दूरस्थ एवं दुर्गम इलाकों में इन्सेट के उपग्रहों द्वारा शिक्षा एवं सूचनाओं का सम्प्रेषण दूरदर्शन के माध्यम से सफलतापूर्वक किया जा रहा है।

8.6.4 एडुसैट

एक परिचय- भारतीय अंतरिक्ष अनुसंधान संगठन इसरो (ISRO) ने शिक्षा और विकास के क्षेत्र अंतरिक्ष आधारित संचार प्रौद्योगिकी के प्रयोग का बीड़ा उठाया है। इसरो द्वारा 20 सितम्बर 2004 को भारतीय शिक्षा के कार्यक्रम को बढ़ावा देने के लिये एक विशेष उपग्रह एडुसैट का शुभारम्भ किया गया। एडुसैट स्वदेश निर्मित उपग्रह है, जो विशेष रूप से शिक्षा के क्षेत्र के लिये समर्पित है।

एडुसैट सेटेलाइट ग्रामीण और अर्द्ध शहरी शैक्षिक सस्थानों की बुनियादी ढांचे की कमी और बड़ी संख्या के साथ शहरी शैक्षिक संस्थानों के बीच सम्पर्क स्थापित कर पर्याप्त बुनियादी सुविधा के साथ गुणवत्ता परक शिक्षा प्रदान करता है। औपचारिक शिक्षा प्रदान करने के अतिरिक्त या उपग्रह प्रणाली स्वास्थ्य,

स्वच्छता और व्यक्तित्व विकास के महत्वपूर्ण पहलुओं के बारे में ज्ञान का प्रसार ग्रामीण व दूरदराज के क्षेत्र के लिये और सुविधा कर सकती है। प्रशिक्षित और कुशल शिक्षकों की सीमित संख्या के बावजूद इस प्रकार बढ़ती छात्र जनसंख्या की आकांक्षाओं को टेली-शिक्षा की अवधारणा के माध्यम से पूरा किया जा सकता है। एडुसैट शिक्षा क्षेत्र में कार्य करने वाला पहली अनन्य उपग्रह है। यह विशेष रूप से दृश्य श्रव्य माध्यम से देश में दूरस्थ शिक्षा की बढ़ती मांग को पूरा करने हेतु अन्तः क्रियात्मक उपग्रह आधारित संरचना/प्रणाली है।

उपयोगिता- एडुसैट निम्नलिखित रूप से उपयोगी है-

1. इसके द्वारा प्रत्येक घर में शिक्षा का सीधा सम्बन्ध जुड़ गया है।
2. समान समय और समान दिवस पर एक साथ देश में शैक्षिक कार्यक्रम प्रसारित होते हैं।
3. ग्रामीण व दूरस्थ क्षेत्रों में जहाँ विद्यालय/औपचारिक शिक्षा के केन्द्र नहीं हैं वहाँ छात्र इसके माध्यम से शिक्षा प्राप्त कर सकते हैं।

8.6.5 शैक्षिक टेलीविजन

एक परिचय- दूरदर्शन सम्प्रेषण संचार किया का एक प्रभावी तथा शक्तिशाली माध्यम है। शिक्षण के आधार पर शैक्षिक टेलीविजन को निम्नलिखित 2 भागों के रूप बाँटा गया है-

i. **अनौपचारिक शैक्षिक प्रसारण-** इन प्रसारणों का सीधा सम्बन्ध तो विद्यालयों पाठ्यक्रम से नहीं होता है, परंतु छात्रों का ज्ञानवर्धन करने में ये प्रसारण बहुत सहायक होते हैं। इन प्रसारणों में नृत्य, नाटक, संगीत, महिला विशेष, ग्रामीण विषय पर आधारित, खेल पर आधारित एवं देश-विदेश की जानकारी सम्बन्धी, सामाजिक विषयों पर आधारित कार्यक्रम आते हैं।

ii. **औपचारिक शैक्षिक प्रसारण-** इसमें प्रसारित कार्यक्रम शैक्षिक संस्थाओं से सम्बन्धित होते हैं। कार्यक्रम में प्रसारित होने वाले पाठों को विषय-विशेषज्ञों द्वारा तैयार कराया जाता है। इसमें प्रसारित कार्यक्रम ग्रामीण तथा पिछड़े क्षेत्रों में शैक्षिक सुविधाओं से सम्बन्धित, स्कूलों छात्रों के पाठ्यक्रम से सम्बन्धित विश्वविद्यालय के छात्रों के पाठ्यक्रम से सम्बन्धित विषय पर, प्रौढ़ शिक्षा से सम्बन्धित और अध्यापक प्रशिक्षण से सम्बन्धित विषय पर होते हैं।

शैक्षिक टेलीविजन के उपयोग- शैक्षिक टेलीविजन निम्नलिखित रूप से उपयोगी है-

1. इसके द्वारा एक ही समय में अधिक से अधिक छात्रों को शिक्षा प्रदान की जा सकती है।
2. शैक्षिक दूरदर्शन- कार्यक्रम दूरदराज क्षेत्रों में भी प्रसारित किये जाते हैं, जिससे कि इन क्षेत्रों में रहने वाले लोग विस्तृत जानकारी प्राप्त कर सकें।
3. शैक्षिक दूरदर्शन के कार्यक्रम को देखकर अध्यापक भी अपने अध्ययन कौशलों को सुधारने के लिये मार्गदर्शन प्राप्त कर सकते हैं।
4. छात्र स्कूल में बैठे-बैठे संसार के विभिन्न स्थलों की सैर कर सकते हैं।

5. साधनहीन दूर स्थित ग्रामीण क्षेत्रों में पढ़ने वाले छात्र दूरदर्शन द्वारा प्रसारित कार्यक्रमों से समान लाभ प्राप्त कर सकते हैं।
6. शैक्षिक टेलीविजन के माध्यम से शिक्षा की विभिन्न समस्याओं, जैसे- अध्यापकों का अभाव, भवनों की कमी, सामग्री का पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध न होना आदि के हल होने में सहायता मिलती है।

अभ्यास प्रश्न

5. एडुसैट उपग्रह का निर्माण____________के द्वारा किया गया।
6. एडुसैट उपग्रह____________के क्षेत्र में कार्य करने वाला प्रथम उपग्रह है
7. शैक्षिक टेलीविजन को____________व____________भागों में बांटा जा सकता है।

8.7 सारांश

इस इकाई का अध्ययन करने के बाद आप पाठ्य सामग्रियों में मुद्रित सामग्रियों की क्या भूमिका एवं महत्व है से परिचित हो चूके होंगे। इस इकाई के अंतर्गत स्व - शिक्षण सामग्री को घर बैठ कर पढ़ाई, कंप्यूटर आधारित प्रशिक्षण, संकुल शिक्षण, लचीला अधिगम, स्वतंत्र सीखने, व्यक्तिगत सीखने, प्रोग्राम अनुदेश और इसके आगे जैसे कई अन्य नामों के साथ संबद्ध किया गया है। दूरस्थ शिक्षा में शिक्षक एवं छात्रों का प्रत्यक्ष संपर्क संभव नही होता अत: यह सामग्री इस प्रकार से तैयार की जाती है की छात्र इसे पढ़ कर स्वयं अध्ययन कर, सीख सकें और सफलता प्राप्त कर सकें।

हमारे पास ऑडियो विजुअल सहायक सामग्री के रूप में रेडियो, ऑडियो कैसेट, टेलीविजन, वीडियो कैसेट, वीडियो टेप, वीडियो डिस्क, टेलीफोन, कंप्यूटर, फैक्स, ई मेल, ऑप्टिकल फाइबर जैसी सहायक सामग्री है।

उपरोक्त के अतिरिक्त इस इकाई में सूचना और संचार प्रौद्योगिकी केअंतर्गत इलैक्ट्रॉनिक मीडिया, अंतः क्रियात्मक विडियो, टेली कान्फ्रेंसिंग, सीसीटीवी, कम्प्यूटर नेटवर्किंग माध्यम, इन्सेट, एडुसैट और शैक्षिक टेलीविजन के उपयोग, शैक्षिक टेलीविजन के विषय, कार्यप्रणाली व शिक्षा के क्षेत्र में उपयोगिता बताई गयी है।

8.8 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1. रेडियो
2. श्रव्य-दृश्य
3. ब-3
4. स- श्रव्य-दृश्य दोनों से
5. इसरो द्वारा 20 सितम्बर 2004

6. शिक्षा के क्षेत्र
7. औपचारिक , अनौपचारिक

8.9 संदर्भ ग्रंथ सूची

1. वेंकटैया, एन- एज्यूकेशनल टैक्नोलॉजी, 1997
2. कुलश्रेष्ठ, एस0पी - शैक्षिक तकनीकी के मूल आधार 2007-2008
3. शील, अवनीन्द्र- शैक्षिक तकनीकी एवं प्रबन्ध 2011

8.10 निबंधात्मक प्रश्न

1. ऑडियो विजुअल सहायक सामग्री से आप क्या समझते हैं? किन्ही 3 सहायक सामग्री का वर्णन कीजिये।
2. सूचना और संचार प्रौद्योगिकी (आईसीटी) के संप्रत्यय को विस्तार से समझाइए।

इकाई 9- दूरस्थ शिक्षा में विद्यार्थी सहायक प्रणाली

इकाई की रूपरेखा:-

9.1 प्रस्तावना
9.2 उद्देश्य
9.3 दूरस्थ शिक्षा एवं विद्यार्थियों की विशेषताएँ
9.4 शिक्षक अधिगम की समस्यायें
9.5 विद्यार्थी सहायक प्रणाली
9.6 दूरस्थ शिक्षा की विकासात्मक समस्याएं
9.7 व्यक्तिगत सम्पर्क कार्यक्रम
9.8 अध्ययन केन्द्र
9.9 परामर्श सेवायें
9.10 सारांश
9.11 शब्दावली
9.12 अभ्यास के प्रश्नों के उत्तर
9.13 संदर्भ ग्रंथ
9.14 सहायक उपयोगी पाठ्यसामग्री
9.15 निबंधात्मक प्रश्न

9.1 प्रस्तावना

दूरस्थ शिक्षा के विद्यार्थियों की विशेषताएं समस्याओं का अध्ययन इस इकाई में प्रस्तुत है दूरस्थ शिक्षा की सहायक प्रणाली का सामान्य स्वरूप कैसा है? इसका विश्लेषण इस इकाई में कर सकेंगे। दूरस्थ शिक्षा अंश-औपचारिक शिक्षा की आधुनिक पद्धति है। दूरस्थ शिक्षा अधिगम विधि की कुछ ऐसी विशेषताओं को प्रकट करती है जो उसे शिक्षा-संस्थाओं की अधिगम विधि से अलग करती है। दूरस्थ शिक्षा में शिक्षार्थी अपनी गति से प्रगति कर सकता है। दूरस्थ शिक्षा में शिक्षार्थी अपने घर में एकान्त अध्ययन कर सकते हैं। वे किसी भी समय सुविधा अनुसार अध्ययन कर सकते हैं। दूरस्थ शिक्षा को परम्परागत शिक्षा प्रणाली का एक विकल्प मानते हैं। प्रत्येक शिक्षा प्रणाली की विद्यार्थी सहायक व्यवस्था को महत्वपूर्ण पक्ष माना जाता है। इस इकाई के अध्ययन के बाद आप दूरस्थ शिक्षा के विद्यार्थियों की विशेषताओं और समस्याओं तथा विद्यार्थी सहायक प्रणाली का विश्लेषण कर सकेगें।

9.2 उद्देश्य

इस ईकाई के अध्ययन के पश्चात आप -

1. दूरस्थ शिक्षा के विद्यार्थियों की विशेषताओं का वर्णन कर सकेंगे।
2. दूरस्थ शिक्षा के विद्यार्थियों की समस्याओं की व्याख्या कर सकेंगे।
3. दूरस्थ शिक्षा की विद्यार्थी सहायक प्रणाली का विश्लेषण कर सकेगें।

9.3 दूरस्थ शिक्षा एवं विद्यार्थियों की विशेषताएं

दूरस्थ शिक्षा आज एक लम्बा रास्ता तय कर चुकी है। आज यह शैक्षिक प्रणाली का अभिन्न अंग ही नहीं बल्कि एक स्वतन्त्र और महत्वपूर्ण अनुशासन है। दूरस्थ शिक्षा अपनी अंतर्निहित गुणवत्ता के कारण तथा पारम्परिक शिक्षा से भिन्न होने के कारण वर्तमान परिदृश्य में अधिक उपयोगी और कारगार सिद्ध हो रही है।

प्रोफेसर कुलन्दयी स्वामी के अनुसार "दूरस्थ शिक्षा कोई चुनाव या विकल्प का मुद्दा नहीं है, बल्कि यह समय की अनिवार्य मांग है"।

दूरस्थ शिक्षा वह शिक्षा व्यवस्था है जिसमें विद्यार्थी शिक्षा से भौगोलिक दृष्टि से दूर रह कर मुद्रित सामग्रियों तथा संचार माध्यमों के प्रभावशाली सम्प्रेषण द्वारा शिक्षा प्राप्त करते हैं। दूरस्थ शिक्षा विभिन्न शैक्षिक पृष्ठभूमि वाले तथा विविध भौगोलिक क्षेत्रों में विखरे शिक्षार्थियों या अधिगमकर्ताओं की एक बड़ी संख्या को उनकी रूचि और सुविधा के अनुकूल शिक्षा प्रदान करने का तरीका है, जिसमें उच्चकोटि की

अधिगम सामग्री सम्प्रेषण तकनीकी तथा संचार माध्यमों का समुचित और व्यापक प्रयोग होता है। दूरस्थ शिक्षा में शिक्षण अधिगम भाषण या व्याख्यान द्वारा नहीं होता बल्कि शिक्षक संवाद या सम्प्रेषण की अति औपचारिक भाषा में तैयार की गई मुद्रित सामग्री दृश्य श्रव्य या श्रव्य दृश्य सामग्री द्वारा शिक्षार्थी को स्वतः स्फूर्त अधिगम में सहायता पहुंचाता है।

दूरस्थ शिक्षा की मुख्य विशेषताएं

1. दूरस्थ शिक्षा में पारम्परिक शिक्षा से भिन्न सम्पूर्ण शैक्षिक प्रक्रिया और शिक्षार्थी के मध्य दूरी बनी रहती है।
2. दूरस्थ शिक्षा शिक्षार्थी केन्द्रित होती है। यह शिक्षार्थी की आवश्यकताओं एवं सुविधा पर केन्द्रित होती है। शिक्षार्थी अपनी गति एवं सुविधा के अनुसार सीखता है और उसे कोर्सों के चयन की स्वतन्त्रता होती है।
3. शिक्षक और शिक्षार्थियों को आपस में जोड़ने के लिए तथा पाठयक्रम को सुचारू रूप से चलाने के लिए मुद्रित सामग्रियों तकनीकी माध्यमों, श्रव्य दृश्य साधनों तथा कम्पयूटर आदि का प्रयोग होता है।
4. दूरस्थ शिक्षा जन शिक्षा की पद्धति है। यह शिक्षा को उन लाखों लोगों के पास ले जाती है जो किसी संस्था में नियमित रूप से शिक्षा प्राप्त नहीं कर सके।
5. अधिगम की पूरी प्रक्रिया में शिक्षार्थियों का कोई समूह नहीं होता बल्कि शिक्षार्थी को व्यक्तिगत रूप से ही शिक्षण दिया जाता है इस सम्भावना के साथ कि समय-समय पर और समाजीकरण की दृष्टि से शिक्षक-शिक्षार्थी के मध्य साक्षात सम्पर्क का आयोजन किया जाएगा।
6. दूरस्थ शिक्षा पर खर्चा भी ज्यादा नहीं होता अतः यह कम खर्चीली है।
7. दूरस्थ शिक्षा समय और सीमा से मुक्त है।
8. दूरस्थ शिक्षा में रेडियो, दूरदर्शन,कम्प्यूटर आदि जनमाध्यमों का प्रयोग होता है।
9. दूरस्थ शिक्षा पारम्परिक शिक्षा से भिन्न है क्योंकि इसका दृष्टिकोण औद्योगिक है।
10. दूरस्थ शिक्षा अप्रत्यक्ष शिक्षा पद्धति है क्योंकि इसमें आमने सामने शिक्षा प्रदान नहीं की जाती।

दूरस्थ शिक्षा एवं विद्यार्थी

शिक्षक और शिक्षार्थी के बीच कार्य सम्पादन ही शैक्षिक प्रक्रिया के केन्द्र बिंदु है अतः दूरस्थ शिक्षा को दूरी की बाधा दूर करते समय इस सत्यता को हमेशा ध्यान में रखना चाहिए। दूरस्थ शिक्षा वास्तव में दूरी से शिक्षा

है। यह दूरी केवल भौतिक दूरी है। दूरस्थ शिक्षा में अधिगम पर सीखना विद्यार्थी की सुविधा एवं आवश्यकतानुसार होता है।

i. विद्यार्थी अपनी स्वेच्छा तथा स्वक्रिया द्वारा शिक्षा प्राप्त करता है।
ii. विद्यार्थी अपनी गति व आवश्यकतानुसार विषय वस्तु सीखता है।
iii. शिक्षक भौगोलिक दृष्टि से दूर रहकर ही पत्राचार संचार माध्यमों के द्वारा विद्यार्थी से जुड़कर अधिगम में आने वाली कठिनाइयों को दूर करते हैं।
iv. दूरस्थ शिक्षा में वे विद्यार्थी सम्मलित होते हैं जो दूर ग्रामीण क्षेत्रों में रहते हैं और जहां उच्च शिक्षा संस्थाए नहीं है।
v. दूरस्थ शिक्षा में शिक्षक विद्यार्थियों द्वारा उतर पुस्तिकाओं पर शिक्षक अपनी टिप्पणियां भी लिखता है।
vi. दूरस्थ शिक्षा में शिक्षक से साक्षात शिक्षा न ग्रहण करते हुए भी विद्यार्थी अपने आप को शिक्षक से जुड़ा पाता है और अपने स्व अध्ययन की प्रवृत्ति को विकसित करने में समर्थ होता है।
vii. दूरस्थ शिक्षा विद्यार्थी को कठोर औपचारिक नियमों और समय-सीमा में नहीं बांधती।
viii. यह शिक्षा समूह अधिगम के स्थान पर व्यक्तिगत अधिगम पर अत्याधिक बल देती है।
ix. दूरस्थ शिक्षा में शिक्षक और शिक्षार्थी के मध्य पत्राचार ही संचार का माध्यम होता है तथा जिसमें शिक्षार्थी और शिक्षक के मध्य एक अंतक्रिया आवश्यक होती है।
x. दूरस्थ शिक्षा दो आयामों पर केन्द्रित होती है, शिक्षक और शिक्षार्थी के बीच की दूरी तथा शिक्षण अधिगम कार्यक्रमों का संरचनात्मक स्वरूप।
xi. दूरस्थ शिक्षा अपनी अंतर्निहित गुणवत्ता के कारण जनसमूह की शैक्षिक मांग को पूरा करने में सक्षम है।
xii. विभिन्न विद्यार्थियों की विभिन्न आवश्यकताओं को सन्तुष्ट करने के लिए दूरस्थ शिक्षा जरूरी है क्योंकि इतनी विभिन्न आवश्यकतायें औपचारिक शिक्षा पद्धति से पूरी नहीं हो सकती।
xiii. कई विद्यार्थी आर्थिक भौतिक, भावात्मक एवं पारिवारिक स्थितियों के कारण दूसरों से अलग थलग हो जाते हैं। दूरस्थ शिक्षा ऐसे लोगों के लिए सहायक सिद्ध होती है।
xiv. जो विद्यार्थी उचित शिक्षा से वंचित रहा है। उसके आत्म विकास के लिए दूरस्थ शिक्षा अत्यन्त महत्वपूर्ण है।
xv. दूरस्थ शिक्षा में शिक्षार्थी अपनी गति से प्रगति कर सकता है।
xvi. दूरस्थ शिक्षा नियमित विद्यार्थियों के अध्ययन में पूरक का कार्य करती है।

xvii. दूरस्थ शिक्षा व्यवस्था विद्यार्थियों को आत्म निर्भरता तथा व्यवस्था योग्य अपेक्षित कुशलता प्रदान करने में समर्थ है तथा बदली हुई समाजिक आर्थिक एवं व्यवसायिक परिस्थितियों के लिए सर्वथा प्रासंगिक भी है।

दूरस्थ शिक्षा विद्यार्थियों की समस्याएं

दूरस्थ शिक्षा में क्रियात्मक अनुभव बहुत कम होता है। दूरस्थ शिक्षा पद्धति में विद्यार्थियों को सांस्कृतिक परिवर्तन एवं सामाजिक विकास के प्रति सचेत करने की सम्भावनाएं बहुत सीमित होती है। दूरस्थ शिक्षा में विद्यार्थियों को कई समस्याओं का सामना करना पड़ता है।

i. दूरस्थ शिक्षा रजिस्ट्रेशन और प्रवेश की प्रक्रिया में समय और शक्ति खर्च करने वाली है।
ii. दूरस्थ शिक्षा के व्यवसायिक पाठ्यक्रमों का खर्च अधिक है।
iii. दूरस्थ शिक्षा में अधिगम सामग्री इतनी विस्तृत नहीं होती कि वह पूरे पाठयक्रम को समाहित कर सके।
iv. विद्यार्थियों के लिए अध्ययन केन्द्र एवं पुस्तक बैंकों की व्यवस्था बहुत कम है।
v. दूरस्थ शिक्षा में विद्यार्थियों को पाठय सामग्री डाक द्वारा भेजी जाती है। परन्तु इस पर रेडियो तथा दूरदर्शन पर उचित विचार विमर्श नहीं होता।
vi. व्यक्तिगत सम्पर्क कार्यक्रमों में विद्यार्थियों को विभिन्न क्रियाओं के लिए अवसर नहीं मिलते। उन्हें केवल व्याख्यान ही सुनने होते हैं।
vii. दूरस्थ शिक्षा में अध्यापक की अनुपस्थिति को बहुत अनुभव किया जाता है। विद्यार्थी मार्गदर्शन को प्रतीक्षा करते है परन्तु उन्हें मार्गदर्शन नहीं मिलता।
viii. अधिगम सामग्री का मुद्रण अच्छे स्तर का नहीं होता।
ix. अधिगम सामग्री विद्यार्थियों तक समय से नहीं पहुंचती है।
x. दूरस्थ शिक्षा में मूल्यांकन प्रणाली बहुत विश्वसनीय और उपयोगी नहीं होती है।
xi. दूरस्थ शिक्षा में अनेक व्यावसायिक पाठ्यक्रम बिना किसी भौतिक संसाधनों के चलाए जाते हैं जिससे विद्यार्थियों को उपयुक्त साक्षात अनुभव नहीं मिल पाते हैं।
xii. व्यक्तिगत सम्पर्क कार्यक्रम कक्षाएं बहुत प्रभावशाली और उपयोगी नहीं होती है।
xiii. दूरस्थ शिक्षा में शिक्षण माध्यम भाषा पर विकल्प के प्रति ध्यान नहीं दिया दिया जाता है।
xiv. पत्राचार शिक्षण में शिक्षण सामग्री के लिए प्रयोग में आने वाला कागज अच्छा न होने के कारण लिखित सामग्री का जीवन बहुत कम होता है, जो अधिगम कर्ताओं को अधिगम के प्रति उदासीन कर देता है

अभ्यास प्रश्न

1. दूरस्थ शिक्षा की विशेषतायें क्या हैं?
2. दूरस्थ शिक्षा की समस्यायें क्या है?
3. पत्राचार शिक्षण वह शिक्षण विधि है जिसमें............ के मध्य पत्राचार ही संचार का माध्यम होता है तथा जिसमें शिक्षार्थी और शिक्षण के मध्य एक ....आवश्यक होती है।
4. दूरस्थ शिक्षा...............................शिक्षा पद्धति है।
5. दूरस्थ शिक्षा रेडियो, दूरदर्शन कम्पयूटर आदि जन माध्यमों का प्रयोग नहीं करती है।(सत्य /असत्य)
6. दूरस्थ शिक्षा में क्रियात्मक अनुभव कम होता है। (सत्य /असत्य)

दूरस्थ शिक्षा में कक्षीय समस्याएं

कक्षीय समस्याओं को निम्नलिखित दो शीर्षकों में वर्गीकृत किया जा सकता हैः-शिक्षण-अधिगम की समस्याएं ,कक्षीय प्रबन्धन की समस्याएं।

9.4 शिक्षण-अधिगम की समस्यायें

शिक्षण-अधिगम की प्रक्रिया त्रिध्रुवीय प्रक्रिया है क्योंकि इस में अध्यापक, विद्यार्थी और विषय-सामग्री तीनों का सम्बन्ध रहता है। यही शिक्षण-अधिगम की प्रक्रिया के तीन ध्रुव या तत्व हैं। शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया में अध्यापक का व्यक्तित्व एंव व्यवहार अत्यन्त महत्त्वपूर्ण कारक है। विद्यार्थी भी कक्षा में कई प्रकार की समस्यायें पैदा करते हैं। विषय-वस्तु एवं अधिगम-क्रियाओं के कारण भी कई समस्यायें उत्पन्न होती है। शिक्षण-अधिगम की प्रक्रिया से सम्बन्धित समस्याओं को कई उप-वर्गों में विभाजित किया जा सकता है-

1. अध्यापक के व्यवहार से सम्बन्धित समस्यायें,
2. अधिगम क्रियाओं से सम्बन्धित समस्यायें,
3. सामाजिक-संवेगात्मक समस्यायें।

अध्यापक के व्यवहार एंव अनुदेशन से सम्बन्धित समस्यायें-

किसी भी शिक्षा-पद्धति में अध्यापक का अत्यन्त महत्त्वपूर्ण स्थान होता है। परन्तु शिक्षण-अधिगम की प्रक्रिया में वह तब तक प्रभावशाली नहीं हो सकता जब तक वह विद्यार्थियों के साथ अच्छा क्रियाशील सम्पर्क स्थापित नहीं करता। अध्यापक के व्यवहार एंव व्यक्तित्व के साथ सम्बन्धित कक्षीय समस्यायें निम्नलिखित हैं-

i. **ज्ञान एंव तैयारी का अभाव-** अध्यापक में ज्ञान का अभाव कक्षा में कई समस्याओं का कारण बनता है। यदि उस का ज्ञान आधुनिकतम नहीं है तो वह प्रभावशाली ढंग से नहीं पढ़ा सकेगा। अध्यापकों के व्यावसायिक विकास तथा ज्ञान वृद्धि में कार्यशालायें सम्मेलन कोर्स, शैक्षिक मेले, विस्तार-भाषण आदि सहायक सिद्ध हो सकते हैं।

ii. **अध्यापक के व्यक्तित्व से सम्बन्धित समस्यायें**-अध्यापक का दुर्बल चरित्र उस का बुरा भावात्मक एंव मानसिक स्वास्थ्य उस की हताशायें और उस का तानाशाही अन्यायपूर्ण एंव पक्षपातपूर्ण व्यवहार कक्षा में कई प्रकार की समस्याओं का कारण बन सकते हैं। अध्यापक को मानसिक एंव भावात्मक रूप से स्वस्थ होना चाहिए।

iii. **कठोर व्यवहार अध्यापक का कठोर व्यवहार-** कई कक्षीय समस्याओं को जन्म देता है। विद्यार्थियों की मूल प्रवृतियों तथा भावात्मक एंव रचनात्मक शक्तियों और शारीरिक क्रियाओं का कठोर दमन विद्यार्थियों में तनाव बेचैनी घबराहट, हताशा आदि पैदा कर के उन के मानसिक स्वास्थ को प्रभावित कर सकता है।

iv. **अल्प-उपलब्धि एंव पिछड़ापन-** पिछड़े हुये बच्चे वे होते हैं जो कक्षा में अच्छी तरह नहीं चल सकते। वे पढ़ाई में कमजोर होते हैं और परीक्षाओं में अच्छे अंक प्राप्त नहीं करते। ऐसे बच्चे कक्षा की प्रगति में बाधक सिद्ध होते हैं क्योंकि इन्हें भी कक्षा के साथ घसीटना पड़ता है।

v. **समस्यापूर्ण व्यवहार-** अध्यापक के सहानुभूतिहीन एंव कठोर व्यवहार के कारण विद्यार्थियो में इस प्रकार का समस्यापूर्ण व्यवहार उत्पन्न हो सकता है। कक्षा में कठोर अनुशासन, अरोचक शिक्षण विधियां, विद्यार्थियों की भीड, विद्यार्थियों के प्रति अमनोवैज्ञानिक व्यवहार, पाठ्य सहायक क्रियाओं का अभाव एंव निर्देशन का अभाव आदि के कारण विद्यार्थियों में समस्यापूर्ण व्यवहार उत्पन्न हो सकता है।

सीखने की क्रियाओं से सम्बधित क्रियायें

i. **कठोर और बोझिल पाठ्यक्रम** - अध्यापक से समय पर पाठ्यक्रम समाप्त करने की आशा की जाती है। ऐसा पाठ्यक्रम जो कठोर, अत्यधिक पुस्तकीय, सैद्धान्तिक, अमनोवैज्ञानिक, परीक्षा उन्मुख तथा जीवन से असम्बन्धित होता है। वह विद्यार्थियों की आवश्यकताओं के अनुकूल पाठ्यक्रम में परिवर्तन नहीं कर सकता।

ii. **कठोर समय सारिणी**-बोझिल पाठ्यक्रम के कारण समय सारिणी इस प्रकार बनाई जाती है कि क्रियाओं के लिये समय ही नहीं रहता समय सारिणी इतनी लचीली अवश्य होनी चाहिए कि विभिन्न

पाठ्य-सहायक क्रियाओं को समय दिया जा सके। यह लचीलेपन, विविधता, थकान, विश्राम एंव मनोरंजन के सिद्धान्तों पर आधारित होनी चाहिए।

iii. **ब्लैक-बोर्ड की समस्याएं- कई**-कक्षाओं में ब्लैक-बोर्ड नहीं होता । अधिकांश कक्षाओं के ब्लैक-बोर्डों पर पालिश नहीं होती। कहीं डस्टर और चाक नहीं होते। कई बार ब्लैक-बोर्ड पर लिखा हुआ साफ़ पढ़ा नहीं जाता या फिर दिखाई नहीं देता कक्षा में ब्लैक-बोर्ड, चाक और डस्टर अवश्य होने चाहिए।

समाजिक-संवेगात्मक समस्यायें

अध्यापक को कक्षा में कई प्रकार की सामाजिक-संवेगात्मक समस्याओं का सामना करना पड़ सकता है। अध्यापक एंव विद्यार्थी में व्यक्तित्व का टकराव हो सकता है। इस संघर्ष में उसे कई प्रकार के मनोवैज्ञानिक तनावों में से गुजरना होता है।

किशोरावस्था में समस्यापूर्ण व्यवहार (सामाजिक-संवेगात्मक समस्याओं) के मुख्य कारण निम्नलिखित हैः-

i. **तीव्र शारीरिक वृद्धि**- किशोरावस्था में व्यक्ति की शारीरिक वृद्धि तेजी के साथ असन्तुलित रूप से होती है। शारीरिक अंगों की वृद्धि में सन्तुलित अनुपात नहीं होता।
ii. **संवेगात्मक बेचैनी-** किशोरावस्था संवेगात्मक बेचैनी की अवस्था है। इस अवस्था में व्यक्ति को मानसिक शान्ति एंव स्थिरता प्राप्त नहीं होती।
iii. **बौद्धिक विकास-** किशोरावस्था में बौद्धिक विकास भी चरमोत्कर्ष की ओर बढ़ने लगता है। इस अवस्था में तर्कपूर्ण चिन्तन, अमूर्त तर्क एकाग्रता, आलोचनात्मक चिन्तन, कल्पना आदि बौद्धिक शक्तियों का अच्छा विकास होता है।
iv. **घर का वातावरण**-किशोर कभी कभी घर और कक्षा के वातारण में सामंजस्य स्थापित नहीं कर पाता। घर में सामंजस्य सम्बन्धी समस्यायें इस लिये पैदा होती हैं कि उस की आवश्यकतायें बढ़ जाती हैं और माता-पिता उन आवश्यकताओं को पूरा नहीं कर पाते।

कक्षीय प्रबन्ध की समस्यायें

1. **अपर्याप्त प्रकाश एंव वायु संचार**-अच्छे कक्षीय वातावरण में प्रभावशाली कार्य हो सकता है इस में प्रकाश और वायु संचार तथा फर्नीचर एंव बैठने का अच्छा प्रबन्ध सम्मिलित हैं। कक्षा में प्रकाश एंव वायु संचार की अपर्याप्त व्यवस्था विद्यार्थियों के लिये कई प्रकार की समस्यायें खड़ी कर देती है। कक्षा में प्रकाश और वायु संचार की सुव्यवस्था होनी चाहिए। कक्षायें खुली, साफ, सुथरी, हवादार तथा विद्यार्थियों के लिये सुविधाजनक होनी चाहिएं।

2. **अपर्याप्त फर्नीचर एंव बैठने की व्यवस्था-**अपर्याप्त एंव दोषपूर्ण फर्नीचर तथा बैठने की व्यवस्था के कारण कई प्रकार की कक्षीय समस्यायें उत्पन्न हो सकती हैं। विद्यार्थी लम्बे समय तक सख्त बैंचों पर नहीं बैठ सकते। बैठने के अपर्याप्त प्रबन्ध के कारण विद्यार्थी आराम से कक्षा में काम नहीं कर पाते। उन के लिये पढ़ाई में ध्यान देना कठिन हो जाता है।
3. **कक्षा में अत्यधिक भीड़-** अधिकांश स्कूलों में विद्यार्थियों की अत्यधिक भीड़ होती है। कहीं-कहीं में 70-80 से भी अधिक विद्यार्थी होते हैं। विद्यार्थियों से खचा-खच भरी कक्षा में अध्यापक के लिये कुशलतापूर्वक पढ़ाना कठिन हो जाता है
4. **अपर्याप्त उपकरण-**खचा-खच भरी कक्षा में सभी विद्यार्थियों के लिये उपकरणों की व्यवस्था करना अत्यन्त कठिन होता है। ऐसी स्थिति में विद्यार्थियों के लिये क्रियात्मक अभ्यास करना कठिन होता है।
5. **नित्यचर्या का अभाव-** नित्यचर्या के टूटने से कक्षा में अनुशासनहीनता उत्पन्न होती है। उपस्थिति लेने, प्रयोग करने कक्षा में आने और जाने तथा अन्य क्रियाओं में नित्यचर्या का पालन करना चाहिए।
6. **संशोधन कार्य की समस्यायें-** विद्यार्थियों से खचा-खच भरी हुई कक्षा में विद्यार्थियों के लिखित कार्य को शुद्ध करना असम्भव होता है।
7. **कक्षाओं का एक दूसरे के निकट होना-** अधिकांश कक्षायें एक दूसरे के इतनी निकट होती हैं कि एक कक्षा का शोर दूसरी कक्षा के विद्यार्थियों के काम में बाधक बन जाता है। इस से पढ़ाई की हानि होती है।
8. **अनुशासनहीनता की समस्यायें-**अध्यापक को कक्षा में अनुशासनहीनता की कई समस्याओं का सामना करना पड़ता है। प्रायः पीछे बैठने वाले विद्यार्थी अनुशासन भंग करते हैं।
9. **अनुपस्थिति की समस्यायें-** अध्यापक और विद्यार्थियों में अनुपस्थित रहने की प्रवृति के कारण कक्षीय शिक्षण पर बुरा प्रभाव पड़ता है।

अभ्यास प्रश्न

7. शिक्षण अधिगम की क्या समस्याएं हैं?
8. कक्षीय प्रबन्ध की क्या समस्याएं हैं?

9.5 विद्यार्थी सहायक प्रणाली

शिक्षा की सहायक प्रणाली सामान्य स्वरूप के अतिरिक्त आवश्यक होती है। इसका सम्बन्ध विद्यार्थी अध्यापक अन्तः प्रक्रिया से होता है। इसके अन्तर्गत छात्रों को निर्देशन दिया जाता है तथा छात्रों की कठिनाइयों के लिये सुधारात्मक शिक्षण की व्यवस्था की जाती है। अध्ययन केन्द्रों पर विद्यार्थियों को पुस्तकालय की सुविधा दी जाती है अनुवर्ग-शिक्षण किया जाता है।

9.6 दूरस्थ -शिक्षा की विकासात्मक समस्याएं

क. शैक्षिक कार्यकर्ता

ख. गैर-शैक्षिक कार्यकर्ता

ग. सम्पर्क सेवा का भुगतान

घ. पुस्तकालय तथा अध्ययन केन्द्रों का विकास

ङ. सॉफ्टवेयर तथा हार्डवेयर माध्यमों का विकास, तथा

च. व्यक्तिगत सम्पर्क कार्यक्रम

1. **शैक्षिक कार्यकर्ता** - **शैक्षिक कार्यकर्ता** दूरस्थ शिक्षा की स्वतन्त्र संकाय होनी चाहिए, जिसके अन्तर्गत आचार्य, सहआचार्य व सहायक आचार्य नियुक्त किये जायें। इन पदों के चयन के समय विशिष्ट प्रवीणता के अभ्यर्थियों को नियुक्त किया जाये, इन्हें दूरस्थ छात्र की आवश्यकताओं तथा समस्याओं की जानकारी होनी चाहिए तथा अध्ययन तथा अनुदेशन सामग्री को लिखने का कौशल होना चाहिए।
2. **गैर-शैक्षिक कर्मचारी-** दूरस्थ शिक्षा में **गैर-शैक्षिक कर्मचारी** डाक-व्यवस्था में कुशल होने चाहिये। अभी तक इस दिशा में गम्भीरता से विचार नहीं किया गया है। इसके लिए कोई मानक भी विकसित नहीं हुआ है।

   गैर-शैक्षिक कर्मचारियों को अध्ययन सामग्री, तथा गृह-कार्यों को भेजना और पुस्तकालय व अध्ययन केन्द्रों की व्यवस्था के मुख्य कार्य होते हैं। परीक्षा तथा मूल्यांकन का आयोजन करना होता है। इसके लिए अलग से कोई नियुक्तियां भी नहीं होती हैं, और इन्हें कोई विशिष्ट प्रशिक्षण भी नहीं दिया जाता है।

   पत्राचार शिक्षा के लिये प्रूफरीडर, कार्टोग्राफर डिजाइनर, पाठ्य-सामग्री को रखने वाले तथा माध्यमों हेतु तकनीशीयनों की आवश्यकता होती है। परन्तु इस प्रकार के कर्मचारियों की नियुक्तियां नहीं की जाती है।
3. **सम्पर्क सेवाओं का भुगतान-** दूरस्थ -शिक्षा की आदर्श परिस्थिति यह होती है,कि समस्त क्रियाओं की व्यवस्था संस्था के अन्तर्गत की जाए परन्तु विश्वविद्यालय अनुदान आयोग तथा विश्वविद्यालय के स्वरूप के अन्तर्गत सभी क्रियाओं हेतु सुविधायें तथा अर्थव्यवस्था नहीं की गई है। इसलिए पत्राचार-

शिक्षा के अनेक कार्य, सम्पर्क कार्यक्रम, सम्पर्क सेवाओं से ही किये जाते हैं । इनका भुगतान समय पर नहीं होता है या निम्न दर से किया जाता है। इसलिये इसकी क्रियाओं में गुणवत्ता नहीं रहती है। भुगतान हेतु कोई मानक भी विकसित नहीं हुआ है।

4. **पुस्तकालय तथा अध्ययन केन्द्रों का विकास-** विश्वविद्यालय अनुदान आयोग ने इस प्रकार के केन्द्रों के विकास पर बल दिया है तथा मानक भी निर्धारित किया गया है। इस प्रकार के केन्द्रों का लक्ष्य यह है पाठ्य सामग्री के अतिरिक्त अच्छी पुस्तकों पत्र पत्रिकाओं तथा निर्देशन व परामर्श की सुविधाओं को दूरस्थ -छात्रों को उपलब्ध करा सके। इसके लिए अच्छा भवन, कक्षायें, तथा शिक्षक आदि की सुविधायें मूल आवश्यकता है।
5. **सॉफ्टवेयर तथा हार्डवेयर का विकास-** कुछ विशेषज्ञों का विचार है कि दूरस्थ -शिक्षण हेतु शैक्षिक दूरदर्शन का उपयोग करना चाहिए। अध्ययन सामग्री को टेप करके अध्ययन केन्द्रों पर पहुंचाना चाहिए। पूना विश्वविद्यालय इस दिशा में अधिक प्रयास कर रहा है। विश्वविद्यालय अनुदान आयोग की समिति ने इसके शैक्षिक कार्यक्रमों का अवलोकन किया तथा स्नातक स्तर के छात्रों के लिए संस्तुति भी की है। शिक्षा के प्रसार तथा संचार हेतु दृश्य-टेप प्रयुक्त किये जायें। इसके लिए सॉफ्टवेयर सहायक सामग्री की आवश्यकता होती है। इस विचार को व्यवहारिक बनाने हेतु आर्थिक सहायता की आवश्यकता है।
6. **दूरस्थ शिक्षा की प्रमुख सहायक प्रणाली- दूरस्थ शिक्षा की प्रमुख सहायक प्रणाली** व्यक्तिगत सम्पर्क कार्यक्रम है। शैक्षिक दृष्टि से यह आवश्यक है कि पाठ्यवस्तु को तैयार करके सम्पर्क कार्यक्रम में शिक्षण करे।

   दूरस्थ -शिक्षा संस्थाओं के शिक्षकों को इस कार्यक्रम के आयोजन की स्वतन्त्रता होनी चाहिए। शिक्षक कार्यक्रम स्वयं तैयार करे और छात्रों की सामाजिक तथा आर्थिक परिस्थितियों को भी ध्यान में रखें।

9.7 व्यक्तिगत सम्पर्क कार्यक्रम

दूरस्थ -शिक्षण में व्यक्तिगत सम्पर्क कार्यक्रम सहायक प्रणाली का कार्य करता है। इस प्रकार के कार्यक्रमों की व्यवस्था इसलिए की जाती है जिससे विद्यार्थियों एंव अध्यापकों के मध्य अन्तः प्रक्रिया हो सके और छात्र अपनी कठिनाइयों हेतु निर्देशन तथा समाधान प्राप्त कर सकें। इन कार्यक्रमों से छात्रों को शैक्षिक लाभ होता है और शिक्षकों से सम्पर्क होता है। छात्रों की भावनाओं तथा आवश्यकताओं की पूर्ति होती है, जिससे उन्हें स्वास्थ्य हेतु पुनर्बलन तथा मार्गदर्शन मिलता है।

सम्पर्क कार्यक्रमों में छात्रों की अध्ययन सम्बन्धी कठिनाइयों को दूर करने का प्रयास किया जाता है, परन्तु इस कार्यक्रम का छात्रों को तभी लाभ होता है जब छात्रों ने पाठ्यक्रम सामग्री का पहले स्वाध्याय किया

हो। अध्ययन सम्बन्धी विशिष्ट कठिनाइयों का ही स्पष्टीकरण किया जाता हैं सम्पर्क कार्यक्रम की अवधि सीमित होती है। इसलिए सम्पूर्ण पाठ्यवस्तु का शिक्षण करना सम्भव नहीं होता है।

सम्पर्क कार्यक्रम में उपस्थिति

कुछ व्यावसायिक पाठ्यक्रमों तथा पुस्तकालय डिप्लोमा पाठ्यक्रम को छोड़कर अन्य सभी पाठ्यक्रमों में छात्रों की उपस्थिति अनिवार्य नहीं होती है। छात्रों की इच्छा पर निर्भर करता है, वह चाहे तो सम्पर्क कार्यक्रम में सम्मिलित हों अथवा न हों। कुछ संस्थाएं सम्पर्क कार्यक्रमों की व्यवस्था भी नहीं करती है। विभिन्न संस्थायें सम्पर्क कार्यक्रम की प्रभावशीलता अपने-अपने ढंग से देखती हैं। कुछ इसे आवश्यक समझती है, कुछ नहीं समझती है। सम्पर्क कार्यक्रम संस्थाओं की आर्थिक स्थिति पर निर्भर करता है। वित्तीय साधनों का अभाव होने तथा पर्याप्त शिक्षक उपलब्ध न होने के कारण उचित व्यवस्था नहीं कर पाते हैं।

दूरस्थ -शिक्षा संस्थाओं के समक्ष विभिन्न प्रकार की कठिनाइयां तथा बाधायें होती हैं। जिस कारण से सम्पर्क कार्यक्रम की व्यवस्था नहीं करते हैं।

अपर्याप्त वित्तीय सहायता का होना- छात्रों को सम्पर्क कार्यक्रम हेतु समय अथवा अवकाश नहीं मिलता है। सम्पर्क कार्यक्रम के लिए स्थान तथा यातायात की समस्या होती है तथा संस्थाओं में सम्पर्क कार्यक्रम में शिक्षण हेतु अध्यापकों का अभाव होता है।

अपर्याप्त वित्तीय सहायता-सामान्य रूप से व्यक्तिगत सम्पर्क कार्यक्रमों की व्यवस्था उन्हीं स्थानों पर की जाती है जिन स्थानों पर छात्रों की संख्या 200 के लगभग केन्द्रित हो। इसलिए सम्पर्क केन्द्रों की संख्या भी सीमित होती है। इस कारण अधिकांश छात्रों को सम्पर्क कार्यक्रम का लाभ नहीं होता है। यदि वित्तीय सहायता पर्याप्त उपलब्ध हो तो सम्पर्क कार्यक्रमों की व्यवस्था अधिक स्थानों पर की जा सकती है।

अवकाश न मिलने की कठिनाई- दूरस्थ -शिक्षा में अधिकांश छात्र सेवारत होते हैं इसलिए उन्हें सम्पर्क कार्यक्रम हेतु अवकाश की आवश्यकता होती है। इतने लम्बे समय का अवकाश नहीं मिलता है। परिणाम यह होता है कि अवकाश न मिलने के कारण सम्पर्क कार्यक्रम के लाभ से वंचित रह जाते है।

यातायात तथा आवास की समस्या- सम्पर्क कार्यक्रम के लिए छात्रों को यातायात तथा आवासीय सुविधा उपलब्ध होनी चाहिए, परन्तु इस प्रकार की सुविधाओं की व्यवस्था संस्थाओं द्वारा नहीं हो पाती है। इसलिए भी छात्र इस कार्यक्रम का लाभ नहीं उठा पाते हैं। यातायात में इस प्रकार के छात्रों को किसी प्रकार की सुविधा नहीं दी जाती है। जिन केन्द्रों पर इस प्रकार की सुविधायें उपलब्ध होती हैं वहाँ अधिकांश छात्र इस कार्यक्रम का लाभ उठाते हैं। दूरस्थ -छात्रों को रहने के लिए आवास की कठिनाई रहती है।

व्यक्तिगत सम्पर्क कार्यक्रम की व्यवस्था में इन समस्याओं का ध्यान रखना होगा तभी दूरस्थ छात्र इसका पूरा लाभ उठा सकते हैं।

पत्राचार शिक्षा के विद्यार्थी सम्पर्क कार्यक्रम के महत्व की सराहना करते हैं कि उन्हें इस कार्यक्रम से पाठ्यवस्तु को समझने में सरलता एंव सुगमता मिलती है। दूरस्थ छात्रों का यह भी सुझाव होता है कि इसकी अवधि कम है, इस अवधि को बढ़ा देना चाहिये। भारतवर्ष में विभिन्न दूरस्थ शिक्षा की संस्थाओं के सम्पर्क कार्यक्रम की अवधि में भारी भिन्नता है। 2-3 दिन से लेकर 15 दिन तक की अवधि के लिए सम्पर्क क्रम किये जाते हैं। कुछ संस्थायें पाठ्यक्रम की आवश्यकता की दृष्टि से 20 से 30 दिन की अवधि के लिये सम्पर्क कार्यक्रमों का आयोजन करती है। अवधि का समय अधिक कर देने से छात्रों को अवकाश की कठिनाई होती है।

प्रयोगशाला, पुस्तकालय तथा अध्ययन केन्द्रों की सुविधायें

दूरस्थ -शिक्षा संस्थायें विज्ञान तथा तकनीकी विषयों के शिक्षण की भी व्यवस्था करने लगी है, जिसके लिए उन्हें प्रयोगशाला की सुविधा देनी होती है। इसके लिए अपनी स्वयं की प्रयोगशाला स्थापित करनी होती है। या अन्य संस्थाओं की प्रयोगशाला की सहायता लेनी होती है। इस प्रयोगशाला का उपयोग दूरस्थ छात्र अवकाश के दिनों में ही करते हैं। विज्ञान तथा तकनीकी विषयों को समझाने की दृष्टि से प्रयोग किए जाते हैं। सम्पर्क कार्यक्रम में प्रदर्शन भी किए जाते हैं। इन विषयों के शिक्षण हेतु प्रयोगशाला की सुविधा होना आवश्यक होता है।

9.8 अध्ययन केन्द्र

अध्ययन केन्द्र दूरस्थ -शिक्षा की सहायक प्रणाली का ही अंग होता है। इस प्रणाली की अध्ययन सम्बन्धी मूल सहायता इन्हीं केन्द्रों द्वारा दी जाती है। पाठ्यवस्तु सम्बन्धी सहायता, कौशल कठिनाइयों का निराकरण तथा पृष्ठ-पोषण व अभ्यास इन्हीं केन्द्रों पर किया जाता है। अध्यापक छात्रों से अपनी टिप्पणियों के सम्बन्ध में ज्ञात करते है कि छात्रों की क्या प्रतिक्रिया है? इसके आधार पर शिक्षक छात्रों को परामर्श देते हैं। सम्पर्क कार्यक्रम के समय छात्रों की सहायता करते हैं।

अध्ययन केन्द्र निरन्तर छात्रों के अध्ययन के लिए खुले रहते हैं छात्र सेमीनार, अध्ययन तथा परामर्श हेतु अध्ययन केन्द्र पर आते रहते हैं। इन केन्द्रों के खुलने का समय निर्धारित किया जाता है। इसमें छात्रों की सुविधा हो, तथा जो भवन किराये पर लिए गए हैं उसकी उपलब्धता को भी ध्यान में रखा जाता है। शिक्षक तथा अन्य कर्मचारी भी अंश कालिक होते हैं और परम्परागत शिक्षा संस्थाओं में ही इनकी व्यवस्था की

जाती है। अध्ययन केन्द्र अवकाश के दिनों में अथवा सामान्य समय के अतिरिक्त समय में खोले जाते हैं। इस प्रकार साँयकाल तथा रविवार को यह केन्द्र खोले जाते हैं। दूरस्थ -शिक्षा में सेवारत छात्र होते हैं। इसलिए अवकाश के दिनों में अथवा सामान्य समय के अतिरिक्त समय में खोले जाते हैं। इस प्रकार सायंकाल तथा रविवार को यह केन्द्र खोले जाते हैं दूरस्थ -शिक्षा में सेवारत छात्र होते हैं। इसलिए अवकाश के दिनों में इन केन्द्रों को खोला जाता है।

दूरस्थ -शिक्षण के निर्धारण के लिए कुछ मानदण्डों को ध्यान में रखना चाहिये। अमुक अध्ययन केन्द्र पर अनुमानित छात्रों की संख्या कितनी होगी जो उस केन्द्र पर अध्ययन हेतु आयेंगे। उस केन्द्र पर पहुँचने के लिए छात्रों को कितनी दूरी तय करनी होगी तथा पहुँचने के साधन उपलब्ध होगें अथवा नहीं होंगे। यात्रा व्यय छात्रों को कितना करना होगा, उनकी पहुंच के अन्तर्गत होना आवश्यक होता है, तभी अध्ययन केन्द्रों का लाभ दूरस्थ छात्रों को मिल सकेगा। दूरस्थ -छात्र कब- कब अध्ययन के लिए आना चाहेंगे। इन सभी प्रश्नों के उत्तरों के बाद ही निर्णय करना होगा कि अमुक विद्यालय को अध्ययन केन्द्र बनाना सम्भव है अथवा नहीं है। अतः अधिकांश छात्रों की सुविधाओं को ध्यान में रखा जा सकता है। इस प्रकार के छात्रों के लिए अन्य माध्यमों का भी प्रयोग किया जा सकता है।

अध्ययन केन्द्रों पर शिक्षण सामग्री तथा अन्य सुविधाओं की भी आवश्यकता होती है। प्रधानाचार्य तथा विद्यालय के शिक्षकों की सहमति तथा सहयोग भी अपेक्षित होता है, क्योंकि विद्यालय की प्रयोगशाला तथा अन्य शिक्षण सामग्री मानचित्र, चार्ट आदि का भी उपयोग किया जाता है। शिक्षा संस्थाओं में ही यह सुविधायें उपलब्ध होती है। अन्य संस्थाओं में यह सुविधायें उपलब्ध नहीं होती है। सामान्यतः निम्नलिखित शिक्षण सामग्री अध्ययन केन्द्रों पर सुलभ होनी चाहिये-

1. पाठ्य पुस्तकें तथा सहायक पुस्तकें तथा सन्दर्भ पुस्तकें उपलब्ध हों,
2. विज्ञान तथा तकनीकी प्रयोगशाला विषयों के अनुसार उपलब्ध हो,
3. दृश्य-श्रव्य शिक्षण सहायक सामग्री रेडियो, दूरदर्शन भाषा प्रयोगशाला की सुविधा हो,
4. अन्य सूचनाओं सम्बन्धी सामग्री का होना,
5. कार्यालय सम्बन्धी सामग्री का होना
6. कक्षा-शिक्षण की सामग्री आदि का उपलब्ध होना,
7. स्टेशनरी तथा कार्यालय सम्बन्धी सामग्री का होना,
8. फोटो कॉपियर की सुविधायें आदि उपलब्ध होना।

अध्ययन केन्द्रों पर उपरोक्त में से कुछ ही सामग्री उपलब्ध होती है, परन्तु न्यूनतम शिक्षण सामग्री उपलब्ध होनी चाहिये, जो अधिकांश छात्रों के लिए उपयोगी होती है। सभी सामग्री का उपयोग कुछ ही छात्र करते हैं। न्यूनतम सामग्री में शिक्षण-कक्ष मेज, कुर्सी, श्यामपट, चाक तथा डस्टर होना चाहिए। अध्ययन केन्द्र पर विशिष्ट सामग्री में पाठ्य-पुस्तकें दृश्य-श्रव्य सामग्री, मानचित्र आदि की सुविधा भी होनी चाहिये।

अध्ययन सामग्री के भण्डारण की समस्याएँ

अध्ययन केन्द्रों में शिक्षण सामग्री का अक्सर अभाव होता है, क्योंकि भंडारण की समस्या होती है। इसलिए अध्ययन सामग्री को किराये पर लाना होता है, जिसमें व्यय अधिक करना होता है। अध्ययन केन्द्रों पर उपरोक्त सभी सामग्री उपलब्ध होनी चाहिये, तब अधिक किराया देना होगा, यह स्थायी व्यय हो जायेगा। अध्ययन सामग्री का भण्डारण केन्द्र पर किया जाये और आवश्यकता के समय अन्य केन्द्रों को दिया जाये। अध्ययन सामग्री के भण्डारण के लिए स्थान तथा कमरों की सुविधा होनी चाहिए।

अध्ययन सामग्री के सम्बन्ध में अन्य समस्या यह है कि सभी स्थानों पर बिजली नहीं होती है। इसलिए कम्प्यूटर तथा दृश्य-श्रव्य सामग्री का प्रयोग नहीं किया जा सकता है। दूरस्थ छात्रों को कई किलोमीटर यात्रा करके पहुंचना होता है। यातायात की सुविधा भी होनी चाहिए।

अध्ययन केन्द्रों की विशेषताएँ

अध्ययन केन्द्रों की स्थापना इसलिये की जाती है, जिससे दूरस्थ छात्रों को अध्ययन की सूविधाएं दी जा सकें। यह भी सहायक प्रणाली का अंग माना जाता है। इस प्रकार के केन्द्रों को शिक्षा संस्थान में भी स्थापित किया जाता है, जिससे दूरस्थ शिक्षा संस्थान को कम व्यय करना होता है। अध्ययन केन्द्रों की निम्नलिखित विशेषताएं होती हैं-

1. स्थानीय शिक्षा संस्थाओं में अध्ययन केन्द्र स्थापित किए जाते हैं जिससे अध्ययन का वातावरण भी छात्रों को दिया जा सके।
2. शिक्षण सामग्री की सुविधाएं सुगमता से मिल जाती हैं।
3. विभिन्न विषयों के शिक्षक तथा विशेषज्ञ भी उपलब्ध हो जाते हैं।
4. अध्ययन केन्द्रों के खुलने का समय अवकाश के दिनों में तथा सांयकाल का होता है।
5. दूरस्थ -छात्रों को सरलता से मिल जाता है। खोजने में कठिनाई नहीं होती।

अध्ययन केन्द्रों के कार्य

अध्ययन केन्द्रों के कार्य परम्परागत शिक्षा से बिल्कुल भिन्न प्रकार के होते हैं। एक अच्छी दूरस्थ -शिक्षा संस्था की प्रमुख विशेषता यह होती है कि परम्परागत शिक्षण के समान अध्ययन के अवसर दे सकें, परन्तु इस शिक्षण में सम्पूर्ण पाठ्यवस्तु का अध्ययन नहीं किया जाता, अपितु कुछ चुनें हुए ही प्रकरणों का शिक्षण किया जाता है। अधिकांश समय शिक्षण के अतिरिक्त क्रियाओं में किया जाता है। दूरस्थ शिक्षा में अध्ययन केन्द्रों की एक क्रिया शिक्षण की होती है, जबकि परम्परागत में शिक्षण ही प्रमुख क्रिया होती है, अन्य क्रियायें गौण मानी जाती है। इस प्रकार शिक्षण एक प्रमुख क्रिया मानी जाती है।

क. **शिक्षण समूह -** शिक्षण एक अतिरिक्त क्रिया है, जो अध्ययन की दृष्टि से अधिक महत्वपूर्ण होती है। इसकी पांच प्रमुख विषेषताएं होती हैं-

i. शिक्षण से अध्ययन कौशल का विकास होता है, जो दूरस्थ -छात्रों के लिए अधिक आवश्यक होती है।

ii. पाठ्यवस्तु सम्बन्धी कठिनाइयों तथा समस्याओं का समाधान किया जाता है, जिससे विषय को अधिक बोधगम्य बनाया जाता है।

iii. छात्रों को प्रयोगात्मक कार्य का अवसर दिया जाता है।

iv. छात्रों को समूह में रहकर अध्ययन का अवसर मिलता है।

v. व्यक्तिगत शिक्षण भी किया जाता है। भावात्मक पक्षों का विकास शिक्षण के सम्पर्क से ही होता है। अनुदेशन सामग्री से नहीं किया जाता है।

अध्ययन केन्द्रों पर सेमीनार तथा सामूहिक वाद-विवाद की व्यवस्था की जाती है। छात्रों में अध्ययन से आत्म-विश्वास का विकास होता है, कि वह जो कार्य कर रहे थे, वह बिल्कुल ठीक है।

i. अध्ययन केन्द्रों पर छात्रों के समूहों के बनाने में उनकी कठिनाइयों तथा समस्याओं को ध्यान में रखा जाता है। समूहों में इस प्रकार की सजातीयता रखी जाती है। कमजोर छात्रों को अधिक सहायता की आवश्यकता होती है।

ii. अध्ययन केन्द्रों पर शिक्षण में अतिरिक्त पाठ्य सामग्री का प्रस्तुतीकरण नहीं किया जाता है, अपितु उसी पाठ्य सामग्री को पढ़ाया जाता है जिसे पाठ सामग्री के रूप में उन्हें भेजा है या अन्य माध्यमों द्वारा प्रस्तुत किया है।

iii. सम्पर्क कार्यक्रम के शिक्षण में गृह-कार्यों के उत्तर किस प्रकार लिखें जाए, यह भी स्पष्ट हो जाता है। परीक्षा सम्बन्धी प्रश्नों को किस प्रकार लिखा जाये।

iv. माध्यमों के द्वारा कुछ प्रकरणों का प्रस्तुतीकरण कठिन होता है, ऐसे प्रकरण के लिये शिक्षण आवश्यक हो जाता है। शिक्षण द्वारा भावनात्मक अध्ययन को बढ़ावा मिलता है जो अन्य माध्यमों द्वारा संभव नहीं होता।

v. अध्यापक छात्रों की अन्तः प्रक्रिया द्वारा छात्रों के भावनात्मक पक्ष का विकास किया जाता है।

vi. गृह-कार्यों सम्बन्धी समस्याओं पर भी चर्चा की जाती है। प्रयोग-प्रदर्शन का विवरण सोपान के क्रम में किया जाता है। प्रवचन-विधि का भी अनुसरण किया जाता है।

vii. अध्ययन केन्द्रों पर शिक्षण के समय यह सभी क्रियायें करनी होती है। शिक्षण से पूर्व छात्रों की उपस्थिति भी ली जानी चाहिए। जो छात्र नियमित रूप से कक्षा में उपस्थित नहीं रह सकते हैं, उन्हें अन्य विकल्प से सहायता देनी चाहिए।

ख. **शिक्षण में माध्यमों का उपयोग-** कुछ दूरस्थ -शिक्षा संस्थायें शिक्षण में अन्य माध्यमों का भी प्रयोग करते हैं। केसिट का प्रयोग अधिक किया जाने लगा है। इसे शिक्षा की शक्तिशाली विधि मानते हैं, क्योंकि यह छात्रों के नियन्त्रण में होते हैं, इन्हें जब चाहे सुविधानुसार प्रयोग करते हैं।

अध्ययन केन्द्रों के शिक्षकों को इस प्रकार स्त्रोत तथा माध्यमों की जानकारी होनी चाहिए। इसके लिए प्रशिक्षण की तथा निर्देशन की आवश्यकता होती है। इन माध्यमों का उपयोग प्रभावशाली ढंग से किया जा सकता है। इनका उपयोग स्थानीय शिक्षकों द्वारा किया जा सकता है। पर्यवेक्षक स्वयं भी सीख और सामूहिक वाद विवाद की व्यवस्था कर सकते हैं।

ग. **व्यक्तिगत शिक्षण**-दूरस्थ -शिक्षा प्रणाली में पत्राचार के माध्यम से ही व्यक्तिगत सम्पर्क होता है, विशेष रूप से जब शिक्षक गृह कार्य **दूरस्थ शिक्षा की प्रमुख सहायक प्रणाली** की जांच करता है। पत्राचार से पृष्ठपोषण देना महत्वपूर्ण कार्य माना जाता है। पत्राचार में शिक्षण उतम प्रकार का होना चाहिए, क्योंकि दूरस्थ शिक्षा संस्थाएं इस पर अधिक ध्यान देती हैं। पत्राचार शिक्षा में इस तथ्य का विवेचन किया गया है।

पत्राचार का शिक्षक स्थानीय अध्ययन केन्द्र पर कार्य करता है, इसलिए छात्रों से संपर्क भी होता है। स्थानीय शिक्षकों को छात्रों की कठिनाईयों तथा समस्याओं का ही ज्ञान होता है, क्योंकि छात्रों की संख्या अधिक होती है और समय कम होता है। इसलिए छात्र एवं शिक्षक सम्पर्क अनौपचारिक तथा कभी-कभी ही होता है।

घ. **स्त्रोतों का उपयोग -** अध्ययन केन्द्रों को शिक्षण सामग्री से सुसज्जित करना अधिक महंगा होता है। इसलिए अध्ययन केन्द्रों पर कम-से -कम आवश्यक शिक्षण सामग्री की व्यवस्था ही की जाती है। दूरस्थ छात्रों को पाठ्य पुस्तकें, दूरदर्शन तथा रेडियों की सुविधाएं उपलब्ध होनी चहिए।

i. अध्ययन केन्द्र छात्रों के लिए वैकल्पिक व्यवस्था भी करते हैं। इसलिए छात्रों हेतु इन्हें अतिरिक्त स्त्रोत कहते हैं।

ii. दूरस्थ छात्रों को अध्ययन सामग्री जो घर पर भेजी जाती है, उसके लिए अध्ययन केन्द्र पूरक सामग्री का कार्य करते हैं।

iii. अतिरिक्त स्त्रोत साधन पाठयक्रम के सम्बन्धित होते है, जो पाठ्य अतिरिक्त आवश्यकताओं की पूर्ति होती है।

iv. पाठ्य पुस्तकों में सन्दर्भ के रूप में उल्लेख होता है जो उनसे सम्बन्धित होती है या जिनकी शिक्षकों द्वारा संस्तुति की जाती है। अध्ययन केन्द्रों पर पुस्तकालय की सुविधा होनी चाहिए और इस प्रकार की सहायक पुस्तकों को रखा जाए। छात्रों को बैठकर पढनें की सुविधा भी दी जानी चाहिए।

v. अध्ययन केन्द्रों पर महत्वपूर्ण पुस्तकों को रखा जाए, जिन्हें विश्वविद्यालय स्तर पर पढाया जाता है। दूरस्थ छात्र जो आन्तरिक क्षेत्रों में रहते हैं और उन्हें अच्छी पुस्तकें तथा पुस्तकालय देखने का कभी अवसर नहीं मिलता है।

vi. छात्रों को भेजी जाने वाली पाठ्य सामग्री इस दृष्टि से पूर्ण होनी चाहिए जिससे छात्रों को अतिरिक्त अध्ययन की

vii. अध्ययन केन्द्रों पर रिकॉर्डिंग की भी सुविधा होनी चाहिए जिन पाठ्यक्रमों का दूरदर्शन तथा रेडियो से प्रसारण किया जाता है, उनका रिकार्डिंग कर लिया जाए, और आवश्यकता पड़ने पर छात्रों को पुनः दिखाया या सुनाया जा सके, तथा जो छात्र वंचित रह गये, उन्हें भी उसका लाभ दिया जा सके।

viii. अध्ययन केन्द्रों पर इस प्रकार की सुविधाओं के सम्बन्ध में यह सुनिश्चित नहीं कर सकते कि सभी दूरस्थ छात्र इन स्त्रोत तथा साधनों का लाभ उठा सकेंगें। क्योंकि छात्रों को यातायात, रहने तथा बैठने आदि की व्यवस्था स्वयं करनी होगी। यदि वे सेवारत है तब दूरी के छात्रों को अवकाश लेना होगा। इस प्रकार के अध्ययन केन्द्र के समीपवर्ती छात्र पूरा-पूरा लाभ उठा सकते हैं।

ङ. **अन्य छात्रों से सम्पर्क-** दूरस्थ छात्र आपसी सम्पर्क तथा अन्तः प्रक्रिया से वंचित रहता है। यह सुविधा तथा अवसर अध्ययन केन्द्रों पर उन्हें मिल पाता है। इसके अतिरिक्त थोड़े समय के लिए व्यक्तिगत सम्पर्क कार्यक्रम में अन्तः प्रक्रिया होती है। इसलिए छोटे समूह बनाकर वाद-विवाद की व्यवस्था करनी चाहिए। जिससे आपस में अन्त प्रक्रिया थोड़े समय में भी अधिक हो सके, क्योंकि बड़े समूह में अन्तः प्रक्रिया सम्भव नहीं होती है।

च. **प्रशासनिक क्रियायें**- अध्ययन केन्द्रों की शैक्षिक क्रियाओं तथा साधनों का वर्णन किया गया, परन्तु केन्द्रों के संचालन हेतु प्रशासनिक क्रियाओं का विशेष महत्व है।

छ. **अध्ययन केन्द्रों पर परामर्श सेवायें** - अध्ययन केन्द्रों पर कई प्रकार की क्रियायें की जाती हैं। एक या दो सप्ताह सम्पर्क के बाद छात्र जब अपने घर लौटता है तब उसे कई प्रकार के सुझाव तथा परामर्श दिये जाते हैं अध्ययन केन्द्रों पर दूरस्थ छात्रों की सभी प्रकार के निर्देशन तथा परामर्श की सेवाओं की व्यवस्था की जाती है।

दूरस्थ शिक्षा के पुस्तकालय

दूरस्थ शिक्षा की तीसरी सहायक क्रिया पुस्तकालय की सुविधा है। शैक्षिक क्रियाओं तथा आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए पुस्तकालय के कर्मचारियों के सहयोग की आवश्यकता होती है। पुस्तकालयाध्यक्ष को अनुदेशन सामग्री तथा व्याख्यानों की व्यवस्था समुचित ढंग से करनी चाहिए। पुस्तकालय के उपयोग सम्बन्धी निर्देशन भी छात्रों को दिये जाएं। पोस्टर, नियमावली को सूचनापट्ट पर लगा देना चाहिए। छात्रों को पुस्तकालय के उपयोग हेतु प्रोत्साहित करना चाहिए।

दूरस्थ छात्र हेतु पुस्तकालय सेवायें

दूरस्थ छात्रों के लिए पुस्तकालय तथा सूचना सेवाओं की सुविधा की व्यवस्था होना अधिक महत्वपूर्ण होता है, क्योंकि ऐसी ही सुविधायें नियमित छात्रों के लिए होती है। विभिन्न दूरस्थ शिक्षा विश्वविद्यालयों की पुस्तकालय नीति अलग-अलग होती है।

भारतीय मुक्त विश्वविद्यालयों में छात्रों को डाक द्वारा पुस्तकें उधार लेने की व्यवस्था की गई है। कुछ विश्वविद्यालयों में फोटो कापी की सुविधा है। इसके लिए छात्रों से कोई अतिरिक्त फीस नहीं ली जाती है। उन्हें डाक द्वारा यह सुविधायें दी जाती हैं। यह सेवायें केन्द्रीय पुस्तकालय द्वारा ही की जाती है। कुछ संस्थायें अध्ययन केन्द्र के समीप की सरकारी पुस्तकालय का भी उपयोग करते हैं।

दूरस्थ संस्थाओं के पुस्तकालयों का लाभ हजारों विभिन्न वर्गों के छात्रों को मिलता है। यहां तक कि सम्पूर्ण देश के प्रौढ़ छात्रों को लाभ मिलता है। केन्द्रीय पुस्तकालय को इसकी व्यवस्था हेतु अनेक चुनौतियों का सामना करना होता है।

9.9 परामर्श सेवायें

दूरस्थ शिक्षा प्रणाली के विकास की सहायक क्रिया परामर्श सेवायें होती है।

मासलों के अनुसार परामर्श का अर्थ है।

“ स्वयं तथा पर्यावरण के मध्य क्रमबद्ध खोज है जिसे परामर्शदाता स्वयं समझकर उसके व्यवहार परिवर्तन के लिए वैकल्पिक वातावरण के लिए परामर्श देता है। यह निर्णय या परामर्श ज्ञानात्मक तथा भावात्मक पक्षों की समझ के आधार पर होता है।

परामर्श के सिद्धान्त

सामान्य रूप से परामर्श मनोविज्ञान की एक शाखा है। एक डॉक्टर भी बीमार का मनोवैज्ञानिक उपचार करता है। सामान्य बीमारियों का उपचार मनोवैज्ञानिक ढंग से ही करता है और मरीज ठीक हो जाते हैं उपचार के सिद्धान्त की प्रकृति मनोवैज्ञानिक तथा भौतिक दोनों ही होती है।

मनोवैज्ञानिक उपचार ’फ्राइड’ ने सर्वप्रथम दिया था। जो उसके मनोविश्लेषण सिद्धान्त पर आधारित है। बीमारिय अचेतन मस्तिष्क के दबाव का ही परिणाम होता है। आवश्यकताओं की सन्तुष्टि न होने पर अचेतन में दब जाती है।

मानववादी मनोवैज्ञानिक के कई समूह है जिनमें आपस में ही मतभेद है। जिनमें प्रमुख है - रोगेरियन जिसके प्रवर्तक कार्ल रोजर्स है। यह सिद्धान्त बहुत सरल है इसे अप्रत्यक्ष निर्देशन भी कहते है। बात-चीत के माध्यम से समस्या का स्पष्टीकरण किया जाता है। इससे परामर्श का कार्य किया जाता है। वह अपने ढंग से समस्या का उपचार करता है। इसके लिए विशिष्ट कौशल की आवश्यकता होती है।

परामर्शदाता की विशेषतायें

रोजर्स ने एक प्रभावशाली परामर्शदाता की विशेषताओं की पहचान की है, जिनमें प्रमुख विशेषतायें है - सच्ची लगन, स्वीकृति यथार्थता तथा सहानुभूति।

i. **सच्ची लगन-** इसमें परामर्शदाता सच्ची लगन से छात्र का स्वागत करता है जिससे वह अपने महत्व को समझने लगे। बडे उत्साह एवं प्रसन्न मुद्रा मे स्वागत करना चाहिए। इस व्यवहार में स्वाभाविकता होनी चाहिए।
ii. **स्वीकृति-** अन्य व्यक्तियों के विचारों तथा भावनाओं को भी स्वीकृति देनी चाहिए। आलोचना तभी करनी चाहिए जब उनकी भावनाओं तथा विचारों से हानि तथा कष्ट की सम्भावना हो।

iii. **यथार्थता -** परामर्शदाता के सुझाव में यथार्थता होनी चाहिए। तथ्यों को स्पष्ट रूप में रखना चाहिए। बचाव पक्ष के रूप में नहीं रखना चाहिए। छात्र तथ्यों की यथार्थता को समझ सके तथा अनुभव भी करने लगे।

iv. **सहानुभूति -** छात्र तथा अन्य व्यक्तियों की भावनाओं तथा अनुभवोें की पूर्णरूप से सराहना करनी चाहिए। दूरस्थ शिक्षकों में यह गुण होते है तब वे इस शिक्षा प्रणाली की ओर छात्रों को आकर्षित करते है। परामर्शदाता चुनौतियों को सहर्ष स्वीकार करता है।

परामर्शदाता के कौशल

साधारणतः एक कुशल परामर्शदाता में प्रमुख तीन कौशल होते हैं - चयन करना, सुनना तथा स्वरूप विकसित करना।

i. **चयन करना-** इस अवस्था में किस प्रकार की अनुक्रिया की जाय, इनके चयन का कौशल होना आवश्यक होता है, जिससे समुचित ढंग से परामर्श दिया जा सके।

ii. **सुनना -** छात्र के व्यवहारों, अनुक्रियाओं तथा कथनों को ध्यान से सुनना चाहिए, जिससे छात्र में यह भावना विकसित होगी कि हमारी बात को कितने ध्यान से सुना जा रहा है। परामर्शदाता में विश्वास की भावना विकसित होगी तथा परामर्शदाता उसके कथनों के आधार पर समस्या का निदान भी कर सकता है।

iii. **स्वरूप विकसित करना-** सुनने के आधार पर कारणों को पहचान लेगा, निदान हेतु अपनी क्रियाओं का स्वरूप विकसित करेगा। समुचित प्रारूप विकसित करने पर ही समस्या का समाधान किया जा सकता है।

परामर्श का माध्यम

परामर्श देने की प्रक्रिया दूरस्थ छात्रों की भिन्न प्रकार की होगी, क्योंकि इसमें अपने प्रकार के माध्यमों का उपयोग किया जाता है। परामर्श के सम्बन्ध में तीन अवधारणायें है।

i. छात्र एवं परामर्शदाता के मध्य द्वि-मार्गीय प्रक्रिया है।
ii. परामर्श व्यक्तिगत रूप में दिया जाता है।
iii. परामर्श का स्वपक्रम या तो परामर्शदाता या छात्र द्वारा किया जाता है।

गृहकार्यों को जमा करना

छात्रों द्वारा गृहकार्यों को पूरा करके भेजने से यह जाहिर होता है कि वे अध्ययन में लगे रहते हैं। छात्र ने कितने गृहकार्य भेजे है, इससे उसके अध्ययन के घण्टों का आभास होता है। गृहकार्यों की सघनता छात्र के अध्ययन

का परिचायक है तथा छात्र एवं शिक्षक का सम्पर्क भी अधिक होता है। छात्रों की निष्पत्ति में वृद्धि होती है। गृहकार्यों के माध्यम से छात्रों एवं शिक्षक के मध्य द्वि-मार्गीय सम्प्रेषण होता है। गृहकार्यों के जमा करने के अधोलिखित लाभ होते हैं।

क. छात्रों को अध्ययन हेतु प्रोत्साहन मिलता है।
ख. पाठ्यवस्तु की व्यवस्था भी समुचित ढंग से की जा सकती है।
ग. छात्र पाठ्यक्रम के प्रति तत्पर रहता है।
घ. छात्र का संस्था तथा शिक्षक से निकट का सम्बन्ध होता है।
ङ. छात्र को अपने अध्ययन में सुधार का अवसर तथा निर्देशन मिलता है।
च. छात्र को पुनर्बलन मिलता है।
छ. अध्ययन की समस्याओं एवं कठिनाइयों का समाधान मिलता है।
ज. पाठ्यक्रम सम्बन्धी महत्वपूर्ण प्रकरणों की जानकारी होती है।
झ. पाठ्यवस्तु को दुहराने अथवा अभ्यास का अवसर मिलता है, जिससे बोधगम्यता होती है।
ञ. गृहकार्यों को लिखने से प्रश्नों के उत्तर लिखने का अभ्यास होता है। छात्रों की लिखने की गति में वृद्धि भी होती है।

शिक्षक को दूरस्थ छात्र की आवश्यकताओं, समस्याओं तथा कठिनाईयों को ध्यान में रखना होता है। छात्रों को व्यक्तिगत रूप से अध्ययन हेतु प्रोत्साहित करना पड़ता है। दूरस्थ शिक्षक को अपने स्वयं के कार्यों द्वारा एक प्रभावी शिक्षक बनना होता है।

दूरस्थ शिक्षा संस्थायें छात्रों को व्यक्तिगत रूप से प्रोत्साहित करने के लिए सम्पर्क कार्यक्रम में अनुवर्ग शिक्षण की व्यवस्था करती है। अनुवर्ग शिक्षण में छात्रों की कठिनाईयों के अनुसार शिक्षण की व्यवस्था की जाती है। नियमित कक्षा शिक्षण से जो पाठ्यवस्तु छात्रों की समझ में नहीं आती है, उनके लिये अनुवर्ग शिक्षण की व्यवस्था उच्च शिक्षा में की जाती है, परन्तु दूरस्थ शिक्षा में जो अनुदेशन पाठ सामग्री छात्रों को अध्ययन हेतु भेजी जाती है। उसके समझने में छात्रों की जो कठिनाईयां होती हैं उसके लिए सम्पर्क कार्यक्रम मे अनुवर्ग शिक्षण की व्यवस्था की जाती है। अनुवर्ग शिक्षण की अनुदेशन पाठ सामग्री उपचारात्मक होती है। इसे व्यक्तिगत अनुदेशन भी कहते हैं। अनुवर्ग शिक्षण के लिए छात्रों की कठिनाईयों का निदान किया जाता है और उपचारात्मक अनुदेशन पाठ्य सामग्री भी तैयार की जाती है। अनुवर्ग शिक्षण को प्रभावशाली बनाने के लिए आवश्यक होता है।

i. छात्र तथा शिक्षक के मध्य व्यक्तिगत अन्तः प्रक्रिया अधिक हो,

ii. अध्ययन हेतु समुचित वातावरण उत्पन्न किया जाये। प्रत्येक प्रकार के छात्र को सीखना सुगम हो,
iii. छात्रों में आपस में तथा शिक्षक से निकट के सम्बन्ध विकसित हों।

अभ्यास प्रश्न

9. दूरस्थ शिक्षा की दो विकासात्मक समस्याएं लिखिए।
10. व्यक्तिगत सम्पर्क कार्यक्रम क्या हैं ?
11. अध्ययन केन्द्र दूरस्थ शिक्षा की सहायक प्रणाली का अंग नहीं है।(सत्य/असत्य)
12. अध्ययन केन्द्रों पर शिक्षण सामग्री तथा अन्य सुविधाओं की आवश्यकता होती है। (सत्य/असत्य)
13. दूरस्थ शिक्षा में पुस्तकालय सहायक क्रिया का हिस्सा नहीं है। (सत्य/असत्य)
14. परामर्शदाता के प्रमुख कौशल हैं।
    i. चयन करना
    ii. सुनना
    iii. स्वरूप विकसित करना
    iv. उपरोक्त तीनों

9.10 सारांश

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप यह जान चुके हैं कि दूरस्थ शिक्षा वह शिक्षा व्यवस्था है जिसमें विद्यार्थी शिक्षकों से भौगोलिक दृष्टि से दूर रह कर मुद्रित सामग्रियों तथा संचार माध्यमों के प्रभावशाली सम्प्रेषण द्वारा शिक्षा प्राप्त करते हैं। दूरस्थ शिक्षा में विद्यार्थियों को शिक्षक के साथ जोड़ने में पाठयक्रम को सुचारू रूप से चलाने के लिए श्रव्य-दृश्य साधनों का प्रयोग होता है। दूरस्थ शिक्षा में क्रियात्मक अनुभव बहुत कम होता है। दूरस्थ शिक्षा से विद्यार्थियों को कई समस्याओं का सामना करना पड़ता है। कक्षीय वातावरण में शिक्षण अधिगम एवं कक्षीय वातावरण की समस्याएं सम्मिलित हैं। विद्यार्थी सहायक प्रणाली दूरस्थ शिक्षा में अत्यन्त महत्वपूर्ण सिद्ध हुई है। दूरस्थ शिक्षा में विद्यार्थियों की समस्याओं के समाधान में विद्यार्थी सहायक प्रणाली सहायक सिद्ध हुई है।

9.11 शब्दावली

1. दूरस्थ शिक्षा: दूरस्थ शिक्षा अधिगम विधि की कुछ ऐसी विशेषताओं को प्रकट करती है जो उसे शिक्षा संस्थाओं की अधिगम विधि से अलग करती है।
2. विद्यार्थी: जो छात्र नियमित रूप से शिक्षा प्राप्त नहीं कर सके
3. अनुवर्ग शिक्षण: व्यक्तिगत रूप में प्रोत्साहित करने के लिए सम्पर्क कार्यक्रम का आयोजन।

9.12 अभ्यास के प्रश्नों के उतर

1. दूरस्थ शिक्षा की निम्नलिखित विशेषताएं हैं:
   i. दूरस्थ शिक्षा शिक्षार्थी केन्द्रित होती है
   ii. दूरस्थ शिक्षा समय और सीमा से मुक्त है।
   iii. दूरस्थ शिक्षा अप्रत्यक्ष शिक्षा पद्धति है।
   iv. दूरस्थ शिक्षा पर खर्चा भी ज्यादा नहीं होता है। यह कम खर्चीली है।
2. दूरस्थ शिक्षा की निम्नलिखित प्रमुख समस्यायें हैं।:
   i. दूरस्थ शिक्षा में क्रियात्मक अनुभव कम होता है।
   ii. इस शिक्षा में अध्ययन केन्द्र व पुस्तक बैकों की व्यवस्था बहुत कम है।
   iii. अधिगम सामग्री कर मुद्रण अच्छे स्तर का नहीं होता है।
   iv. व्यक्तिगत सम्पर्क कार्यक्रम कक्षाएं बहुत प्रभावशाली और उपयोगी सिद्ध नहीं होती हैं।
3. शिक्षक और शिक्षार्थी, अंन्तक्रिया
4. अप्रत्यक्ष
5. असत्य
6. सत्य
7. शिक्षण अधिगम की प्रक्रिया त्रि-धुर्वीय प्रक्रिया है। अध्यापक व विषय सामग्री में सम्बन्ध रहता है। विद्यार्थी कक्षा में कई प्रकार की समस्याएं पैदा करता है। अध्यापक के व्यवहार व अनुदेशन सम्बन्धी समस्याएं रहती है। अध्यापक में ज्ञान का अभाव कक्षा में कई समस्याओं का कारण बनता है। अध्यापक का दुर्बल चरित्र पक्षपातपूर्ण व्यवहार कक्षा में समस्यादायक बन जाता है। कठोर व बोझिल पाठ्यक्रम कठोर समय सारणी शिक्षण संघ साधनों एवं विज्ञान उपकरणों की समस्या प्रमुख है।

8. अपर्याप्त प्रकाश एवं वायु संचार, कक्षीय प्रबन्ध की समस्या, अपर्याप्त फर्नीचर एवं बैठने की व्यवस्था के कारण कक्षीय समस्या उत्पन्न हो जाती है। संशोधन कार्य की समस्या, अनुशासनहीनता की समस्या व अनुपस्थिति की समस्या का शिक्षण पर बुरा प्रभाव पड़ता है।
9. दूरस्थ शिक्षा की दो विकासात्मक समस्याएं
    a. शैक्षिक कार्यकता से सम्बन्धित समस्या।
    b. पुस्तकालय एवं अध्ययन केन्द्र से सम्बन्धित समस्या।
10. दूरस्थ शिक्षण में व्यक्तिगत सम्पर्क कार्यक्रम सहायक प्रणाली का कार्य करता है। इस कार्यक्रम से शैक्षिक लाभ होता है। विद्यार्थियों की भावनाओं तथा आवश्यकताओं की पूर्ति होती है।
11. असत्य
12. सत्य
13. असत्य
14. (iv)उपरोक्त तीनों

9.13 संदर्भ ग्रंथ

1. उपाध्याय, प्रतिभा (2003) भारतीय शिक्षा में उदीयमान प्रवृत्तियां, शारदा पुस्तक भवन, इलाहाबाद
2. भाटिया, के॰ के॰ एवं अरोड़ा जे॰ एन॰ (1970) शिक्षण कला प्रकाश ब्रदर्स पुस्तक बाजार लुधियाना।
3. वालिया, जे॰ एस॰ (1998) आधुनिक भारतीय शिक्षा और उसकी समस्याएं पाल पब्लिशर्स, जालन्धर शहर पंजाब।
4. शर्मा, आर॰ ए (2011) दूरस्थ शिक्षा, आर॰ लाल बुक डिपो मेरठ।

9.14 निबन्धात्मक प्रश्न

1. दूरस्थ शिक्षा की विशेषताएं एवं समस्याएं स्पष्ट करें।
2. दूरस्थ शिक्षा की मुख्य विशेषताओं का वर्णन किजिए।
3. निम्नलिखित पर संक्षिप्त में नोट लिखो।
    i. दूरस्थ शिक्षा एवं विद्यार्थी
    ii. शिक्षण अधिगम की समस्यायें।
    iii. कक्षीय प्रबन्ध की समस्यायें।
4. दूरस्थ शिक्षा में विद्यार्थी सहायक प्रणाली की संक्षिप्त में विवेचना कीजिए।

5. दूरस्थ शिक्षा में अध्ययन सामग्री के भण्डारण की कौन-कौन सी समस्याएं हैं?
6. व्यक्तिगत संम्पर्क कार्यक्रम का वर्णन करो।
7. दूरस्थ शिक्षा की विकासात्मक समस्याओं की विवेचना कीजिए।
8. संक्षिप्त में नोट लिखो।
    i. दूरस्थ शिक्षा में गृहकार्य
    ii. परामर्शदाता की विशेषताएं
9. दूरस्थ शिक्षा में अनुवर्ग शिक्षा से आप क्या समझते हैं? व्याख्या कीजिए।
10. दूरस्थ शिक्षा में विद्यार्थियों को किन-किन समस्याओं का सामना करना पड़ता है। वर्णन कीजिए।

Block-3

इकाई 10: प्रौढ़ शिक्षा, आजीवन शिक्षा, सतत शिक्षा: अर्थ, प्रकृति, उद्देश्य और महत्व (Adult Education, Life Long Learning, Continuing Education: Meaning, Objectives and Significance)

इकाई की रूपरेखा:-

10.1 प्रस्तावना

10.2 उद्देश्य

10.3 प्रौढ़ शिक्षा का अर्थ

10.4 प्रौढ़ शिक्षा के उद्देश्य

10.5 प्रौढ़ शिक्षा का महत्व

अपनी उन्नति जानिए

10.6 आजीवन सीखने का अर्थ

10.7 आजीवन सीखने का उद्देश्य

10.8 आजीवन सीखने का महत्व

10.9 सतत शिक्षा का अर्थ

10.10 सतत शिक्षा के उद्देश्य

10.11 सतत शिक्षा का महत्व

अपनी उन्नति जानिए

10.12 सारांश

10.13 शब्दावली

10.14 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

10.15 संदर्भ ग्रंथ सूची

10.16 निबंधात्मक प्रश्न

10.1 प्रस्तावना

प्रौढ़ शिक्षा का उद्देश्य उन प्रौढ व्यक्तियों को शैक्षिक विकल्प देना है, जिन्होंने यह अवसर गंवा दिया है और औपचारिक शिक्षा आयु को पार कर चुके हैं, लेकिन अब वे साक्षरता, आधारभूत शिक्षा, कौशल विकास (व्यावसायिक शिक्षा) और इसी तरह की अन्य शिक्षा सहित किसी तरह के ज्ञान की आवश्यकता का अनुभव करते हैं। प्रौढ़ शिक्षा को बढ़ावा देने के उद्देश्य से पहली पंचवर्षीय योजना से अनेक कार्यक्रम शुरू किए गए हैं, जिनमें सबसे प्रमुख राष्ट्रीय साक्षरता मिशन है, जिसे समयबद्ध तरीके से 15-36 वर्ष की आयु समूह में अशिक्षितों को कार्यात्मक साक्षरता प्रदान करने के लिए 1988 में शुरू किया गया था। सरकार ने प्रौढ़ निरक्षरता के विरूद्ध एक सुव्यवस्थित व सुनियोजित अभियान प्रारम्भ किया है। इससे अब तक शैक्षिक व सामाजिक रूप से वंचित रहे व्यक्ति सामाजिक व सांस्कृतिक परिवर्तन में अपनी सक्रिय भूमिका अदा कर सकेंगे। वे न केवल साक्षर बन सकेंगे वरन आत्मनिर्भर व स्वावलम्बी नागरिक बन कर विकास की प्रक्रिया में अपनी भागीदारी सुनिश्चित कर सकेंगे। हमें राष्ट्रीय साक्षरता अभियान को जन आन्दोलन का स्वरूप देना है व एकजुट होकर देश से निरक्षरता के अभिशाप को दूर करने के लिए कृतसंकल्प होना है। हमें यह सदैव याद रखना है कि देश का व हमारा भविष्य इस कार्यक्रम की सफलता पर अवलम्बित है। इस अध्याय में आप प्रौढ़ शिक्षा का अर्थ, प्रकृति, उद्देश्य और इसके महत्व के बारे में अध्ययन करेंगे।

10.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप इस योग्य हो जाएंगे कि:-

- प्रौढ़ शिक्षा के अर्थ को समझ सकेंगे।
- प्रौढ़ शिक्षा के उद्देश्य की व्याख्या कर सकेंगे।
- प्रौढ़ शिक्षा के महत्व का वर्णन कर सकेंगे।
- आजीवन शिक्षा के अर्थ को समझ सकेंगे।

- आजीवन शिक्षा के उद्देश्य की व्याख्या कर सकेंगे।
- आजीवन शिक्षा के महत्व का वर्णन कर सकेंगे।
- सतत शिक्षा के अर्थ को समझ सकेंगे।
- सतत शिक्षा के उद्देश्य की व्याख्या कर सकेंगे।
- सतत शिक्षा के महत्व का वर्णन कर सकेंगे।

10.3 प्रौढ़ शिक्षा का अर्थ

स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात प्रौढ़ शिक्षा की परिभाषा विस्तृत रूप से की जाने लगी है ऐसा इसलिए हुआ है क्योंकि राष्ट्रीय नेताओं की राय में देश की प्रगति के लिए निरक्षर व्यक्तियों को केवल साक्षर करना की पर्याप्त नहीं है अपितु उनकी बौधिक, सामाजिक, आर्थिक एवं नैतिक उन्नति करना भी आवश्यक है श्री सैयदेन के अनुसार यदि हमारी समस्त जनता पढ़ना-लिखना और जोड़-बाकी तथा गुणा-भाग के सवाल सही-सही लगाना सीख ले भी तो उससे क्या फायदा होगा? इससे अखबारों में तथा सार्वजनिक मंच पर लफ्रफाजी करने वालों को उन्हें बेवकूफ बनाने का उतना ही ज्यादा मसाला और मिल जायेगा। इससे न तो उनके मानदण्ड ऊँचे होगे, न उनकी रूचियों में सुधार होगा और न उनका जीवन समृद्ध बनेगा, उनकी सहानुभूति या समझ या सामाजिक चेतना में कोई गहराई नहीं पैदा होगी। इसलिए हमें इस समस्या को बिल्कुल ही दूसरे तथा अधिक व्यापक दृष्टिकोण से देखना चाहिए।

मौलाना अबुल कलाम आजाद के अनुसार-''समाज शिक्षा से हमारा तात्पर्य पूर्ण मनुष्य की शिक्षा से है। इसके द्वारा मनुष्य साक्षरता प्राप्त करेगा ताकि वह विश्व के बारे में जान सके। इससे उसे इस बात की शिक्षा मिलेगी कि वह अपने वातावरण को किस प्रकार अपने अनुकूल बनाए तथा किस प्रकार अपनी प्राकृतिक परिस्थितियों का जिनमें वह रहता है, सदुपयोग करे। इसका तात्पर्य मनुष्य को उत्तम शिल्प व उत्पादन विधियों को सिखाना है जिससे वह अपनी आर्थिक स्थिति सुधार सके। इसका उद्देश्य व्यक्ति एवं समुदाय को व्यक्तिगत सफाई के विषय में ज्ञान देना है जिससे उनका जीवन स्वास्थ्यप्रद बन सके। अन्त में, समाज शिक्षा द्वारा मनुष्य को नागरिकता का प्रशिक्षण मिलना चाहिए जिससे वह संसार की समस्याएँ जान सके व शान्ति व देश की प्रगति के अनुकूल निर्णय लेने में सरकार के लिए सहायक हो सके। श्री हुमायूँ कबीर के अनुसार - ''समाज शिक्षा का आशय उस पाठ्यक्रम से है जिससे जनता में नागरिकता की भावना उत्पन्न

होती है तथा सामाजिक एकता बढ़ती है। समाज शिक्षा निरक्षर व्यस्कों को मात्र साक्षर बनाने से संतुष्ट नहीं होती वरन् इसका उद्देश्य जनसाधारण में शिक्षित मस्तिष्क का निर्माण करना है। श्री सैयदेन ने प्रौढ़ शिक्षा में राजनीति, नागरिकता व नैतिकता की शिक्षा को शामिल किया है। डॉ0 मुखर्जी के मतानुसार प्रौढ़ शिक्षा के दो पक्ष हैं- प्रौढ़ साक्षरता तथा साक्षर प्रौढ़ों की अनवरत शिक्षा।

इस प्रकार हम कह सकते हैं कि प्रौढ़ शिक्षा या समाज शिक्षा वह अशंकालिक शिक्षा है जिसे व्यक्ति अपना काम करते हुए प्राप्त करता है। इसमें वे सभी क्रियाएँ आ जाती हैं जिनका सम्बन्ध व्यक्ति के सामान्य जीवन से है तथा जिनका कुछ शैक्षिक महत्व है। इसमें साक्षरता सम्मिलित है व साथ ही साक्षर प्रौढ़ों की आगे की शिक्षा भी सम्मिलित है जिससे नवसाक्षर पुनः निरक्षर न बन सकें। यह बहुमुखी विकास की जन शिक्षा है।

प्रौढ़ शिक्षा जैसा कि नाम से ही ज्ञात होता है, यह वह शिक्षा है जो वयस्कों को दी जाती है। इसके बारे में यह धारणा प्रचलित है कि यह निरक्षर लोगों को साक्षर बनाती है। पढ़ना, लिखना तथा गिनने का ज्ञान कराना इसका मुख्य कार्य है। समयानुसार इसकी इस धारणा में भी परिवर्तन होने लगा। इसको अब व्यापक रूप में देखा जाने लगा है। प्रौढ़ शिक्षा का उद्देश्य केवल व्यस्कों को साक्षर बनाना मात्र नहीं है। अपितु उसके अन्तर्गत वह सभी प्रकार की शिक्षा आती है जो प्रत्येक नागरिक को जनतान्त्रिक व्यवस्था का विवेकपूर्ण सदस्य बनाती है| यूनेस्को रिपोर्ट के अनुसार - ''प्रौढ़ शिक्षा से तात्पर्य है - पूर्ण मानव की शिक्षा। यह व्यक्ति को साक्षरता प्रदान करेगी जिसमें उसे विश्व का ज्ञान प्राप्त हो सके। यह उसको बतायेगी कि वह स्वयं पर्यावरण से अनुकूलन किस प्रकार करे और जिन प्राकृतिक दशाओं में यह निवास करता है उनका सर्वोत्तम प्रयोग किस प्रकार करे।''"Adult Education means the education of a complete man. It will give him literacy so that knowledge of the world may become accessible to him. It will teach him how to harmonize himself with his environment and make the best use of the physical condition in which he subsists." UNSESCO Report

प्रौढ़ शिक्षा का सम्बन्ध प्रायः उन प्रौढ़ों से समझा जाता है जो किसी न किसी उत्पादन कार्य में लगे हुए है। साक्षरता का अर्थ निरक्षर प्रौढ़ों को लिखना, पढ़ना तथा गणना का ज्ञान कराना है। आधारभूत शिक्षा की संकल्पना यूनेस्को के एक सेमिनार द्वारा प्रस्तावित की गयी, जिसके अन्तर्गत यह बतलाया गया है कि कुछ मूलभूत ज्ञान तत्व जीवन की सफलता के लिए आवश्यक है। जिसकी जानकारी सभी नागरिकों के लिए आवश्यक है। चौथा नाम केन्द्रीय सलाहकार शिक्षा परिषद् द्वारा प्रस्तावित किया गया जिसमें यह कहा गया है कि समाज शिक्षा व्यक्ति को समाज के एक स्वस्थ स्तर पर जीवन व्यतित करने के योग्य बनायेगी।

10.4 प्रौढ़ शिक्षा के उद्देश्य (Objective of Adult Education)

प्रौढ़ शिक्षा के उद्देश्यों का विश्लेषण निम्नलिखित बिन्दुओं के आधार पर किया जा सकता है:-

1. जीवन में उन्नति प्राप्त करना- प्रौढ़ शिक्षा का उद्देश्य विद्यालय की औपचारिक शिक्षा की इस कमी को पूरा करना है, जिसे व्यक्तियों ने किन्ही कारणों से अपने बचपन में प्राप्त नहीं किया है। ऐसे व्यक्ति आवश्यक शिक्षा प्राप्त करके एक सन्तुष्ट और प्रसन्न व्यक्ति के रूप में अपना जीवन व्यतीत कर सकते हैं।

2. व्यावसायिक विकास- प्रौढ़ शिक्षा का उद्देश्य ग्रामीण क्षेत्रों में कुटीर उद्योगों तथा कृषि सम्बन्धी और नगरीय क्षेत्रों में व्यवसायिक और तकनीकी शिक्षा की व्यवस्था करना है।

3. शारीरिक विकास- प्रौढ़ शिक्षा का उद्देश्य प्रौढ़ों को स्वास्थ्य सम्बन्धी शिक्षा प्रदान करना है। उन्हें स्वास्थ्य और सफाई के आधारभूत सिद्धान्तों से परिचित कराना है। उन्हें अस्वस्थता से बचने के उपायों, विभिन्न क्षेत्रों में फैलने वाले रोगों का उन्मूलन करने और पौष्टिक आहार की समस्याओं को हल करने के लिए ज्ञान प्रदान करना है।

4. अवकाश का सदुपयोग- प्रौढ़ शिक्षा का उद्देश्य व्यक्ति को इस योग्य बनाना है कि वह अपने अवकाश काल का सदुपयोग कर सके और अपने मानसिक स्वास्थ्य को सुरक्षित रख सके। इसका लक्ष्य स्वस्थ मनोरंजन के द्वारा मानसिक तनावों को दूर करके व्यक्ति के जीवन में अच्छे संस्कारों का विकास करना है।

5. सांस्कृतिक विकास- प्रौढ़ शिक्षा का उद्देश्य व्यक्तियों में ज्ञान पिपासा को जाग्रत करना, आत्म विकास के वांछित अभिवृद्धि करना, जीवन के प्रति कलात्मक दृष्टिकोण उत्पन्न करना और जीवन दर्शन का निर्माण करना है।

6. सामाजिक कुशलता का विकास- प्रौढ़ शिक्षा का उद्देश्य प्रौढ़ों में सामाजिक कुशलता का विकास करना है। जिससे वे अपने साथियों के साथ रह सकें, जीवन में उन्नति कर सकें। अपने पारिवारिक जीवन को सुखी बना सकें और आज के जटिल संसार में अपने कर्तव्य और अधिकारों को समझ सकें।

7. सामाजिक सद्भावना का विकास- प्रौढ़ शिक्षा का उद्देश्य शिक्षित और अशिक्षित, गरीब और अमीर, स्वदेशी, और विदेशी, पूंजीपति और मजदूर, शहरी और देहाती, उच्च जाति और निम्न जाति तथा युवकों और वृद्धों के बीच की दूरी को कम करके उनमें सामान्य सम्बन्ध स्थापित करना है। प्रौढ़ शिक्षा का लक्ष्य विभिन्न वर्गों के बीच की ईर्ष्या, द्वेष और अलगाव की भावना को समाप्त करके उनमें एकता की भावना को उत्पन्न करना है।

8. मानवीय साधनों का संरक्षण और विकास- प्रौढ़ शिक्षा का उद्देश्य कार्यकर्ता की उत्पादक क्षमता को उन्नत करके, राष्ट्रीय उत्पादन को बढ़ावा देकर अर्थव्यवस्था में सुधार करना है। प्रौढ़ शिक्षा का उद्देश्य लोगों में यह भावना पैदा करना है कि वे देश के प्राकृतिक और मानवीय साधनों को ऐसे साधन समझें जिनसे देशवासियों के जीवन-स्तर को ऊँचा उठाया जा सकता है।

9. सामाजिकता का विकास- प्रौढ़ शिक्षा का उद्देश्य व्यक्ति में यह भावना उत्पन्न करना है कि अपने व्यक्तिगत हित से समाज का हित बड़ा है, इसलिए समाज हित के लिए अपने व्यक्तिगत हितों का बलिदान कर देना चाहिए। प्रौढ़ शिक्षा का उद्देश्य व्यक्ति में इस भावना का समावेश करना है कि वह मानव जाति को प्रगति और विकास में अपने योगदान देने के कार्य को अपना आदर्श समझे।

10.5 प्रौढ़ शिक्षा का महत्व (Importance of Adult Education)

आज का प्रत्येक व्यक्ति समाज का उपयोगी अंग है। प्रौढ़ शिक्षा का उद्देश्य यह है कि प्रौढ़ जनता को ऐसी शिक्षा दी जाये जिससे वह अपना जीवन बेहतर बना सके, उसमें परम्परागत के बजाय प्रगतिशील समाज बनाने की इच्छा पैदा हो जाये और उसे अपने देश के भविष्य में आस्था पैदा हो प्रौढ़ शिक्षा सहित समाज शिक्षा के फील्ड कार्यो का दायित्व राज्य सरकारों और संघीय क्षेत्रों के प्रशासनों का है जो व्यक्तियों में प्रौढ़ शिक्षा को प्रसारित करके एक योग्य नागरिक का निर्माण कर सके। इस दृष्टि से भी प्रौढ़ शिक्षा का अधिक महत्व है।

भारत की वर्तमान राजनीतिक परिस्थितियों के सन्दर्भ में प्रौढ़ अथवा समाज शिक्षा के महत्व का विवेचन करते हुए, डॉ0 के0जी0 सैयदैन ने लिखा है - ''हम राष्ट्रीय जीवन के ऐसे नए युग में प्रवेश कर रहे हैं, जो शायद आने वाली कई शताब्दियों के लिए हमारे देश की भावी व्यवस्था की रूपरेखा निर्धारित कर देगा। हमारे राष्ट्रीय जीवन को विषाक्त करने वाले आपस के संगीन झगड़ों की घनघोर घटायें भी विनाश की बादलों की तरह छट जायेगी और हम फिर न्याय स्वतन्त्रता और समझदारी के प्रकाशमय वातवरण में पहुँच जायेंगे। यदि आप मुझे एक स्वतः स्पष्ट सत्य को दोहराने की अनुमति दें तो मैं कहूंगा कि अकेले राजनीतिक स्वतन्त्रता किसी भी समाज या राष्ट्र के लिए, 'अच्छे जीवन' का आश्वासन नहीं कर सकती है। हम भली-भाँति जानते है कि कई राष्ट्र राजनीतिक दृष्टि से स्वतन्त्र होते हुए भी दूसरी जंजीरों में जकड़े हुए हैं, जो उन्हें 'अच्छे जीवन की ओर' नहीं बढ़ने देती हैं क्योंकि इस प्रकार का जीवन कठिन परिश्रम तथा समाजपयोगी कार्य द्वारा ही प्राप्त किया जा सकता है। वास्तव में जब तक जनता 'निरन्तर सतर्कता' के रूप में अपनी राजनीतिक स्वतन्त्रता का मूल्य चुकाने को तैयार न हो, तब तक वह स्वतन्त्रता को भी सुरक्षित नहीं रख सकते हैं और इस 'सतर्कता के लिए उचित नागरिक तथा सामाजिक शिक्षा की आवश्यकता होती है यदि हमारा लक्ष्य ऊँचा है और हम

अपनी राजनीतिक स्वतन्त्रता के सहारे सामाजिक स्वतन्त्रता तथा आर्थिक लोकतन्त्र के लक्ष्य तक पहुँचाना चाहते हैं, तो स्पष्टः हमें जनसाधारण के लिए कहीं अधिक उच्च स्तर की शिक्षा की आवश्यकता होगी नहीं तो हमें शा इस बात का खतरा रहेगा कि चतुर लेकिन बेईमान दल या व्यक्ति अपने निकृष्ट उद्देश्यों की पूर्ति के लिए इस तथाकथित 'स्वतन्त्रता का अनुचित लाभ उठायें। इस बात को मैं तत्काल और बड़े पैमाने पर प्रौढ़-शिक्षा का आन्दोलन शुरू करने के राजनीतिक औचित्य का आधार कहूंगा।

इन सारगर्भित शब्दों में समकालीन शिक्षाशास्त्रियों के अधिराज डॉ0 सैयदैन ने हमारे देश के राष्ट्रीय जीवन में समाज-शिक्षा के महत्व का संदेश दिया है। इसी सन्देश को कुछ भिन्न शब्दावली में 'कोठारी कमीशन' ने इस प्रकार पुनरावृत्ति की है - ''कोई भी राष्ट्र अपनी सुरक्षा के भार को केवल पुलिस एवं सेना को नहीं सौंप सकता है। वस्तुतः राष्ट्रीय सुरक्षा बहुत बड़ी सीमा तक नागरिकों की शिक्षा, विभिन्न कार्यक्रमों के उनके ज्ञान, उनके चरित्र, उनकी अनुशासन की भावना एवं सुरक्षा-सम्बन्धी कार्यों में उनसे कुशलतापूर्वक भाग लेने की क्षमता पर आधारित रहती है। अतः हमारे देश के राष्ट्रीय जीवन में समाज-शिक्षा का विशिष्ट महत्व होना चाहिए।

प्रौढ़ शिक्षा का महत्व राष्ट्र की शिक्षा प्रणाली में अत्यधिक है आज की बदलती हुई परिस्थितियों में सम्पूर्ण जीवन को जीने के लिए सीखने की क्रिया अनवरत रूप से बनी रहनी चाहिए। आजकल इस बात को स्वीकार किया जाने लगा है कि आधुनिक शिक्षा प्रणाली पूरे समय के लिए विस्तृत शिक्षा प्रदान नहीं कर सकती। इस प्रणाली में विद्यालय से अलग हुए प्रौढ़ों को पूरे समय, अंशकालीन सेवाकालीन पाठ्यक्रमों का आयोजन किया जाता है। इस दृष्टि से भी प्रौढ़ शिक्षा का महत्व अधिक है।

शिक्षित व्यक्ति समाज तथा राष्ट्र की उन्नति का मूलाधार है। विश्व के जितने भी प्रगतिशील देश है उन सबकी प्रगति का श्रेय शिक्षा को जाता है। प्रजातंत्रात्मक देशों में शिक्षा का महत्व अत्यधिक है। प्रत्येक जन्तंत्रात्मक देश में शिशु, बाल, युवा, स्त्री, पुरूष तथा प्रौढ़ों को शिक्षित करने का प्रयास किया जा रहा है। हमारे यहाँ के सर्वाधिक विद्यालयों में प्रायः 6 से 21 वर्ष के बालकों की शिक्षा की व्याख्या की जाती है। किन्तु हमारे समाज में एक ऐसा भी वर्ग है जो किसी न किसी व्यवसाय में लगा हुआ है। किन्तु उनकी शिक्षा नहीं हो सकती है। शैक्षिक अवसरों के अभाव में 21 वर्ष से उपर के लोग शिक्षा ग्रहण करने में असमर्थ रहे है।

प्रौढ़ शिक्षा के महत्व पर प्रकार डालते हुए डा0 बी0के0आर0बी0 राव का कथन है- ''प्रौढ़ शिक्षा एवं प्रौढ़ साक्षरता के बिना आर्थिक सामाजिक विकास उस तीव्रता एवं वैविध्य से नहीं किया जा सकता है जिसकी हमें आवश्यकता है और न हम अपने विकास को वह स्वरूप, स्थिरता तथा विशिष्टता दे पायेंगे।

जिनका कि एक कल्याणकारी राष्ट्र में विशेष महत्व होता है। अतः आर्थिक एवं सामाजिक विकास के लिए प्रौढ़ शिक्षा एक प्राथमिक अनिवार्यता है। प्रौढ़ शिक्षा के महत्व को निम्नलिखित रूपों में भी देख सकते हैं-

- देश में ऐसे व्यक्तियों की संख्या अधिक है, जो कि अशिक्षित होते हुए भी जीविकोपार्जन में संलग्न है। उनके पास इतना समय तथा धन नहीं है कि वे नियमित रूप से विद्या अध्ययन कर सकें। हमारे देश में ऐसे प्रौढ़ों की संख्या अधिक है जो अपना हस्ताक्षर भी नहीं कर सकते। ऐसे प्रौढ़ वर्ग के लिए इसका महत्व बढ़ जाता है।

- लोकतंत्र की बुनियाद को सुदृढ़ बनाने के लिए तथा आदर्श नागरिकता के गुणों को उत्पन्न करने के लिए सामाजिक शिक्षा की ओर ध्यान देने की अधिक आवश्यकता है। अशिक्षित होने के कारण प्रौढ़-गण अपने अधिकारों एवं कर्तव्यों को समझ नहीं पाते। अतएव राजनीतिक अधिकारों के सदुपयोग के लिए भी समाज शिक्षा का अधिक महत्व है।

- ऐसा भी देखने में आया है कि कुछ लोग आर्थिक कठिनाइयों के कारण बीच में अपनी शिक्षा बन्द कर देते हैं। ऐसे अर्द्धशिक्षित व्यक्तियों के मानसिक क्षितिज को विर्स्तीण करने के लिए प्रौढ़ शिक्षा का विशेष महत्व है।

- सामुदायिक विकास के कार्यक्रमों का अनुसरण करने के लिए भी प्रौढ़ शिक्षा का अधिक महत्व है प्रौढ़ शिक्षा के द्वारा ही सामुदायिक विकास के अन्तर्गत निहित विषयों, जैसे- कृषि, स्वास्थ्य, परिवार नियोजन आदि का ज्ञान प्रदान किया जा सकता है।

- जिन व्यक्तियों ने स्कूल की शिक्षा प्राप्त कर ली है उनको देश की विभिन्न गतिविधियों से परिचित कराने के लिए एकमात्र साधन प्रौढ़ शिक्षा ही है।

- भारत की निरक्षरता को दूर करने में भी प्रौढ़ शिक्षा का महत्वपूर्ण स्थान है।

- प्रौढ़ शिक्षा अवकाश के सदुपयोग पर भी बल देती है। हम अपने अवकाश को उत्पादक कार्यों तथा स्वस्थ मनोरंजन में व्यतित करते है।

- राष्ट्रीय एकता की दृष्टि से भी प्रौढ़ शिक्षा का महत्व अत्यधिक बढ़ जाता है।

वर्ष 2004 में प्रौढ़ शिक्षा की गुणवत्ता के विषय में एक सर्वेक्षण किया गया जिससे प्राप्त हुआ कि विश्व के 127 देशों के सर्वेक्षण में भारत का स्थान शिक्षा के क्षेत्र में 105 वा था। ये तथ्य यह संदेश देते हैं कि प्रौढ़ शिक्षा के क्षेत्र में भारत को अभी काफी प्रयास करना आवश्यक है। वर्तमान में सूचना संप्रेषण के क्षेत्र में महत्वपूर्ण प्रगति हुई है। परिणामतः शैक्षिक तकनीकी में भी नए आयाम स्थापित हुए है आवश्यकता इन बात की है कि हम शैक्षिक तकनीकी के आधुनिक साधनों का प्रयोग कर तथा अन्य पारम्परिक विधाओं का प्रयोग कर प्रौढ़ शिक्षा के लक्ष्य को प्राप्त करें। रेडियों, दूरदर्शन, कम्प्यूटर नेटवर्किंग इत्यादि का पूरा लाभ उठाकर हम लक्ष्य को प्राप्त करने में निश्चित रूप से सफल हो सकते है।

अपनी उन्नति जानिए

भाग -1

प्रश्न -1 प्रौढ़ शिक्षा किसे कहते है?

सत्य असत्य का चयन कीजिये

प्रश्न -2 शिक्षित व्यक्ति समाज तथा राष्ट्र की उन्नति का मूलाधार है।

प्रश्न -3 भारत की निरक्षरता को दूर करने में भी प्रौढ़ शिक्षा का महत्वपूर्ण स्थान है।

10.6 आजीवन सीखने का अर्थ

आजीवन शिक्षा मनुष्य के जीवन में स्वयं द्वारा शुरू की गई शिक्षा का एक पहल है जो व्यक्तिगत विकास पर केंद्रित है। हालाँकि आजीवन शिक्षा की कोई मानकीकृत परिभाषा नहीं है, लेकिन आमतौर पर इसे औपचारिक शैक्षणिक संस्थान, जैसे कि स्कूल, विश्वविद्यालय या कॉर्पोरेट प्रशिक्षण के बाहर होने वाली शिक्षा के संदर्भ में लिया जाता है। चिंतनशील शिक्षण और आलोचनात्मक सोच सीखने वाले को सीखने के तरीके सीखने के माध्यम से अधिक आत्मनिर्भर बनने में मदद कर सकती है, जिससे वे अपनी स्वयं की सीखने की प्रक्रिया को निर्देशित, और नियंत्रित करने में बेहतर सक्षम हो सकते हैं। आजीवन शिक्षा के अंतर्गत स्व-निर्देशित सीखने, सहयोग, प्रतिबिंब और चुनौती को महत्व दिया जाता हैं; उनके सीखने में जोखिम लेना एक अवसर के रूप में देखा जाता है, न कि एक खतरे के रूप में। डनलप और ग्रैबिंगर का कहना है कि उच्च शिक्षा के छात्रों को आजीवन सीखने वाले बनने के लिए, उन्हें आत्म-निर्देशन, मेटाकॉग्निशन जागरूकता और सीखने के प्रति एक प्रवृत्ति की क्षमता विकसित करनी चाहिए।

डेलर्स रिपोर्ट के अनुसार आजीवन सीखना और सीखने के चार स्तंभ होते है। इसमें तर्क दिया कि औपचारिक शिक्षा मानव विकास को बनाए रखने के लिए आवश्यक अन्य प्रकार के सीखने की हानि के लिए ज्ञान के अधिग्रहण पर जोर देती है, जीवन भर सीखने के बारे में सोचने की आवश्यकता पर बल देती है, और यह संबोधित करती है कि हर कोई काम, नागरिकता और व्यक्तिगत पूर्ति के लिए प्रासंगिक कौशल, ज्ञान और दृष्टिकोण कैसे विकसित कर सकता है। सीखने के चार स्तंभ निम्नलिखित हैं:-

1. जानना सीखना
2. करना सीखना
3. सीखना
4. साथ-साथ रहना सीखना

सीखने के चार स्तंभों की परिकल्पना 'आजीवन सीखने' की धारणा की पृष्ठभूमि में की गई थी, जो स्वयं 'आजीवन शिक्षा' की अवधारणा का एक रूपांतर है, जैसा कि 1972 के फॉरे प्रकाशन ‘लर्निंग टू बी’ में प्रारंभिक रूप से अवधारणाबद्ध किया गया था।

आजीवन अधिगम की अवधारणा में अधिगम के सभी पहलुओं का समावेश होता है, उसमें प्रत्येक वस्तु अन्तर्विष्ट होती है और समष्टि उसके भागों के साकल्य की अपेक्षा अधिक बड़ी वस्तु होती हैं अधिगम का पृथक् स्थायी भाग जैसी कोई वस्तु नहीं है जो जीवनपर्यन्त न हो। दूसरे शब्दों में, जीवनपर्यन्त अधिगम कोई अधिगम-पद्धति नहीं है बल्कि ऐसा सिद्धान्त है जिस पर किसी पद्धति का समग्र संगठन आधारित होता है, तथा तदनुसार जिसे उसके प्रत्येक संघटक भाग के विकास का आधार होना चाहिए। आजीवन अधिगम के अन्तर्गत औपचारिक (Formal) सहज (Informal) गैर-औपचारिक/अनौपचारिक (Non-formal) प्रौढ़ शिक्षा आगे की शिक्षा को समझकर स्वयं को जीवनपर्यन्त सीखने वाला विद्यार्थी बना लेता है।

10.7 आजीवन सीखने का उद्देश्य

यद्यपि जीवन पर्यन्त अधिगम बहुउद्देश्यीय होती है और उसके उद्देश्यों को सीमित नहीं किया जा सकता तथापि इसके निम्नलिखित सामान्य उद्देश्यों को ध्यान में रखा जा सकता है-

1. नवयुवकों और वयस्कों के अधिगम स्तर को ऊँचा उठाना- जीवन पर्यन्त अधिगम का उद्देश्य नवयुवकों और व्यस्कों के अधिगम स्तर को ऊँचा उठाना है। जीवन पर्यन्त अधिगम द्वारा किसी भी व्यक्ति के अधिगम

स्तर को ऊँचा उठाया जा सकता हैं क्यों जो विषय वस्तु एक या दो बार पढ़ने या सीखने के बाद याद नहीं हो पाती उस विषय-वस्तु को बार-बार सीखने से वह याद हो जाती है अतः व्यक्ति हमें शा पढ़ने-लिखने की आदत डालना है।

2. आर्थिक संसाधनों को गतिशील बनाना- जीवन पर्यन्त अधिगम का उद्देश्य आर्थिक संसाधनों को गतिशील बनाना भी हैं राष्ट्र के विकास में आर्थिक संसाधनों में गतिशीलता आवश्यक है जीवन पर्यन्त अधिगम के माध्यम से व्यक्ति को शिक्षित किया जा सकता है, जो कि शिक्षित होकर ठीक प्रकार से संसाधनों का प्रयोग करेगा। नवयुवक या व्यवस्क अपना आर्थिक विकास करेगा तथा साथ ही साथ, समाज देश का भी आर्थिक विकास करेगा। राष्ट्र के आर्थिक विकास हेतु जीवन पर्यन्त अधिगम एक प्रभावी साधन है। यदि आर्थिक संसाधनों को गतिशील बनाया जाता है तो शिक्षित किसान अधिक अन्न उत्पादन कर सकता है तथा जो मजदूर शिक्षित होगा वह कल-कारखानों में उत्पादन क्षमता में वृद्धि निश्चित रूप से करेगा। ऐसी भावना को विकसित करना है।

3. स्थानीय संसाधनों के उपयोग और सामुदायिक सहभागिता को प्रोत्साहित करना- जीवन पर्यन्त अधिगम का उद्देश्य यह भी है कि यह स्थानीय संसाधनों के उपयोग और सामुदायिक सहभागिता को प्रोत्साहित करे। स्थानीय संसाधनों के उपयोग से व्यक्ति को अपने ही क्षेत्र में रोजगार प्राप्त होगा। नवयुवक आत्मनिर्भर भी होगा। इस प्रकार का विचार व्यक्ति के अन्दर पैदा करना है। जीवन पर्यन्त अधिगम द्वारा व्यस्क में अपने समुदाय के साथ कार्य करने की प्रेरणा भी मिलती है। जो कार्य अकेले नहीं कर पाता वह समूह के साथ जल्दी सीख जाता है। सामुदायिक सहभागिता को प्रोत्साहित करने के लिए श्रमदान, पास पड़ौस की सेवा, यातायात के नियम सीखना, विकलांगों को पढ़ाना, चलचित्र प्रदर्शन की व्यवस्था करना, रेडियो एवं दूरदर्शन का सामाजिक उपयोग करना आदि पर बल देना है।

4. व्यक्ति की कार्यक्षमता और कुशलता का विकास करना- जीवन पर्यन्त अधिगम के माध्यम से व्यक्ति की कार्यक्षमता एवं कुशलता को विकसित करना। निरन्तर अभ्यास से किसी भी योग्यता को प्राप्त किया जा सकता। व्यक्ति की कार्यक्षमता जब बढ़ती है तो उसमें कुशलता का विकास स्वतः ही हो जाता है। अधिगम एवं कार्यक्षमता एक दूसरे से संबंधित है। जिस प्रकार अधिगम एवं कार्यक्षमता एक दूसरे से सम्बन्धित है ठीक उसी प्रकार अधिगम एवं कुशलता का भी घनिष्ठ सम्बन्ध हैं कहने का तात्पर्य यह है कि जीवन पर्यन्त अधिगम द्वारा व्यक्ति में कार्य करने की क्षमता एवं कुशलता दोनों का विकास करना है।

5. जन चेतना का विकास करना- जीवन पर्यन्त अधिगम का उद्देश्य जन चेतना का विकास करना भी है। इसके द्वारा समाज में लोगों को जागृत करना है। अधिगम के द्वारा व्यक्ति ज्ञान प्राप्त करता है और ज्ञान प्राप्त करके

अपने अधिकारों के प्रति जागृत करने की भावना उत्पन्न करना है। अपने जीवन को सुचारू रूप से चलाने योग्य हो जाता है समाज के अन्य नवयुवकों एवं व्यस्कों को जागृत करता हैं व्यक्ति जितना ही ज्ञार्नाजन करेगा उसमें उतना ही अपने प्रति एवं समाज के प्रति चेतना का विकास होगा। अतः जन चेतना को विकसित करने का कार्य जीवन पर्यन्त अधिगम द्वारा ही सम्भव है। जीवन पर्यन्त अधिगम द्वारा वह सदैव दूसरों को कुछ देता है व उनसे कुछ लेता है, वह निरन्तर स्वाध्याय व पठन-पाठन सम्बन्धी क्रियाएं करता रहते है। प्रत्येक व्यक्ति को शिक्षासु समाज का अंग बनाये। ये व्यक्ति अपने पर्यावरण से सुपरिचित रहने का सदैव प्रयत्न करेंगे, देश की आवश्यकताओं का मूल्यांकन कर उसकी प्रगति में अपना योगदान करें तथा निरन्तर जागरूक रहें, ऐसी भावना को विकसित करना है।

6. व्यक्ति में समस्या समाधान के लिए चेतना उत्पन्न करना- जीवन पर्यन्त अधिगम का उद्देश्य व्यक्ति में ऐसी चेतना उत्पन्न करना है कि वह स्वयं किसी समस्या के समाधान के लिए जागृत हो इस अधिगम से व्यक्ति में सोचने समझने की शक्ति का विकास करना है। जीवन पर्यन्त अधिगम व्यक्ति को घरेलू समस्यों से निजात पाने के लिए भी तैयार करती है। हमारे पास कुछ ऐसी समस्याऐं होती जिसका समाधान कोर्ट द्वारा न करके स्वयं करना पड़ता है जिसके लिए हमें सुझ-बुझ, सामान्य ज्ञान तथा व्यवहारिक ज्ञान की आवश्यकता पड़ती है। अतः इस प्रकार के ज्ञान एवं सुझ-बुझ एवं, व्यवहारिक ज्ञान को विकसित करना है। घर-परिवार एवं समाज में रहकर भी हमें कुछ निर्णय स्वयं लेने पड़ते हैं। जिसके लिए हमें विशेष ज्ञान की आवश्यकता पड़ती है। इस प्रकार के समस्याओं के माध्यम हेतु हमें निरन्तर अधिगम की आवश्यकता है। व्यक्ति में ऐसी चेतना शक्ति पैदा करना है।

7. निर्णय लेने की योग्यता का विकसित करना- निर्णय लेने की योग्यता को विकसित करना भी जीवन पर्यन्त अधिगम के उद्देश्य हैं। व्यक्ति जीवन के प्रत्येक क्षेत्रों से जुड़ा होता है। कुछ निर्णय उसे स्वयं लेने पड़ते हैं चाहे वह बालक हो या नवयुवक हो या फिर व्यस्क ही क्यों न हो। परिवारिक समस्याओं में या फिर समाज में विभिन्न कार्य-क्षेत्रों में निर्णय लेने पड़ते है। यह सभी जीवन पर्यन्त अधिगम द्वारा ही सम्भव है। क्योंकि निरन्तर अधिगम से व्यक्ति में निर्णय लेने की योग्यता का विकास होता है। यह प्रायः देखा जाता है। कि व्यक्ति में आत्म विश्वास न होने के कारण किसी कार्य-क्षेत्र में निर्णय नहीं ले पाता, वह घबड़ा जाता है। निर्णय लेने की योग्यता के अभाव में वह किसी व्यवसाय का चुनाव भी सहीं रूप में नहीं कर पाता है। अतः जीवन पर्यन्त अधिगम का यह मुख्य उद्देश्य है कि वह व्यक्ति में निर्णय शक्ति की योग्यता का विकास करे ताकि वे स्वयं निर्णय लेने में समर्थ हों।

8. नेतृत्व के कौशलों को विकसित करना- व्यक्ति में नेतृत्व के कौशलों को विकसित करना भी जीवन पर्यन्त अधिगम का प्रमुख उद्देश्य है। आज के परिवेश में प्रत्येक जगह नेतृत्व की आवश्यकता है। बिना नेतृत्व का कोई भी कार्य सुचारू रूप से आगे नहीं बढ़ पाता है। अतः व्यक्ति में नेतृत्व की ऐसी योग्यता पैदा करना हैकि वह जहाँ भी हो चाहे वह घर हो, समाज हो या देश का ही नेतृत्व क्यों न करना है। सभी कौशलों का विकास करना इसका उद्देश्य है और यह विकास अधिगम के द्वारा ही सम्भव है ज्ञान एक ऐसा औजार है जिसके द्वारा किसी भी गुण या योग्यता को विकसित किया जा सकता है।

9. जीवन के मूल्यों का विकास करनाः जीवनपर्यन्त अधिगम द्वारा व्यक्ति के जीवन के मूल्यों को विकसित किया जा सकता है। व्यक्ति के लिए जीवन के मूल्यों का विकसित होना अति आवश्यक है। प्रत्येक व्यक्ति अपने जीवन को जीने के लिए एक कुछ मूल्यों को निर्धारित करता है उसके अनुसार अपने व्यक्तित्व का विकास करता है। परन्तु यह ध्यान देने की आवश्यकता है कि जो भी जीवन मूल्य व्यक्ति निर्धारित करे वह सार्थक एवं आदर्श हों। व्यक्ति के विकास में सामाजिक मूल्यों का विशेष महत्व है। चूंकि हम समाज में रहते है इसलिए हमें जीवन के सभी मूल्यों को विकसित करना आवश्यक है। इसमें हमारे नैतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक एवं आध्यात्मिक मूल्यों को विकसित करने पर जोर दिया गया है। इसमें विभिन्न विषयों को मूल्यपरक बनाकर उसके माध्यम से विभिन्न मूल्यों को छात्रों के व्यक्तित्व में समाहित करने पर देना है जिससे उनका संतुलित एवं सर्वतोन्मुखी विकास हो सके।

10. घरेलू शिक्षा और सामाजिक शिक्षा प्रदान करनाः जीवन पर्यन्त अधिगम का यह भी उद्देश्य है कि वह व्यक्तियों को घरेलू शिक्षा के साथ-साथ सामाजिक शिक्षा भी प्रदान करें क्योंकि व्यक्तित्व के विकास में दोनों का महत्वपूर्ण स्थान है। घरेलू शिक्षा ज्यादातर महिलाओं के लिए उपयोगी है जबकि सामाजिक शिक्षा पुरूष एवं महिला दोनों के लिए समान रूप से महत्व रखती है क्योंकि समाज के विकास में दोनों का महत्वपूर्ण योगदान माना जाता है। घरेलू शिक्षा के माध्यम से घर-परिवार में उत्पन्न विभिन्न प्रकार की समस्याओं को घर में ही सुलझाया जा सके ऐसी योग्यता पैदा करना है, जबकि सामाजिक शिक्षा द्वारा समाज में व्याप्त विभिन्न प्रकार की बुराईयों एवं समस्याओं को दूर करना हैं समाज में विभिन्न प्रकार की समस्याए उत्पन्न होती हैं क्योंकि व्यक्ति को सामाजिक ज्ञान नहीं हैं अतः व्यक्ति को सामाजिक ज्ञान देना। व्यक्ति अपने कार्य को करते समय सामाजिक आदर्श एवं मूल्यों को भूल जाता है इसे याद दिलाना तथा व्यक्ति में उत्पन्न स्वार्थपरता को महत्व न देना भी इसका उद्देश्य है। वह यह भूल जाता कि समाज के अन्य लोगो का में रे कार्य से कितना लाभ है और कितना हानि। घरेलू शिक्षा प्राप्त करने के बाद व्यक्ति घरेलू व्यवसाय को भी आसानी से समझकर चुन लेता है। अतः जीवन पर्यन्त अधिगम का उद्देश्य घरेलू शिक्षा एवं सामाजिक शिक्षा दोनों को एक आधार प्रदान करना है। आजीवन अधिगम से हमें घरेलू ज्ञान के साथ-साथ सामाजिक ज्ञान भी प्राप्त होता है। इसका

उद्देश्य व्यक्ति को सामाजिक बनाना एवं उसे सामाजिक नियमों, रितिरिवाजों तथा आदर्शो से परिचित कराना और उन्हीं के अनुसार कार्य करने की योग्यता का विकास करना है।

11. जनसंचार माध्यामों के उचित प्रयोग की जानकारी देना- जीवन पर्यन्त अधिगम द्वारा व्यक्ति जनसंचार माध्यमों का उचित प्रयोग करना सीख जाता है। इससे व्यक्ति को विभिन्न प्रकार की जानकारियां मिलती है। जनसंचार माध्यम व्यक्ति के ज्ञान को निरन्तर बढ़ाने का प्रयास करता है। प्रत्येक प्रकार के संचार माध्यमों से हमें ज्ञान प्राप्त होता है। सूचना सम्प्रेषण के क्षेत्र में महत्वपूर्ण विकास करने की आवश्यकता भी हैं शैक्षिक तकनीकी के क्षेत्र में भी नये आयाम स्थापित हुए है आवश्यकता इस बात की है कि हम साधनों का उचित प्रयोग करें। रेडियो, दूरदर्शन, कम्प्यूटर नेटवर्किंग आदि के उचित प्रयोग को पर बल देना है। यदि व्यक्ति इनके उचित प्रयोग को अधिगणित कर लेता है तो उसका व्यक्तित्व अधिकाधिक विकसित हो सकता है। इसके अन्तर्गत श्रव्य-दृश्य सामग्री का प्रयोग (Use of Audio-Visual Aids) चार्ट, चित्र, प्रदर्शन कार्ड, वास्तविक वस्तुए, स्लाइड, फिल्मस्ट्रिप, कठपुतली, टी0वी0 रेडियो टेप, समाचार पत्रों, पत्रिकाओ, आडियो टेप स्थानीय प्रचार माध्यमों आदि का उचित प्रयोग की जानकारी देना भी जीवन पर्यन्त अधिगम का मुख्य उद्देश्य है।

12. स्वस्थ मनोरंजन एवं सांस्कृतिक चेतना का विकास करना- जीवन पर्यन्त अधिगम का उद्देश्य स्वस्थ मनोरंजन को बढ़ावा देना है। इसमें स्वास्थ्य पर आधारित कार्यक्रमों को प्रदर्शित करके चेतना का विकास करना है। उन्हें स्वास्थ्य एवं सफाई के आधारभूत सिद्धान्तों से भी परिचित कराना, आजीवन अधिगम का उद्देश्य है। जीवन पर्यन्त अधिगम का उद्देश्य व्यक्ति या व्यस्क को इस योग्य बनाना है कि अपने अवकाश काल का सदुपयोग करके अपने मानसिक स्वास्थ्य को सुरक्षित एवं ठीक रख सके। इसका उद्देश्य स्वस्थ्य मनोरंजन के द्वारा मानसिक तनावों एवं संघर्षो को दूर करके व्यक्ति या नवयुवक के जीवन में अच्छे संस्कारों का विकास करना है। जबकि सांस्कृतिक चेतना के अन्तर्गत जीवन पर्यन्त अधिगम का उद्देश्य व्यस्कों में ज्ञान पिपासा को जागृत करना, आत्मविकास में अभिवृद्धि करना, जीवन के प्रति कलात्मक दृष्टि को उत्पन्न करना और जीवन दर्शन का निर्माण करना भी है।

13. स्वास्थ्य विज्ञान की सामान्य जानकारी देना- जीवन पर्यन्त अधिगम का उद्देश्य व्यक्तियों को स्वास्थ्य विज्ञान की जानकारी देना है। जिसमें स्वास्थ्य सम्बन्धी शिक्षा प्रदान करना एवं स्वास्थ्य से संबंधित विषयों एवं सिद्धान्तों की जानकारी देना है। मानसिक एवं शारीरिक स्वास्थ्य की रक्षा करना, रोगो की रोकथाम करना एवं रोगों का उपचार करना भी जीवन पर्यन्त अधिगम का मुख्य उद्देश्य है। इसके द्वारा व्यक्ति को अपनी मौलिक आवश्यकताओं (भोजन, वस्त्र, निवास) की पूर्ति के लिए कुशलता, दक्षता और योग्यता प्रदान करना

है। व्यक्ति को मूल - प्रवृत्तियो, संवेगो तथा अन्य जन्मजात शक्तियों पर नियंत्रण तथा संतुलन रखने की क्षमता प्रदान करना है। जीवन पर्यन्त अधिगम का उद्देश्य व्यक्ति का संतुलित एवं सर्वांगीण विकास करना है। इसका मुख्य उद्देश्य मात्र ज्ञान प्रदान करना ही नहीं है वरन् व्यक्ति को अपने जीवन स्तर को सुधारने तथा शारीरिक एवं मानसिक हित के लिए आवश्यक कार्य करने हेतु प्रशिक्षित करना है जिससे वह जीवन भर प्रसन्नचित रह सके।

14. क्रियात्मक साक्षरता का प्रसार करना- जीवन पर्यन्त अधिगम का उद्देश्य व्यक्ति में क्रियात्मक साक्षरता का प्रसार करना है जिसमें अक्षर ज्ञान एवं अंक ज्ञान देना, अपने वंचित होने के कारणों के प्रति जागरूकता और संगठन तथा विकास की प्रक्रिया में भागीदारी के जरिए इन कारणों का निदान करना, अपनी आर्थिक स्थिति को सुधारने और खुशहाल बनाने के लिए जरूरी हुनरों को सीखाना तथा राष्ट्रीय एकता, पर्यावरण संरक्षण, महिला पुरूष समानता और छोटे परिवार के आदर्शो का पालन करना है।

15. राष्ट्रीयता की भावना का विकास करना- जीवन पर्यन्त अधिगम का उद्देश्य व्यक्ति में राष्ट्रीयता की भावना का विकास करना है। इसके लिए सभी व्यक्तियों को देश के विभिन्न पहलुओं का ज्ञान कराया जाए। सभी नवयुवकों एवं व्यस्कों को स्वतन्त्रता प्राप्ति से सम्बन्धित बातों से विशेष रूप से परिचित कराया जाए तथा राष्ट्रीय एकता के विकास के लिए सभी जातियों, सम्प्रदायों और राष्ट्रों में अधिक में ल उत्पन्न करने वाली पढ़ाई-लिखाई को प्रोत्साहित करना है। शैक्षिक कार्यक्रमों के माध्यम से राष्ट्रीयता की भावना को विकसित करना भी जीवन पर्यन्त अधिगम का मुख्य उद्देश्य है। राष्ट्रीयता की भावना को प्रबल बनाने के लिए जीवन पर्यन्त अधिगम के अन्तर्गत फिल्मों, समाचारपत्रों और रेडियों का अधिक से अधिक प्रयोग पर बल दिया गया है। इसमें साम्प्रदायिक खतरों के बारे में लोगों को अधिगम के लिए जनसम्पर्क आन्दोलन आरम्भ हो तथा साम्प्रदायिक एकता से सम्बन्धित अध्ययन गोष्ठियों और नाटकों का आयोजन करना है।

10.8 आजीवन सीखने का महत्व

जैसे-जैसे विज्ञान एवं तकनीकी तथा व्यासायिक एवं निजी क्षेत्र विकसित होते जा रहे हैं, जिससे प्रतिस्पर्धा का संचार भी हो रहा हैं। नौकरियों के लिए प्रतिस्पर्धा कठिन हो सकती है, और हमेशा नए कौशल के साथ कार्यबल में नए चेहरे शामिल होते हैं। यदि व्यक्ति बदलते समय के साथ नहीं चल रहे हैं, तो निजी जीवन तथा समाज में सामंजस्य स्थापित करना एक चुनौती रहता है।

आजीवन सीखने से व्यक्ति अपने कौशल को निखार सकते हैं ताकि वह आने वाले वर्षों में अपने जीवन एवं कार्यस्थल के लिए एक परिसंपत्ति बन सकें। साथ ही, अपनी पेशेवर क्षमताओं को विकसित करके,

वह अपने करियर के प्रति अपनी प्रतिबद्धता प्रदर्शित कर सकते हैं। यह किसी भी नियोक्ता का विश्वास और सम्मान अर्जित करने में बहुत मददगार होगा। आजीवन शिक्षा की विशेषताओं को निम्नलिखित बिन्दुओं के द्वारा समझा जा सकता है :-

1. कैरियर में उन्नति - आजीवन सीखने का मतलब सिर्फ़ अपनी पुरानी व्यवस्था को बनाए रखना नहीं है। यह नई भूमिकाओं के लिए भी दरवाज़ा खोल सकता है - या यहाँ तक कि एक नया करियर भी। उदाहरण के लिए, अगर किसी को अपना वर्तमान व्यवसाय है में संतुष्टि नहीं है तो आप एक ऑनलाइन कोर्स करने पर विचार कर सकते हैं जो आपके पसंदीदा क्षेत्र में मूल्यवान प्रमाणन प्रदान करता है। कुछ मामलों में, यह स्कूल वापस जाने की आवश्यकता के बिना करियर परिवर्तन को संभव बना सकता है।

2. नई प्रेरणा का विकास- बहुत से लोग समय के साथ अपने करियर में रुचि खोते हुए पाते हैं। नौकरी एक रूटीन बन जाती है, जिसमें दिन-ब-दिन एक ही उबाऊ काम को बिना सोचे-समझे पूरा करना पड़ता है। जो पहले नया और रोमांचक हुआ करता था, वह पुराना हो जाता है। सौभाग्य से, आजीवन सीखने से आपके जुनून को फिर से जगाने में मदद मिल सकती है। नए कौशल विकसित करना शायद यह पता लगाने का रहस्य हो सकता है कि आपको अपने करियर की ओर पहली बार किस चीज़ ने आकर्षित किया था।

4. सॉफ्ट स्किल्स का विकास- वयस्क सतत शिक्षा सिर्फ़ आपको जो सिखाती है, उससे कहीं ज़्यादा उपयोगी है। नई चीज़ें सीखने की प्रक्रिया ही महत्वपूर्ण सॉफ्ट स्किल्स को मज़बूत करने में मदद करती है, जैसे:

- लक्ष्य की स्थापना
- आत्म अनुशासन
- रचनात्मकता
- महत्वपूर्ण सोच
- समय प्रबंधन
- समस्या को सुलझाना
- अनुकूलन क्षमता

इन चरित्र गुणों को मजबूत करने से आपके व्यक्तिगत और व्यावसायिक लक्ष्यों तक पहुंचने में अनिवार्य रूप से मदद मिलेगी।

5. शारीरिक एवं मानसिक विकास- अध्ययनों से पता चला है कि आजीवन सीखने से मस्तिष्क के स्वास्थ्य और कार्य को बेहतर बनाने में मदद मिलती है। सीखने के मानसिक लाभों में ये शामिल हो सकते हैं:

- बेहतर संज्ञानात्मक कार्य
- अधिक समय तक ध्यान देने की क्षमता
- मजबूत स्मृति
- बेहतर तर्क कौशल
- मनोभ्रंश का जोखिम कम हो जाता है

6. आत्मसुधार- आत्मविश्वास बढ़ाने के लिए आत्म-सुधार बहुत ज़रूरी है। नए कौशल हासिल करके, व्यक्ति अपनी क्षमता को उजागर कर सकते हैं और अपने आत्म-सम्मान को बढ़ा सकते हैं। और जैसे-जैसे वह अपने करियर को आगे बढ़ाने के लिए उन कौशलों का उपयोग करेंगे, आपका उद्देश्य और भी बढ़ेगा।

7. नेटवर्किंग के अवसर- वयस्क सतत शिक्षा के लिए कई विकल्पों में प्रशिक्षकों और साथी शिक्षार्थियों के साथ मिलकर काम करना शामिल है। यह व्यक्ति को समान विचारधारा वाले पेशेवरों से जुड़ने और अपने व्यक्तिगत नेटवर्क को बढ़ाने की अनुमति देता है। समय के साथ, यह व्यक्ति के करियर को अप्रत्याशित दिशाओं में ले जाने के लिए मूल्यवान अवसर पैदा कर सकता है। भले ही ऐसा न हो, अपने क्षेत्र में एक नया दोस्त बनाना कभी भी नुकसानदेह नहीं होता है।

8- समायोजन के गुणों का विकास- आजीवन सीखने वाला आजीवन सीखने में औपचारिक शिक्षा को निरंतर पेशेवर और व्यक्तिगत विकास के साथ जोड़ा जाता है। जैसे-जैसे तकनीक तेज़ी से आगे बढ़ रही है, आजीवन सीखने वालों को नए कौशल सीखने होंगे और पेशेवर और व्यक्तिगत वातावरण में तेज़ी से होने वाले बदलावों के अनुकूल होना होगा।

10.9 सतत शिक्षा का अर्थ

सतत शिक्षा का शाब्दिक अर्थ है - सदैव चलने वाली शिक्षा, जीवन भर चलने वाली शिक्षा इसलिए इसे जीवन पर्यन्त शिक्षा भी कहते हैं। मनुष्य अपने जीवन में जिन व्यक्तियों के सम्पर्क में आता है और जिन परिस्थितियों से होकर गुजरता है उनसे कुछ न कुछ सीखता रहता है। शिक्षा का क्षेत्र अति व्यापक होता है और सतत शिक्षा के क्षेत्र में निश्चित कार्यक्रम आते हैं और ये कार्यक्रम भिन्न भिन्न देशों की सतत

शिक्षा में भिन्न भिन्न है। सतत शिक्षा के द्वारा मनुष्य को निरंतर विस्तृत होती ज्ञान की दुनिया (Knowledge Society) के लिए आवश्यक नवीन विचारों व तकनीकी से लोगों को परिचित कराया जाता है। सतत शिक्षा व्यक्ति के जीवन में निरंतर चलती रहती है। आजीवन सीखने को "जीवन भर की जाने वाली सभी सीखने की गतिविधियों तथा उनसे प्राप्त अनुभवों के रूप में परिभाषित किया जाता है, जिसका उद्देश्य व्यक्तिगत, नागरिक, सामाजिक तथा रोजगार-संबंधी परिप्रेक्ष्य में ज्ञान, कौशल और क्षमताओं में सुधार करना है"। इसे अक्सर बचपन के औपचारिक शिक्षा के वर्षों के बाद और वयस्कता में होने वाली शिक्षा माना जाता है। यह जीवन के अनुभवों के माध्यम से स्वाभाविक रूप से खोजा जाता है क्योंकि शिक्षार्थी पेशेवर या व्यक्तिगत कारणों से ज्ञान प्राप्त करना चाहता है। ये प्राकृतिक अनुभव उद्देश्यपूर्ण या आकस्मिक रूप से आ सकते हैं। आजीवन सीखने को एक ऐसी प्रक्रिया के रूप में वर्णित किया गया है जिसमें लोग अलग-अलग संदर्भों में सीखते हैं। इन वातावरणों में न केवल स्कूल बल्कि घर, कार्यस्थल और ऐसे स्थान भी शामिल हैं जहाँ लोग अवकाश गतिविधियाँ करते हैं। हालाँकि, जहाँ सीखने की प्रक्रिया को सभी उम्र के शिक्षार्थियों पर लागू किया जा सकता है, वहीं वयस्कों पर ध्यान केंद्रित किया जाता है जो संगठित शिक्षा की ओर लौट रहे हैं। इसके ढाँचे पर आधारित कार्यक्रम हैं जो शिक्षार्थियों की विभिन्न आवश्यकताओं को संबोधित करते हैं, जैसे कि संयुक्त राष्ट्र का सतत विकास लक्ष्य - 4 और यूनेस्को इंस्टीट्यूट फॉर लाइफ़लॉन्ग लर्निंग, जो वंचित और शिक्षा की मुख्य धारा से वंचित शिक्षार्थियों की ज़रूरतों को पूरा करता है। आजीवन शिक्षा सतत शिक्षा की अवधारणा से इस मायने में अलग है कि इसका दायरा व्यापक है। बाद की शिक्षा के विपरीत, जो स्कूलों और उद्योगों की जरूरतों के लिए विकसित वयस्क शिक्षा की ओर उन्मुख है, इस प्रकार की शिक्षा आम तौर पर व्यक्तियों में मानवीय क्षमता के विकास से संबंधित है। आजीवन शिक्षा समग्र शिक्षा पर केंद्रित है और इसके दो आयाम हैं, अर्थात्, सीखने के लिए आजीवन और व्यापक विकल्प। ये सीखने को इंगित करते हैं जो पारंपरिक शिक्षा प्रस्तावों और आधुनिक सीखने के अवसरों को एकीकृत करता है। इसमें लोगों को यह सीखने के लिए प्रोत्साहित करने पर भी जोर दिया जाता है कि कैसे सीखना है और ऐसी सामग्री, प्रक्रिया और कार्यप्रणाली का चयन करना है। आजीवन शिक्षा ज्ञान और उसके अधिग्रहण की एक अलग अवधारणा पर आधारित है। इसे न केवल सूचना या तथ्यात्मक ज्ञान के असतत टुकड़ों के कब्जे के रूप में समझाया गया है, बल्कि नई घटनाओं को समझने की एक सामान्यीकृत योजना के रूप में भी बताया गया है, जिसमें उनसे प्रभावी ढंग से निपटने के लिए रणनीति का उपयोग भी शामिल है। विस्तार शिक्षा वह शिक्षा होती है जो कॉलेज और विश्वविद्यालय उन लोगों को प्रदान करते हैं जो छात्र के रूप में नामांकित नहीं हैं। व्यक्ति अपने करियर को आगे बढ़ाने, नए कौशल सीखने या अपने व्यक्तिगत विकास पर काम करने के लिए विस्तार पाठ्यक्रमों के माध्यम से शिक्षा प्राप्त करते है।

10.10 सतत शिक्षा के उद्देश्य

सतत शिक्षा का मूल उद्देश्य है व्यक्तियों को अपने कार्यक्षेत्र से सम्बन्धित अद्यतन ज्ञान एवं कौशल से परिचित कराना। उनकी कार्यक्षमता बढ़ाना और उनके जीवन स्तर को ऊँचा उठाना। शेष उद्देश्य भिन्न - भिन्न देशों में भिन्न भिन्न हैं वर्तमान में हमारे देश में सतत शिक्षा के निम्नलिखित उद्देश्य हैं:-

1. किसी कारण अपना कोई शैक्षिक पाठ्यक्रम पूरा न करने वालों को अपना यथा शैक्षिक पाठ्यक्रम पूरा करने में सहायता करना।

2. प्रौढ़ों के कार्यपरक साक्षरता की निरन्तरता बनाए रखना।

3. समाज के सभी वर्गों के व्यक्तियों को उनके अपने कार्यक्षेत्र से सम्बन्धित अद्यतन ज्ञान एवं कौशल की निरन्तर जानकारी देना, उनकी कार्यक्षमता बढ़ाना, उनका जीवन स्तर ऊँचा उठाना।

4. व्यक्तियों को नई चुनौतियों एवं राष्ट्रीय लक्ष्यों से परिचित कराना और उन्हें उनका मुकाबला करने के लिए तैयार करना।

5. सामाजिक, राजनैतिक और आर्थिक संस्थाओं की कार्यक्षमता बढ़ाना और राष्ट्र का निरन्तर विकास करना।

किसी भी देश में सतत शिक्षा का मूल उद्देय व्यक्तियों को अपने अपने कार्य क्षेत्र का निरन्तर अद्यतन ज्ञान एवं कौशल प्रदान कर उनकी कार्यक्षमता को विकसित करना होता है।

हमारे देश भारत में सतत शिक्षा का क्षेत्र कुछ विस्तृत है। वर्तमान में इसके क्षेत्र में अग्रलिखित कार्य आते हैं।

1. बच्चों को अपनी शिक्षा जारी रखने में सहायता प्रदान करना।

2. नव साक्षर प्रौढों के कार्यपरक साक्षरता को निरन्तर प्रदान करना।

3. विभिन्न क्षेत्रों में कार्यरत व्यक्तियों को उनके कार्यक्षेत्र से सम्बन्धित अद्यतन ज्ञान एवं कौशल प्रदान करना।

4. नागरिकों को राष्ट्रीय चुनौतियों एवं लक्ष्यों के प्रति जागरूक एवं क्रियाशील करना।

सामान्त तौर पर सतत शिक्षा पद्धति योजना को दो वर्गों के लिए बनाई गई है-

1. उन लोगों के लिए जो अन्य व्यक्तियों के साथ अंशकालिक शिक्षा में भाग लेते है। इस वर्ग के व्यक्ति विद्यालयों और महाविद्यालयों में अंशकालिक शिक्षा प्राप्त करके अपनी योग्यताओं में वृद्धि करते है।

2. उन व्यक्तियों के लिए जो केवल घर में ही अध्ययन कर सकते हैं। लेकिन अध्ययन के लिए आधिकारिक मान्यता प्राप्त करने के लिए उन्हें कुछ सहायता की आवश्यकता होती है।

सतत शिक्षा उन व्यक्तियों के लिए है जो विद्यालय छोड़ने से अधूरी रह गई शिक्षा को पूरी करना चाहते हैं।

संस्था में काम कर रहे व्यक्तियों को भी अपनी योग्यताओं में सुधार लाने के अवसरों की आवश्यकता होती है। कुछ ऐसे व्यक्ति भी होते हैं जो केवल आनन्द प्राप्त करने के लिए साहित्य, भाषा या किसी विशिष्ट विषय का अध्ययन करना चाहते हैं।

व्यक्तियों की विशेष उद्देश्यों को पूरा करके वयस्क शिक्षा प्रत्येक प्रकार के व्यक्ति को शिक्षा तक पहुँच प्रदान करती है।

इस प्रकार मुख्य रूप से तीन श्रेणियों के व्यक्तियों से सम्बन्धित सतत शिक्षा के निम्न लिखित उद्देश्य होते है:-

1. जिन्होने बिना पूरा किए शिक्षा को बीच में ही छोड़ दिया है।

2. नियुक्त व्यावसायिक।

3. सभी वयस्क व्यक्ति।

10.11 सतत शिक्षा का महत्व

सतत ऐसी शिक्षा को इंगित करती है, जो कभी रुकती नहीं, जैसे कि नव साक्षर की शैक्षिक यात्रा, प्रौढ़ साक्षरता से होती हुई उत्तर साक्षरता और आगे सतत शिक्षा तक चलती रहती है। जो लोग उच्च शिक्षा स्तर पर हैं, वे सतत रूप से निरंतर विभिन्न पाठ्यक्रमों में शिक्षा प्राप्त करते रहते हैं। यह ऐसी शिक्षा को भी इंगित करती है, जो एक बार समाप्त होकर फिर शुरू जाती है। लोग विभिन्न स्तरों पर पढ़ना-लिखना छोड़ देते हैं और आगे चलकर वापस अपनी शिक्षा को पुनः शुरू करना चाहते हैं। सतत शिक्षा ऐसी शिक्षा है, जिसकी पुनरावृत्ति होती रहती है। जैसे-जैसे विज्ञान और तकनीकी का विकास हो रहा है, यह आवश्यक होता जा रहा है, कि लोग विभिन्न नए-नए कौशलों को निरन्तर सीखते रहें, जैसे कि डाक्टर, नर्स, शिक्षक, कृषक आदि सभी सतत शिक्षा के अवसर ढूंढते रहते हैं। सतत शिक्षा के द्वारा विभिन्न वर्गों के जन समुदाय तथा व्यक्तियों को सामर्थ्य प्रदान करना, जिससे कि वे अपने बौद्धिक विकास, व्यावसायिक तथा तकनीकी योग्यता के बीच

की खाई (gap) को भर सकें। वे आवश्यक कौशलों और कार्यों के प्रति रूचि का विकास कर सकें, स्वरोजगार के अवसर प्राप्त कर सकें, विशेषज्ञतापरक क्षेत्रों में प्रशिक्षण प्राप्त कर, वर्तमान ज्ञान की दुनिया के साथ कदम मिला कर चल सकें।

यह शिक्षा सामान्य रुचि के पाठ्यक्रम उपलब्ध कराता है जिससे कि लोग वर्तमान विश्व की सामयिक समस्याओं के प्रति जागरूक होकर बेहतर और पूर्ण जीवन जी सकें। उपरोक्त अभिकरणों के अतिरिक्त इस कार्य में व्यापक स्तर पर कार्यरत अभिकरणों में विश्वविद्यालयों का स्थान सर्वोपरि है। विश्वविद्यालय सतत शिक्षा के अवसर प्रदान करने हेतु विभिन्न लक्ष्य समूहों या वर्गों के लिए लघु कालीन पाठ्यक्रम, पुनश्चर्या पाठ्यक्रम, वर्कशाप, सेमिनार तथा अधिवेशनों का आयोजन करते हैं। विश्वविद्यालय सतत शिक्षा के कार्यक्रमों का उद्देश्य विभिन्न वर्गों के विद्यार्थियों में उनकी विशेषज्ञता के क्षेत्र में ज्ञान तथा कौशल की अभिवृद्धि करना है। अप्रशिक्षित सेवारत विद्यार्थियों तथा अधिगमकर्ताओं की विशाल जनसंख्या को सतत शिक्षा प्रदान करने की चुनौती मुक्त व दूरस्थ अधिगम प्रणाली ने ग्रहण की है। विभिन्न विश्वविद्यालयों के प्रौढ़ व सतत शिक्षा विभाग तथा पत्राचार संस्थान सभी स्तरों पर सतत् शिक्षा कार्यक्रमों का संचालन कर रहे हैं। जो लोग और अधिक ऊंची शैक्षिक व व्यावसायिक योग्यताएं प्राप्त करना चाहते हैं उनके लिए सर्टिफिकेट, डिप्लोमा और डिग्री वाले पाठ्यक्रमों का संचालन सतत शिक्षा के माध्यम से किया जा सकता है। सतत शिक्षा के द्वारा विभिन्न कार्यक्रमों द्वारा प्राप्त अंतर्दृष्टि (insight) के सार्थक उपयोग द्वारा विभिन्न पाठ्यक्रमों का निर्माण किया जा सकता है।

यह जीवन पर्यन्त शिक्षा व सतत शिक्षा प्राप्त करने के लिए विभिन्न तरीकों की खोज करने में मनुष्य को सक्षम बनता है। सतत शिक्षा जीवन के प्रत्येक क्षेत्रों से जुड़े लोगों को सामर्थ्य प्रदान करना, जिससे कि वे अपने बौद्धिक नेतृत्व और उपलब्ध संसाधनों का लाभ समाज को पहुंचा सकें। विश्वविद्यालय व महाविद्यालय के शिक्षक व विद्यार्थियों को सामुदायिक आवश्यकताओं के प्रति जागरूक बनाया जा सके। अब धीरे-धीरे मुक्त व दूरस्थ अधिगम प्रणाली ने सतत शिक्षा कार्यक्रमों का संचालन ‘इंटरनेट’ (Internet) के माध्यम से करना शुरू किया है।

अपनी उन्नति जानिए

भाग -2

सत्य असत्य का चयन कीजिये

प्र.-1 सतत ऐसी शिक्षा को इंगित करती है, जो कभी रुकती नहीं है।

प्र.-2 आजीवन सीखने को "जीवन भर की जाने वाली सभी सीखने की गतिविधियों तथा उनसे प्राप्त अनुभवों के रूप में परिभाषित किया जाता है।

प्र.-3 व्यक्ति की कार्यक्षमता और कुशलता का विकास करना आजीवन सीखने का उद्देश्य नहीं है।

10.12 सारांश

इस अध्याय में आपने प्रौढ़ शिक्षा का अर्थ, प्रकृति, उद्देश्य और इसके महत्व, आजीवन शिक्षा का अर्थ, प्रकृति, उद्देश्य और इसके महत्व तथा सतत शिक्षा का अर्थ, प्रकृति, उद्देश्य और इसके महत्व के बारे में अध्ययन किया| प्रौढ़ शिक्षा जैसा कि नाम से ही ज्ञात होता है, यह वह शिक्षा है जो वयस्कों को दी जाती है। इसके बारे में यह धारणा प्रचलित है कि यह निरक्षर लोगों को साक्षर बनाती है। पढ़ना, लिखना तथा गिनने का ज्ञान कराना इसका मुख्य कार्य है। समयानुसार इसकी इस धारणा में भी परिवर्तन होने लगा। इसको अब व्यापक रूप में देखा जाने लगा है। प्रौढ़ शिक्षा का उद्देश्य केवल व्यस्कों को साक्षर बनाना मात्र नहीं है। अपितु उसके अन्तर्गत वह सभी प्रकार की शिक्षा आती है जो प्रत्येक नागरिक को जनतान्त्रिक व्यवस्था का विवेकपूर्ण सदस्य बनाती है|- सतत ऐसी शिक्षा को इंगित करती है, जो कभी रुकती नहीं, जैसे कि नव साक्षर की शैक्षिक यात्रा, प्रौढ़ साक्षरता से होती हुई उत्तर साक्षरता और आगे सतत शिक्षा तक चलती रहती है। आजीवन सीखना मनुष्य के जीवन में स्वयं द्वारा शुरू की गई शिक्षा का एक पहल है जो व्यक्तिगत विकास पर केंद्रित है। हालाँकि आजीवन शिक्षा की कोई मानकीकृत परिभाषा नहीं है, लेकिन आमतौर पर इसे औपचारिक शैक्षणिक संस्थान, जैसे कि स्कूल, विश्वविद्यालय या कॉर्पोरेट प्रशिक्षण के बाहर होने वाली शिक्षा के संदर्भ में लिया जाता है।

प्रौढ़ शिक्षा का महत्व राष्ट्र की शिक्षा प्रणाली में अत्यधिक है आज की बदलती हुई परिस्थितियों में सम्पूर्ण जीवन को जीने के लिए सीखने की क्रिया अनवरत रूप से बनी रहनी चाहिए। आजकल इस बात को स्वीकार किया जाने लगा है कि आधुनिक शिक्षा प्रणाली पूरे समय के लिए विस्तृत शिक्षा प्रदान नहीं कर सकती। इस प्रणाली में विद्यालय से अलग हुए प्रौढ़ों को पूरे समय, अंशकालीन सेवाकालीन पाठ्यक्रमों का आयोजन किया जाता है। इस दृष्टि से भी प्रौढ़ शिक्षा का महत्व अधिक है।

11.13 शब्दावली

प्रौढ़ शिक्षा- प्रौढ़ शिक्षा जैसा कि नाम से ही ज्ञात होता है, यह वह शिक्षा है जो वयस्कों को दी जाती है। इसके बारे में यह धारणा प्रचलित है कि यह निरक्षर लोगों को साक्षर बनाती है। पढ़ना, लिखना तथा गिनने का ज्ञान कराना इसका मुख्य कार्य है।

समाज शिक्षा- नागरिक शिक्षा, आर्थिक सुधार, स्वास्थ्य, भावात्मक एकता एवं सौन्दर्य बोध को समावेशित करने वाली शिक्षा।

सतत शिक्षा- सतत ऐसी शिक्षा को इंगित करती है, जो कभी रुकती नहीं, जैसे कि नव साक्षर की शैक्षिक यात्रा, प्रौढ़ साक्षरता से होती हुई उत्तर साक्षरता और आगे सतत शिक्षा तक चलती रहती है।

आजीवन सीखना- मनुष्य के जीवन में स्वयं द्वारा शुरू की गई शिक्षा का एक पहल है जो व्यक्तिगत विकास पर केंद्रित है। हालाँकि आजीवन शिक्षा की कोई मानकीकृत परिभाषा नहीं है, लेकिन आमतौर पर इसे औपचारिक शैक्षणिक संस्थान, जैसे कि स्कूल, विश्वविद्यालय या कॉर्पोरेट प्रशिक्षण के बाहर होने वाली शिक्षा के संदर्भ में लिया जाता है।

10.14 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

भाग -1

1. यह वह शिक्षा है जो वयस्कों को दी जाती है।

2. सत्य

3. सत्य

भाग -2

1. सत्य

2. सत्य

3. असत्य

11.15 संदर्भ ग्रंथ सूची

1. गुप्ता, डॉ0 एस0पी0 और डॉ0, अलका (2012) ‘‘भारत में शिक्षा प्रणाली का विकास’’ शारदापुस्तक भवन इलाहाबाद।

2. गुप्ता, एस0पी0 एवं गुप्ता, अलका (2010) ''भारतीय शिक्षा का इतिहास, विकास एवं समस्याएं'', शारदा पुस्तक भवन इलाहाबाद।

3. त्यागी एवं पाठक (2005) ''भारतीय शिक्षा की समसामयिक समस्याएँ'' विनोद पुस्तक मन्दिर आगरा।

4. त्यागी दास गुलसरन (2005) ''भारत में शिक्षा का विकास'' विनोद पुस्तक मन्दिर आगरा।

5. नारायण, लक्ष्मी एवं अन्य (2010) ''उदीयमान भारतीय समाज में शिक्षक'' न्यू कैलाश प्रकाशन इलाहाबाद।

6. पाण्डेय, रामशकल और मिश्र, डॉ0 करूणा शंकर (2005) ''भारतीय शिक्षा की समसामयिक समस्याए'' विनोद पुस्तक मन्दिर आगरा - 2।

7. पाण्डेय, डॉ0 रामशकल (2005) ''उदीयमान भारतीय समाज में शिक्षक'' विनोद पुस्तक मन्दिर आगरा - 2।

8. पचौरी, डॉ0 गिरीश (2009) ''उदीयमान भारतीय समाज में शिक्षक'' लायल बुक डिपों में रठ (इण्टरनेशनल पब्लिशिंग हाउस मेरठ)।

9. पुष्प, डा0 गीता एण्ड जायस, डॉ0, शीला (2005) ''प्रसार शिक्षा'' विनोद पुस्तक मन्दिर आगरा।

10. भटनागर, सुरेश (2001) ''भारत में शिक्षा का विकास'' आर0लाल0 बुक डिपो में रठ।

11. भटनागर, सुरेश (2001) ''आधुनिक भारतीय शिक्षा और उसकी समस्याएं'' आर0लाल बुक डिपो में रठ।

12. सिंह, यू0के0 और नायक, ए0के0 (2005) ''लाइफ लांग एजुकेशन'' कामनवेल्थ पब्लिसर्स दिल्ली।

13. शुक्ला, डॉ0 सी0एस0 (2012) ''उदीयमान भारतीय समाज में शिक्षक'' इण्टरनेशनल पब्लिशिंग हाउस, में रठ।

11.16 निबंधात्मक प्रश्न

1. प्रौढ़ शिक्षा से आप क्या समझते हैं? इसके उद्देश्यों की व्याख्या कीजिए।
2. आजीवन शिक्षा का वर्णन कीजिए।

3. सतत शिक्षा के उद्देश्यों का वर्णन कीजिए।

4. प्रौढ़ शिक्षा के महत्व की व्याख्या कीजिए।

Unit 11- वयस्क शिक्षा, जीवन भर सीखना, सतत शिक्षा के मुद्दे एवं चुनौतियाँ (Issues and Problems of Adult education, lifelong learning, continuing Education.)

11.1 प्रस्तावना

11.2 उद्देश्य

11.3 वयस्क शिक्षा की अवधारणा

11.4 वयस्क शिक्षा तकी मान्यताएं

11.5 वयस्क शिक्षा के उद्देश्य

11.6 वयस्क शिक्षा की चुनौतियाँ

11.7 जीवन पर्यन्त शिक्षा

11.8 सतत शिक्षा

11.9 सारांश

11.10 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

11.11 दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

11.12 संदर्भ सूची

11.1 प्रस्तावना (Introduction)

वयस्क मस्तिष्क एक बच्चे के विकासशील मस्तिष्क की तुलना में भिन्न प्रकार से कार्य करता है। वयस्क व्यक्तियों के जीवन में घर ,परिवार, पास -पड़ोस ,माता -पिता, सगे -संबंधी आदि का प्रभाव पड़ता है। व्यावहारिक एवं वैवाहिक जिम्मेदारियों का निर्वहन, बच्चों के जन्म एवं देखभाल, शारीरिक एवं मानसिक स्वास्थ्य, कार्यस्थल पर सहकर्मियों के साथ संबंध, व्यावसायिक प्रगति, राजनैतिक, सामाजिक एवं आर्थिक दशायें वयस्क व्यक्ति को प्रभावित करती है। वयस्क व्यक्ति समायोजनात्मक एवं संवेगिक (emotional) मुद्दों के अतिरिक्त खाली समय को भली प्रकार उपयोग करने के लिए चिंतित रहता है। व्यक्ति

अपने जीवन को पूर्ण रूप से जीना चाहता है और यह अनुभूति पाना चाहता है कि वह अपने जीवन को पूरी तरह जी रहा है। इस दिशा में व्यक्ति को निरंतर प्रयत्न करना पड़ता है और अनेक निर्णय लेने पड़ते है। सामान्यतः वयस्क अपनी व्यावसायिक उन्नति एवं विकास के लिए शिक्षा प्राप्त करना चाहते है। वयस्कों को पढ़ाने के तरीके भिन्न होते है ये एंड्रॉगोजी (Andragogy) के अंतर्गत आते है। कई मुद्दों में वयस्क स्वतंत्र तरीके से अपनी शिक्षा प्राप्त करने का प्रयास करते है। वे आजीविका अर्जित करने एवं विभिन्न जिम्मेंदारियों के निर्वहन में संलग्न रहते है। वयस्क शिक्षार्थी स्व -प्रेरित होता है वह जीवनोपयोगी शिक्षा प्राप्त करना चाहता है। वयस्क शिक्षा व्यक्ति की कार्यक्षमता में बृद्धि तथा व्यक्तित्व का विकास करने में सहायक होती है।

11.2 उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप:- ;

- वयस्क शिक्षा की अवधारणा स्पष्ट कर सकेंगे।
- वयस्क शिक्षा एवं जीवन पर्यंत शिक्षा के बीच संबंध को समझ सकें।
- वयस्क शिक्षा, जीवनपर्यंत शिक्षा, सतत शिक्षा में अंतर स्पष्ट कर सकेंगे।
- वयस्क शिक्षा, जीवनपर्यंत शिक्षा, सतत शिक्षा से सम्बंधित मुद्दों को वर्गीकृत कर सकेंगे।
- वयस्क शिक्षा, जीवनपर्यंत शिक्षा, सतत शिक्षा के मुद्दों एवं समस्याओं समझ सकेंगे।

11.3 वयस्क शिक्षा की अवधारणा (Concept of adult education)

वयस्क शिक्षा को वयस्कों के लिए एक ज्ञान एवं कौशल के विकास में सहायक शैक्षिक प्रक्रिया के रूप में समझा जा सकता है। प्रौढ़ शिक्षा प्रक्रिया व्यक्तिगत एवं सामाजिक रूप से उपलब्धि की दिशा में कार्य करती है। वयस्कों की शिक्षा गतिविधियों का उद्देश्य विशेष रूप से स्वतंत्र और महत्वपूर्ण निर्णय लेने की क्षमता विकसित करना तथा समाज में रहने और काम करने की स्थिति को प्रभावित करने वाले परिवर्तनों से निपटने के लिए प्रत्येक व्यक्ति की आवश्यक क्षमताओं को प्रोत्साहन या बढ़ावा देना है। एक वयस्क व्यक्ति की आवश्यक कार्यक्षमतायें निम्नलिखित है:-

- जांच करना
- विचार करना.

- रिपोर्ट तैयार करना
- निश्चय करना
- जानकारी प्राप्त करना
- जानकारी को व्यवस्थित करना
- योजना बनाना
- प्रश्न पूछना
- अध्ययन करना

वयस्क शिक्षा उन संगठित शैक्षिक प्रक्रियाओं को दर्शाती है जो ज्ञान एवं कौशल के विकास का प्रतिनिधित्व करती है। सामाजिक न्याय को प्राप्त करने हेतु समसामयिक समस्याओं के प्रति समालोचनात्मक समझ विकसित करना तथा सामाजिक परिवर्तनों स्वीकारते हुए समाज की प्रगति में सक्रिय भूमिका के निर्वहन की क्षमता का विकास करना ही वयस्क शिक्षा है। व्यक्तिगत या सामूहिक रूप से नये ज्ञान के विकास की अभिरुचि विकसित करना संगठित अध्ययन हेतु शैक्षिक प्रतिष्ठानो में व्यक्तित्व के विकास हेतु नये ज्ञान, योग्यता, अभिवृति का अर्जन करना है। वयस्क शिक्षा अपने ज्ञान, कौशल को विकसित करने के लशैक्षिक प्रक्रियाओं का संगठित रूप है। वयस्क शिक्षा का उद्देश्य व्यक्तियों में समकालीन समस्याओं और सामाजिक परिवर्तनों के प्रति समझ विकसित करना और सामाजिक न्याय प्राप्त करने की दृष्टि से समाज की प्रगति में सक्रिय भूमिका निभाने की क्षमता विकसित करना है। वयस्क शिक्षा व्यक्तिगत रूप से, समूहों में या शैक्षिक प्रतिष्ठानों में संगठित अध्ययन के संदर्भ में विशेष रूप से नये ज्ञान, योग्यता, दृष्टिकोण या व्यक्तित्व के पूर्ण विकास के लिए अनुकूल व्यवहार रूपों के उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए एक योग्यता विकसित करना है। युवा लोगों की शिक्षा जीवनभर सीखने की ओर उन्मुख होनी आवश्यक है। प्रौढ़ शिक्षा के लिये महत्वपूर्ण है कि बौद्धिक जिज्ञासा को बनाए रखने और प्रेरित करने के उद्देश्य से स्कूली शिक्षा प्रणाली में संशोधन और पाठ्यक्रम का परिमार्जन महत्वपूर्ण है। और ज्ञान प्राप्ति के लिये स्व-शिक्षण पैटर्न के विकास पर अधिक जोर दिया जाना उपयोगी होगा। वयस्क शिक्षा के आवश्यक तत्व हैं –

- आलोचनात्मक दृष्टिकोण,
- चिंतनशील दृष्टिकोण

- रचनात्मक क्षमताएं का विकास

वयस्क शिक्षा कई मायनों में बच्चों की शिक्षा से भिन्न होती है। महत्वपूर्ण अंतर यह है की वयस्कों के पास विभिन्न प्रकार का ज्ञान एवं अनुभव का विशाल भंडार होता है जबकि बच्चे अनुभव अर्जित कर रहे होते है। यह ज्ञान एवं अनुभव उन्हें व्यावहारिक अनुप्रयोग एवं उपयोग को अधिक महत्व देने वाली शिक्षा व्यवस्था की तलाश में सहायक होता है। उनके लिए शिक्षण पाठ्यक्रम नये ज्ञान के साथ -साथ नये कौशलों को सीखने में सहायक होना आवश्यक है।

11.4 वयस्क शिक्षा की मान्यताएं (Assumptions of adult education)

1. प्रत्येक व्यक्ति की अपनी स्वयं के बारे में कुछ अवधारणा या विचार होते है जिसे आत्मवधारणा कहते है। यह आत्मवधारण व्यक्ति को स्वतंत्र एवं आत्म निर्देशित होने के लिए प्रेरित करती है। वयस्कों के शैक्षिक कार्यक्रम उनकी परिवर्तन की पाने की इच्छा का पोषण करने में सहायक होने आवश्यक है। परिपक्व और भावनात्मक रूप से संतुलित वयस्कों में सामान्यतया स्वनिर्देशन में काम करने एवं आगे बढ़ने की प्रवृति होती है। कुछ लोगों में निर्भरता की प्रवृति भी पाई जाती है।
2. बृद्धि एवं परिपक्कता के दौरान व्यक्ति बृहद जीवन अनुभवों को संचित करता है जो वयस्कों की शिक्षा के लिए एक संभावित संसाधन के रूप में कार्य करते है। ऐसे संसाधन जो अधिक स्पष्ट, संचारी और मुखर हों वयस्क शिक्षार्थियों के लिये लाभकारी होते है।
3. वयस्क शिक्षार्थी की सीखने की इच्छा तब ज्यादा मजबूत होती है जब सीखने की प्रक्रिया जीवन की वास्तविक समस्याओं तथा व्यक्तिगत विकास से संबंधित होती है।

वयस्कों के अभिलक्षण

वयस्क वह व्यक्ति है जो ;

- निश्चित आयु का है (कानूनी या अन्य आधार पर)।
- वह शारीरिक, मानसिक ,भावनात्मक, बौद्धिक एवं नैतिक रूप से परिपक्व है।
- वह समझदार है तथा उसमें तर्कसंगत एवं जिम्मेदारी से कार्य करने की क्षमता है वह अपने एवं दूसरों के अधिकारों एवं सीमाओं को समझता है।

- वह आत्म नियंत्रण (self-control) एंव स्वयं को रोकने का अभ्यास कर सकता है।
- वह बड़े सार्वजनिक उद्देश्यों के लिए आंशिक या पूर्ण व्यक्तिगत त्याग कर सकता है।
- वह अपने कार्यों को चुनते समय केवल लाभ एवं खुशी के बजाय नुकसान, खतरे एवं दुख को भी ध्यान में रखता है।
- वह अपने कार्यों की जिम्मेदारी लेता है।
- वयस्क अपनी ताकत एवं कमजोरियों को पहचानता है ।
- वह दयालुता, करूणा, तर्क एवं दीर्घकालिता के साथ कार्य एवं प्रतिक्रिया करता है ।

विकासशील देशों में निरक्षरता एक बड़ी समस्या है वहाँ वयस्क शिक्षा का अर्थ केवक वयस्क साक्षरता के रूप में लिया जाता है और यह पढ़ने, लिखने, एवं अंकगणितीय कौशलों को संदर्भित करता है । वस्तुतः वयस्क शिक्षा में साक्षरता के अलावा कार्यक्षमता एवं जागरूकता विकास शामिल है। वयस्क शिक्षा में औपचारिक शिक्षा प्रणाली (स्कूल, कालेज, विश्वविद्यालय) के साथ ही गैर औपचारिक शिक्षा प्रणाली दोनों ही शामिल है । वयस्क शिक्षा का दायरा बहुत व्यापक है। अलग-अलग देशों में वयस्क शिक्षा के लिए भिन्न शब्दों का प्रयोग किया जाता है । जैसे :–

- यूनाइटेड किंगडम में वयस्कों के लिए उदार शिक्षा।
- संयुक्त राज्य अमेरिका में वयस्कों की शिक्षा चाहे वह व्यावसायिक हो या अन्य।
- भारत में सामान्यतया साक्षरता शिक्षा के नाम से भी जाना जाता है । इसे सामुदायिक शिक्षा, वयस्क साक्षरता ,श्रमिकों की शिक्षा आदि नाम भी दिए गए है ।

प्रौढ़ शिक्षा की अंतर्राष्ट्रीय निर्देशिका के अनुसार वयस्क शिक्षा वह है जो सामाजिक, राजनैतिक, आर्थिक, भौगोलिक एवं सांस्कृतिक रूप से बहुत निकटता से जुड़ी हो। यूनेस्को (1976) के अनुसार, संगठित शैक्षिक प्रक्रियाओं का सम्पूर्ण निकाय चाहे सामग्री, स्तर और पद्दति औपचारिक या अनौपचारिक हो जिसमें उन व्यक्तियों को शामिल किया जाता है जिन्हें समाज द्वारा वयस्क माना जाता है। तथा उन वयस्क शिक्षार्थियों को क्षमताओं के विकास, ज्ञान के संवर्धन, दृष्टिकोण में सुधार, पूर्ण व्यक्तिगत विकास के अवसर उपलब्ध होना आवश्यक है। वयस्क शिक्षा में संतुलित एवं स्वतंत्र सामाजिक, आर्थिक एवं

सांस्कृतिक भागीदारी एवं विकास को विशेष स्थान दिया जाता है। यह शिक्षा वयस्कों के दोहरे विकास में सहायक होती है -

- पूर्ण व्यक्तिगत विकास
- विकास प्रक्रिया में भागीदारी

वयस्क शिक्षा विकासोन्मुख प्रक्रिया है।

अपनी प्रगति जानिये -

1, वयस्क शिक्षा को परिभाषित कीजिये?

2. वयस्कों के अभिलक्षण लिखिए?

रेड्डी (2000), के अनुसार वयस्क शिक्षा वह अंशकालिक या पूर्णकालिक शिक्षा है जो सभी उम्र के पुरुषों और महिलाओं स्वयं द्वारा, शिक्षण संस्थानों द्वारा, शिक्षण केंद्र द्वारा या अन्य एजेंसियों द्वारा उनके सामान्य व्यवहार, व्यावसायिक ज्ञान, कौशल एवं योग्यताओ के संवर्धन का अवसर प्रदान करती है।

11.5 वयस्क शिक्षा के उद्देश्य (Objectives of adult education)

- वयस्क शिक्षा का लक्ष्य किसी व्यक्ति के जीवन की गुणवत्ता में बृद्धि करना उसे उसकी क्षमताओं का अहसास कराना है।
- परिवारों के जीवन स्तर के साथ ही समुदाय ,समाज ,एवं राष्ट्र स्तर पर सुधार करना,
- बहु सांस्कृतिक समाज में शांति एवं सदभाव तथा राष्ट्रीय एवं अंतर राष्ट्रीय स्तर पर विकास एवं जनकल्याण को बढ़ावा देना है। वयस्क शिक्षा में, समुदाय, समाज और राष्ट्र के प्रति जागरूकता फैलाना इसके आवश्यक तत्व है। जिसमें मुख्य रूप से सामाजिक (social), आर्थिक (economic), राजनैतिक (political), सांस्कृतिक (cultural), पर्यावरणीय (environmental), विकासात्मक, स्वास्थ्य एवं स्वच्छता संबंधी विषय शामिल है। इसमें मुख्य रूप से :-
- बुनियादी साक्षरता

- वेज्ञानिक साक्षरता
- आर्थिक साक्षरता
- तकनीकी साक्षरता
- कानूनी साक्षरता
- कंप्यूटर साक्षरता

वयस्क शिक्षा के सिद्धांत

1. **स्वनिर्देशन का सिद्धांत** -वयस्क शिक्षार्थी अपने अनुभवों को सीखने कुछ नया सीखने में उपयोग में लाना पसंद करते है। वयस्क शिक्षा में स्वनिर्देशन का सिद्धांत उपयोगी होता है।
2. **करके सीखना (Learning by doing)**-वयस्क सीखने की प्रक्रिया में सक्रिय रूप से भाग लेना तथा संबंधित कार्य पसंद करते है।
3. **प्रासंगिकता** -वयस्क ऐसी शिक्षा प्राप्त करना चाहते है जिनका उनके जीवन से सीधा संबंध होता है। जैसे वयस्क वह कोर्स करना चाहते जो उनकी पदोन्नति में सहायक हो तथा उनकी धनोपार्जन क्षमता में बृद्धि करे।
4. **अनुभव का उपयोग** -इंटर्नशिप, प्रोजेक्ट एवं अन्य अनुभवात्मक अवसर वयस्क शिक्षा के लिए महत्वपूर्ण है।
5. **इंद्रिय जन्य ज्ञान के अवसर** -वयस्क शिक्षार्थियों के लिए सीखने की प्रक्रिया में श्रव्य दृश्य सामग्री, क्रियात्मक, प्रायोगिक शिक्षण होना आवश्यक है।
6. **लक्ष्य निर्धारण** -वयस्क शिक्षार्थी लक्ष्य निर्धारण कर उन्हें प्राप्त करने के लिए शिक्षा ग्रहण करते है। अतः वयस्क शिक्षा शिक्षार्थियों को लक्ष्य प्राप्त करने में सहायक होनी चाहिए।
7. **सीखने का अलग तरीका** -बच्चों एवं वयस्कों के सीखने के तरीके भिन्न होते है। वयस्क शिक्षार्थी सीखते समय अपने जीवन के अनुभवों और विषय के प्रति अपनी समझ का उपयोग करते है।

A centrally sponsored scheme ‘Saakshar Bharat’ was implemented during

2009-10 to 2017-18 to raise literacy rate to 80%, reduce gender gap to 10% and minimize regional and social disparities, with focus on Women, SCs, STs, Minorities and other disadvantaged groups. All those districts that had female literacy rate below 50% as per census 2001 including Left Wing Extremism affected districts, irrespective of their literacy level, were covered under the scheme. The principal target was to impart functional literacy to 70 million non-literates including 60 million women. The scheme covered 404 districts in 26 States and 1 Union Territory covering about 1.64 lakh Gram Panchayats.

(Source- https://dsel.education.gov.in/adult_education)

राष्ट्रीय शिक्षा नीति-2020 के अनुसार प्रौढ़ शिक्षा के पांच घटकों है:-

- मूलभूत साक्षरता और संख्यात्मकता (foundational literacy & numeracy)
- महत्वपूर्ण जीवन कौशल (वित्तीय साक्षरता, डिजिटल साक्षरता, वाणिज्यिक कौशल, स्वास्थ्य देखभाल और जागरूकता, बाल देखभाल और शिक्षा, और परिवार कल्याण सहित);
- स्थानीय रोजगार प्राप्त करने की दृष्टि से व्यावसायिक कौशल विकास
- बुनियादी शिक्षा (foundational literacy)
- सतत शिक्षा (continuous education)

ULLAS is a new centrally sponsored scheme on Education for All (erstwhile known as Adult Education), "ULLAS", has been approved by the Government of India with a financial outlay of Rs.1037.90 crore for implementation during FYs 2022-23 to 2026-27, in alignment with the recommendations of National Education Policy (NEP) 2020. The scheme is targeted at all non-literates of age 15 years and above. The scheme is to be implemented through volunteerism. The learners will be encouraged to access the content in local languages in online mode through DIKSHA platform in NCERT. Government/Aided schools registered under UDISE are the units of implementation of

the scheme which are run by the State/UT Governments..

(Source- https://dsel.education.gov.in/adult_education

11.6 वयस्क शिक्षा की चुनौतियाँ (Challenges in adult education)

वयस्क व्यक्ति को नये कौशल एवं विषयों का अध्ययन के दौरान अनेक प्रकार की चुनौतियों का सामना करना पड़ता है

- **समय की कमी** -उयस्क व्यक्ति अधिकांशतः नौकरी एवं विभिन्न व्यवसायों में कार्यरत होते है । और उनका परिवार एवं बच्चे उन पर निर्भर होते है। उनका समय परिवार एवं बच्चों के लिए भी आवश्यक होता है। अतः शिक्षा प्राप्त करने के लिए समय प्रबंधन कठिन को जाता है।
- **संसाधनों का अभाव** –शिक्षा प्राप्त करने के लिए भौतिक एवं अभौतिक संसाधनों की आवश्यकता होती है। वयस्क व्यक्ति को विभिन्न जिम्मेदारियों का निर्वहन करना पड़ता है तथा उनके उपलब्ध संसाधन वितरित होने के कारण वयस्कों के पास सामान्यतः संसाधनों का अभाव पाया जाता है।
- **मस्तिष्क नमनीयता (Brian Plasticity)**- मानव मस्तिष्क का महत्वपूर्ण गुण उसकी नमनीयता है जो व्यक्ति को सीखने एवं विकास में सहायता करती है। युवा मस्तिष्क ज्यादा नम्य होने के कारण उनके लिए बदलाव आसान होते है। उम्र बढ़ने के साथ साथ मस्तिष्क की नम्यता कम होने लगती है। वयस्क व्यक्ति को नयी अवधारणाओ को अपनाने, नया सीखने में अतिरिक्त प्रयास करने की आवश्यकता पड़ती है।
- **आत्म संशय** -अधिक उम्र एवं पूर्व शिक्षा प्राप्त किये वर्षों के बड़े अंतराल के कारण वयस्क खुद की योग्यताओ एवं क्षमताओं के बारे में आशंकित रहते है। जो उनके शिक्षा प्राप्तों करने के लक्ष्यों को प्रभावित करती है।
- **प्रासंगिकता** -वयस्क शिक्षार्थी के पास जीवन के विभिन्न वास्तविक अनुभव होते है। उनके द्वारा सीखे जाने वाले पाठ्यक्रमों में जीवन के वास्तविक अनुभवों का विशेष महत्व है। वर्तमान परिपेक्ष्य में प्रासंगिक कौशल उनके लिए उपयोगी है। प्रासंगिक प्रकरणों पर आधारित पाठ्यक्रम वयस्क शिक्षा की महत्वपूर्ण चुनौती है।

Adult Education Bureau has its office housed at Department of School Education & Literacy, Ministry of Education, Shastri Bhawan, New Delhi. Adult Education Bureau is divided into six sections and every section has its own mandate of work and responsibilities. Directorate of Adult Education (DAE) is the subordinate office under the Department of School Education & Literacy, Ministry of Education, Government of India. It functions to facilitate the implementation of adult education programmes in the country. It provides professional, academic and technical guidance for effective implementation of programmes launched under the aegis of National Literacy Mission Authority and monitors progress of the programmes implemented in the field through State Governments and other agencies.(https://dsel.education.gov.in/adult_education.

11.7 जीवनपर्यंत शिक्षा (life -long education)

व्यापक अर्थ में आजीवन शिक्षा में वे सभी प्रक्रियायें शामिल है, जिनके द्वारा व्यक्ति लगातार औपचारिक, अनौपचारिक और निरौपचारिक शिक्षा प्राप्त करता है। कैरियर विकास, व्यक्तिगत संवर्धन के लिये जीवनपर्यंत शिक्षा महत्वपूर्ण है। एक प्रकार से यह वयस्क शिक्षा के समान ही है। यूनेस्को की रिपोर्ट लर्निंग टू बी (1972) के अनुसार, आजीवन शिक्षा की एक अग्रणी नीति है, जो मनुष्य, शिक्षा और समाज के बारे में एक सुसंगत दर्शन है। सीखने की उत्सुकता तथा शिक्षा के प्रति आशावादी दृष्टिकोण इसका मुख्य आधार है। वाह्य बाधाओं को हटाना जीवनभर सीखने के लिए अभिप्रेरणा प्रदान करता है। भविष्य का समाज सीखने वाला समाज होगा। भावी समाज की संस्कृति ऐसी होगी जो वैज्ञानिक मानवतावाद पर आधारित होगी। इक्कसवी सदी में तेजी से हो रहे तकनीकी एवं शैक्षिक तथा सामाजिक परिवर्तनों के साथ सामंजस्य स्थापित करने के लिये प्रत्येक व्यक्ति को सीखते रहने के लिये तैयार रहना आवश्यक है। जीवनपर्यंत सीखने की शिक्षा के विचार का मूल आधार,समाज है। वर्तमान में विकसित एवं विकासशील दोनों देशों के लिए जीवनपर्यंत शिक्षा महत्वपूर्ण एवं आवश्यक है। जीवन पर्यंत सीखना, सीखने और जीवनयापन के एकीकरण में निहित है। सभी उम्र के लोगों बच्चों, युवाओं, वयस्कों एवं बुजुर्गों के लिये सीखने की गतिविधियों को एकीकृत करना, वयस्क शिक्षा में सभी जीवन संदर्भों जैसे -परिवार, स्कूल, समुदाय, कार्यस्थल एवं विभिन्न प्रकार के तौर तरीकों के माध्यम से साथ में सीखने के तरीकों, जरूरतों एवं आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए शिक्षा प्रक्रिया में शामिल करना निहित है। जीवन पर्यंत सीखना, आजीवन सीखना भी कहलाता है। यूनेस्को के अनुसार इसके पाँच आवश्यक तत्व है:-

सभी आयु वर्ग के लोग

- शिक्षा के सभी स्तर
- सीखने के सभी तौर-तरीके (आधुनिक एवं पारंपरिक)
- सभी सीखने के क्षेत्र
- विविध उद्देश्य

Lifelong learning is rooted in the integration of learning and living, covering learning activities for people of all ages (children, young people, adults and the elderly, girls and boys, women and men), in all life-wide contexts (family, school, the community, the workplace, and so on) and through a variety of modalities (formal, non-formal and informal), which, together, meet a wide range of learning needs and demands.

(source - https://www.uil.unesco.org/en/unesco-institute/mandate/lifelong-learning)

आजीवन शिक्षा का अर्थ है शिक्षा की ऐसी प्रणाली जो सभी उम्र के लोगों के लिये शिक्षा के अधिकार को साकार कर सके ।तथा उनके व्यक्तिगत विकास और समाज के सतत आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक और पर्यावरणीय विकास को प्रोत्साहित करे। तेजी से बदलते वैश्विक परिदृश्य तथा बढ़ते मानवीय अंतरसंबंध (interconnectedness) के कारण जीवनपर्यंत शिक्षा अधिक प्रासंगिक एवं महत्वपूर्ण हो गई है। इक्कीसवी सदी के कौशलों तीन श्रेणियों में बाँटा गया है –

- सीखना एवं नवाचार कौशल (learning and innovation skills)
- समालोचनात्मक चिंतन (Critical thinking)
- संचार (Communication)
- सहयोग (Collaboration)
- सृजनात्मकता (Creativity)

- साक्षरता कौशल (literacy skills)
- सूचना साक्षरता
- मीडिया साक्षरता
- तकनीकी साक्षरता
- जीवन कौशल (life skills).
- व्यक्तिगत कौशल
- व्यावसायिक

अपनी प्रगति जानिए 2

3. आजीवन शिक्षा का अर्थ स्पष्ट कीजिए ?

4. इक्कसवी सदी के आवश्यक कौशल लिखिये ?

11.8 सतत शिक्षा (continuous education)

सतत शिक्षा सतत विकास लक्ष्यों (sustainable development goals) को प्राप्त करने की दिशा में महत्वपूर्ण प्रयास है । आज की बदलती परिस्थितियों में जहां पारंपरिक भूमिकाये एवं जिम्मेदारियाँ तेजी से परिवर्तित हो रही है तब सतत शिक्षा अधिक प्रासंगिक एवं महत्वपूर्ण हो जाती है। विज्ञान एवं तकनीकी के क्षेत्र में तीव्र गति से हो रहे परिवर्तनों के कारण पारंपरिक शिक्षा प्रणाली द्वारा ग्रहण किया गया ज्ञान एवं कौशल तेजी से अप्रचलित हो रहे है । ज्ञान के परिमार्जन के साथ ही कौशल एवं कैरियर की संभावनाओ को बढ़ाने के लिये सतत शिक्षा आवश्यक है। स्वस्थ शिक्षण पारिस्थितिकी तंत्र के निर्माण में सतत शिक्षा की भूमिका महत्वपूर्ण है। स्कूली शिक्षा या उच्च शिक्षा प्राप्त करने के दौरान कुछ अंतराल (gap) उत्पन्न हो जाने की दशा में सतत शिक्षा प्रासंगिक हो जाती है ।वर्तमान में सतत शिक्षा के अंतर्गत विभिन्न सीखने के अवसर शामिल है जैसे –

- ऑन लाइन कोर्स

- कॉन्फ्रेंस
- कार्यशालाएं
- व्यावसायिक कोर्स

मुख्यतया वयस्कों के लिये जो अपनी औपचारिक शिक्षा पहले ही पूर्ण कर चुके है सतत शिक्षा ककार्मिकों को कौशल विकास एवं व्यावसायिक उन्नति के द्वार खोलती है।

सतत शिक्षा के प्रकार

- स्नातक कार्यक्रम
- विस्तार कार्यक्रम
- ऑन लाइन कार्यक्रम

सतत शिक्षा के लाभ

- व्यावसायिक नेटवर्क
- ज्यादा पैसा कमाना
- रचनाशीलता को बढ़ाना
- आत्म विश्वास में बृद्धि
- नये कौशल सीखना

11.9 सारांश (Summary)

वयस्क शिक्षा, जीवन पर्यन्त शिक्षा तथा सतत शिक्षा एक प्रकार से औपचारिक शिक्षा को प्राप्त करने के पश्चात या औपचारिक शिक्षा के दौरान उत्पन्न अंतराल (gap) को पाटने का एक अवसर है। वयस्क व्यक्ति को विभिन्न जिम्मेदारियों जैसे -पारिवारिक, सामाजिक का निर्वहन करना पड़ता है तथा उनसे पास उपलब्ध संसाधन परिवार तथा समाज में वितरित होने के कारण वयस्कों के पास सामान्यतः संसाधनों का कमी पायी जाती है। मानव मस्तिष्क का महत्वपूर्ण गुण उसकी नमनीयता है जो व्यक्ति को सीखने एवं विकास में सहायता करती है। युवा मस्तिष्क ज्यादा नम्य होने के कारण उनके लिए बदलाव आसान होते है। उम्र बढ़ने

के साथ साथ मस्तिष्क की नम्यता कम होने लगती है । वयस्क व्यक्ति को नयी अवधारणाओ को अपनाने, नया सीखने में अतिरिक्त प्रयास करने की आवश्यकता पड़ती है। अधिक उम्र एवं पूर्व शिक्षा प्राप्त किये वर्षों के बड़े अंतराल के कारण वयस्क खुद की योग्यताओ एवं क्षमताओं के बारे में आशंकित रहते है । जो उनके शिक्षा प्राप्तों करने के लक्ष्यों को प्रभावित करती है। वयस्क शिक्षार्थी के पास जीवन के विभिन्न वास्तविक अनुभव होते है। उनके द्वारा सीखने की प्रक्रिया में जीवन के वास्तविक अनुभवों का विशेष महत्व है । वर्तमान परिपेक्ष्य में प्रासंगिक कौशल उनके लिए उपयोगी है। प्रासंगिक प्रकरणों पर आधारित पाठ्यक्रम वयस्क शिक्षा की महत्वपूर्ण आवश्यकता है ।

11.10 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर (Answers of practice questions)-

1. यूनेस्को (1976), वयस्क शिक्षा को इस प्रकार परिभाषित करता है -संगठित शैक्षिक प्रक्रियाओं का सम्पूर्ण निकाय चाहे सामग्री, स्तर और पद्दति औपचारिक या अनौपचारिक हो जिसमें उन व्यक्तियों को शामिल किया जाता है जिन्हें समाज द्वारा वयस्क माना जाता है । तथा उन वयस्क शिक्षार्थियों को क्षमताओं के विकास, ज्ञान के संवर्धन, दृष्टिकोण में सुधार, पूर्ण व्यक्तिगत विकास के अवसर उपलब्ध होना आवश्यक है। वयस्क शिक्षा में संतुलित एवं स्वतंत्र सामाजिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक भागीदारी एवं विकास को विशेष स्थान दिया जाता है ।

2. वयस्क वह व्यक्ति है जो ;

- निश्चित आयु का है (कानूनी या अन्य आधार पर),
- वह शारीरिक, मानसिक, भावनात्मक, बौद्धिक एवं नैतिक रूप से परिपक्क है ,
- वह समझदार है तथा उसमें तर्कसंगत एवं जिम्मेदारी से कार्य करने की क्षमता है वह अपने एवं दूसरों के अधिकारों एवं सीमाओं को समझता है।
- वह आत्म नियंत्रण एंव स्वयं को रोकने का अभ्यास कर सकता है ।
- वह बड़े सार्वजनिक उद्देश्यों के लिए आंशिक या पूर्ण व्यक्तिगत त्याग कर सकता है ।
- वह अपने कार्यों को चुनते समय केवल लाभ एवं खुशी के बजाय नुकसान, खतरे एवं दुख को भी ध्यान में रखता है.
- वह अपने कार्यों की जिम्मेदारी लेता है ।

- वयस्क अपनी ताकत एवं कमजोरियों को पहचानता है।
- वह दयालुता, करूणा, तर्क एवं दीर्घकालिता के साथ कार्य एवं प्रतिक्रिया करता है।

3. आजीवन शिक्षा का अर्थ है शिक्षा की ऐसी प्रणाली जो सभी उम्र के लोगों के लिये शिक्षा के अधिकार को साकार कर सके तथा उनके व्यक्तिगत विकास और समाज के सतत आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक और पर्यावरणीय विकास को प्रोत्साहित करे।

4. इक्कीसवी सदी के कौशलों तीन श्रेणियों में बाँटा गया है –

I.सीखना एवं नवाचार कौशल

- समालोचनात्मक चिंतन
- संचार
- सहयोग
- सृजनात्मकता

II. साक्षरता कौशल

- सूचना साक्षरता
- मीडिया साक्षरता
- तकनीकी साक्षरता

III. जीवन कौशल.

- व्यक्तिगत कौशल
- व्यावसायिक

11.11 दीर्घ उत्तरीय प्रश्न (Descriptive questions)

1. Explain adult education ? write characteristics of adult person

वयस्क शिक्षा की व्याख्या कीजिए ? वयस्क व्यक्ति के लक्षण लिखिए।

2. Discuss relevance of life long education in present context?

वर्तमान संदर्भ में आजीवन शिक्षा की प्रासंगिकता की विवेचना कीजिए।

3. Describe continuous education? Highlight its importance?

सतत शिक्षा का वर्णन कीजिये ?इसके महत्व पर प्रकाश डालिए ?

11.12 संदर्भ ग्रंथ सूची (references)

https://www.uil.unesco.org/en/unesco-institute/mandate/lifelong-learning

https://dsel.education.gov.in/

https://egyankosh.ac.in/bitstream/123456789/90118/1/

Longworth, Norman, and Davies, W. Keith. (1996). Lifelong Learning: New Vision, New Implications, New Roles for People, Organizations, Nations and Communities in the 21st Century. London: Kogan Page. National Education Policy.(2020).www.mhrd.gov.in/sites/upload_ files/ mhrd/files/NEP_Final_English.pdf) .

UNESCO. (2006). Education for all: literacy for life; EFA global monitoring report, 2006, summary. (See https://unesdoc.unesco.org/ark:/48223/ pf0000144270).

UNESCO. (2017). Education for Sustainable Development Goals: learning objectives.

इकाई -12 (Unit -12)

वयस्क शिक्षा, जीवन पर्यन्त सीखने और सतत शिक्षा में शामिल एजेंसियां (Agencies involved in adult education, lifelong learning and continuing education)

12.1 परिचय

12.2 उद्देश्य

12.3 शिक्षा के अभिकरण

12.4 वयस्क शिक्षा के अभिकरण

12.5 जीवन पर्यन्त सीखने के अभिकरण

12.6 सतत शिक्षा के अभिकरण

12.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

12.8 सारांश

12.9 दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

12.10 संदर्भ ग्रंथ

12.1 परिचय

शिक्षा एक जीवन पर्यन्त चलाने वाली प्रक्रिया है। हम जीवन में हर अनुभव से सीखते है। जीवन का प्रत्येक अनुभव हमें कुछ न कुछ सीखा कर जाता है। औपचारिक शिक्षा वह शिक्षा है जो सुनियोजित तरीके से निश्चित संगठनों द्वारा योजना बनाकर, सुनिश्चित समय पर शिक्षार्थियों को उपलब्ध करायी जाती है। यह शिक्षा शिक्षण संस्थानों में प्रदान की जाती है। पुस्तकालय, संग्रहालय आदि भी औपचारिक शिक्षा के साधन है। यह शिक्षा पूर्णकालिक एवं निश्चित पाठ्यक्रम आधारित होती है। यह शिक्षण कक्षा आधारित प्रणाली है जिसमें शिक्षा के एक स्तर को उत्तीर्ण कर लेने पर शिक्षार्थियों को उपाधि या प्रमाणपत्र दिया जाता है। एक सामाजिक रूप से जागरूक एवं साक्षर व्यक्ति की समाज और लोकतंत्र में महत्वपूर्ण भूमिका होती है। वर्तमान तेजी से बदलते वैश्विक परिदृश्य में व्यक्ति को सामान्य साक्षरता के साथ -साथ डिजिटल साक्षरता,वित्तीय

साक्षरता आदि होना अत्यंत आवश्यक है। जिसके लिये वयस्क शिक्षा, आजीवन सीखना और सतत शिक्षा महत्वपूर्ण है।

12.2 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के बाद आप**:-**

- वयस्क शिक्षा, आजीवन शिक्षा एवं सतत शिक्षा की उपादेयता को स्पष्ट कर सकेंगे।
- औपचारिक एवं अनौपचारिक शिक्षा में अंतर स्पष्ट कर सकेंगे।
- वयस्क शिक्षा, आजीवन शिक्षा एवं सतत शिक्षा के विभिन्न अभिकरणों को वर्गीकृत कर सकेंगे।
- वयस्क शिक्षा, आजीवन शिक्षा एवं सतत शिक्षा के विभिन्न अभिकरणों के महत्व का वर्णन कर सकेंगे।

12.3 शिक्षा के अभिकरण

यद्यपि शिक्षा जीवन पर्यन्त चलाने वाली प्रक्रिया है फिर भी मानव समाज द्वारा अपने चिंतन क्षमता एवं नवाचार की प्रवृति के कारण शिक्षा प्राप्त करने के प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष तरीके प्रयोग में लाए जाते रहे है उनमें से मुख्य है :-

- औपचारिक शिक्षा
- अनौपचारिक शिक्षा
- निरौपचारिक शिक्षा

ये शिक्षा के अभिकरण कहलाते है।

औपचारिक शिक्षा (formal education)

औपचारिक शिक्षा शिक्षण संस्थानों जैसे -विद्यालय, विश्वविद्यालय, कॉलेज में प्रदान की जाती है जहां व्यक्ति मुलभूत शिक्षण कौशल एवं ज्ञान प्राप्त करता है यह शिक्षा पूर्व प्राथमिक शिक्षा से प्रारंभ होकर उच्च शिक्षा तक जारी रहती है। एक स्तर की शिक्षा को सफलतापूर्वक पूर्ण करने पर प्रमाणपत्र या उपाधि प्रदान की जाती है। विधालय स्तर की शिक्षा विभिन्न बोर्डो जैसे -केन्द्रीय माध्यमिक शिक्षा बोर्ड, राज्यों के

शिक्षा बोर्ड आदि द्वारा तथा उच्च शिक्षा विश्वविद्यालयों द्वारा निर्धारित नियमों एवं नियंत्रकों के तहत संचालित होती है। यह निश्चित योग्यताधारी शिक्षकों द्वारा निश्चित पाठ्यक्रमों के आधार पर, निश्चित सत्र में, निश्चित माध्यम से शिक्षण संस्थानों में दी जाती है।

अनौपचारिक शिक्षा (Informal education)

अनौपचारिक शिक्षा में सामान्यतया अभिभावकों, माता-पिता आदि दी जाने वाली व्यावहारिक शिक्षा शामिल है जैसे खाना बनाना, घर को व्यवस्थित रखना, साइकिल चलाना, दैनिक जीवन के क्रियाकलाप आदि। अनौपचारिक शिक्षा वह है जो शिक्षण संस्थानों में प्राप्त नहीं की जाती है। यह पूर्व - योजित जान बूझकर भी नहीं होती है। इसमें निश्चित स्वरूप एवं समय चक्र का पालन नहीं होता है। यह कहीं भी, किसी भी समय, किसी भी प्रकार तथा किसी भी माध्यम से प्राप्त की जा सकती है। यह शिक्षा व्यक्ति के जीवन अनुभवों एवं समुदाय के प्रभावों को दर्शाती है। यह जीवन पर्यन्त सीखने पर आधारित शिक्षा है। यह संचार माध्यमों, जीवन अनुभवों, मित्रों, परिवार के सदस्यों तथा समाज कहीं से भी प्राप्त की जा सकती है।

परिवार एक शिक्षा के अभिकरण के रूप में – मनोवेज्ञानिक एवं भौतिक रूप से बच्चा प्रथम बार समाज के संपर्क में अपने परिवार के माध्यम से आता है। तभी से सीखने की प्रक्रिया प्रारंभ हो जाती है। अपने परिवार के माध्यम से बच्चा धीरे-धीरे सामाजिक व्यवहारों को सीखने लगता है यह सीखने की प्रक्रिया जीवन पर्यन्त चलती रहती है।

- परिवार बच्चे को नैतिकता एवं मूल्य, नीति, व्यवहार, मूलभूत जीवन कौशलों की शिक्षा देते है।
- परिवार संस्कृति, परम्पराएं, तथा समाज के रीति रिवाजों की बच्चों को शिक्षा देते है।
- बच्चे के शारीरिक, मानसिक, चारित्रिक विकास पर परिवार का प्रभाव पड़ता है।
- व्यक्ति के समाजीकरण एवं यथार्थिकरण में परिवार प्रभाव डालता है।
- परिवार व्यक्ति की मूल आवश्यकताओं की पूर्ति करता है था बेहतर भविष्य निर्माण के लिये अवसर भी उपलब्ध करवाता है।

परिवार अनौपचारिक शिक्षा प्रदान करने वाला एक प्रभावशाली अभिकरण (agency) है। जिसका व्यक्तित्व पर प्रभाव पड़ता है। परिवार समाज की आधारभूत इकाई है। व्यक्तिगत विकास, सामाजिक विकास, आर्थिक विकास, राष्ट्रीय विकास, मानवता के विकास में परिवार की अभीष्ट भूमिका है।

समुदाय शिक्षा के अभिकरण के रूप में –

समुदाय शिक्षा की अनौपचारिक ऐजन्सी है। यह परिवार की तुलना में समाज की बड़ी इकाई है।

- समुदाय की शिक्षा के संशाधनों एवं अवसरों की उपलब्धता सुनिश्चित करने में अहं भूमिका है।
- समुदाय व्यक्ति के व्यक्तित्व विकास के लिये सम्पूर्ण प्रयास करता है। यह व्यक्ति के जीवन एवं क्रियाकलापों को सीधा प्रभावित करता है।
- समुदाय शिक्षण संस्थानों की स्थापना एवं संचालन लोगों की आवश्यकताओ तथा प्रगति के लिये करते है।

निरौपचारिक शिक्षा (Non-formal education)

निरौपचारिक शिक्षा सजग प्रयासों द्वारा व्यवस्थित तरीकों से एक विशेष समूह की आवश्यकता आधारित होती है।

निरौपचारिक शिक्षा के पाठ्यक्रम में लचीलापन तथा मूल्यांकन शामिल है। जैसे -स्काउट गाइड, एनसीसी, एनएसएस आदि, फिटनेस कार्यक्रम, समुदाय आधारित वयस्क शिक्षा, विभिन्न संगठनों द्वारा विकसित वयस्क शिक्षा कार्यक्रम आदि।

- इसमे समय चक्र एवं पाठ्यक्रम को समायोजित किया जा सकता है।
- मुक्त एवं दूरस्थ शिक्षा निरौपचारिक शिक्षा की एक एजेंसी है।
- ऑनलाइन व्यावसायिक कार्यक्रम एक प्रकार से निरौपचारिक शिक्षा का ही रूप है।
- यह व्यावहारिक एवं व्यावसायिक शिक्षा है। जिसमें व्यावसायिक कौशलों को सीखा जाता है। इसमे उम्र, पाठ्यक्रम एवं समय की कोई बाध्यता नहीं होती है।

जीवन पर्यन्त सीखने (life -long learning) की अवधारणा इक्कसवी सदी के शिक्षार्थियों के लिये आवश्यकता आधारित एवं प्रासंगिक शिक्षा तक पहुँच सुनिश्चित करने का मुख्य साधन है। यह आरंभिक शिक्षा एवं सतत शिक्षा के प्रचलित अवधारणा का विस्तृत रूप है। वयस्क शिक्षा, जीवन पर्यन्त सीखना एवं सतत शिक्षा ज्ञान आधारित समाज के निर्माण के लिये वर्तमान की आवश्यकता है। जहां प्रत्येक व्यक्ति को नये कौशल एवं ज्ञान को सीखने के अवसर उपलब्ध है।

अभ्यास प्रश्न

1. शिक्षा के औपचारिक अभिकरणों को स्पष्ट कीजिए ?
2. सत्य /असत्य छाटिये

a. विधालय औपचारिक शिक्षा के अभिकरण है।

b. निरौपचारिक शिक्षा आवश्यकता आधारित होती है।

c. अनौचारिक शिक्षा पूर्व नियोजित होती है।

d. समुदाय आधारित वयस्क शिक्षा औपचारिक शिक्षा है।

3. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिये

a. वयस्क शिक्षा ....आवश्यकता आधारित होती है।

b. जीवन पर्यन्त शिक्षा ....समाज के लिये आवश्यक है।

c. सतत शिक्षा नये.........और ज्ञान को सीखने का अवसर प्रदान करती है।

“The concept of learning throughout life is a key that gives access to need based and relevant education to twenty first century learners. It goes beyond traditional distinction between initial and continuing education. Adult education, lifelong learning &continuing education strength the concept of learning society. Where each and every individual has opportunity of learning new skills, knowledge. Now continuing education is going far beyond what was already practiced i.e. orientation programs, refresher training and promotion courses for adults. It opens opportunities of learning for all for different purposes offering them second chance. Satisfying their desire for new knowledge to surpass themselves ,making it possible to broaden vocational knowledge and skill”.

12.4 वयस्क शिक्षा के अभिकरण (Agencies of adult education)

वयस्क शिक्षा समाजीकरण एवं सांस्कृतिक विकास के संरक्षण, हस्तांतरण एवं परिमार्जन का एक सशक्त माध्यम है । साक्षरता अभियान, राष्ट्रीय वयस्क शिक्षा कार्यक्रम, राष्ट्रीय साक्षरता अभियान जैसे कार्यक्रम हमारे देश में लंबे समय से वयस्क शिक्षा के महत्व को समझते हुए लागू किए जाते रहे है। एक सामाजिक रूप से जागरूक एवं साक्षर(जिसमें डिजिटल साक्षरता, वित्तीय साक्षरता आदि शामिल है) वयस्क की समाज एवं राष्ट्र के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका है । वयस्क शिक्षा के महत्व को ध्यान में रखते हुए हमारे देश में भारत सरकार के शिक्षा मंत्रालय के तहत वयस्क शिक्षा निदेशालय कार्य करता है। जो निरंतर वयस्क शिक्षा, जीवन पर्यन्त सीखने तथा सतत शिक्षा के प्रोत्साहन एवं संवर्धन के लिये कार्य करता है ।

वयस्क शिक्षा निदेशालय के कार्य निम्नलिखित है –

1. राष्ट्रीय साक्षरता मिशन को शैक्षिक एवं तकनीकी संसाधन एवं सहयोग
2. शिक्षण अधिगम सामग्री के विकास के लिये दिशा निर्देश देना
3. प्रशिक्षण एवं अभिमुखिकरण कार्यक्रम आयोजित करना
4. साक्षरता अभियानों के प्रगति एवं स्तिथि निरीक्षण तथा नियमित पृष्ठ पोषण देना
5. मीडिया सामग्री का उत्पादन तथा इलेक्ट्रॉनिक, प्रिन्ट, पारंपरिक तथा लोक परम्पराओ का शिक्षा एवं साक्षरता के लिये प्रोत्साहन
6. सामाजिक शिक्षा अनुसंधान संस्थानों द्वारा संचालित साक्षरता अभियानों का समवर्ती एवं वाह्य मूल्यांकन कर राष्ट्रीय साक्षरता मिशन को नियमित पृष्ठपोषण देना।
7. जिला साक्षरता समिति, राज्य साक्षरता अभियान में शामिल संस्थानों, राज्य संसाधन केंद्रों तथा संस्थानों जो निरंतर वयस्क शिक्षा की सामग्री एवं प्रक्रिया के सुधार के लिये कार्य कर रही है, के बीच सामंजस्य, सहयोग एवं नेटवर्किंग करना है।

(source-https://www.education.gov.in/dae)

मुक्त एवं दूरस्थ शिक्षा वयस्क शिक्षा को प्रोत्साहन देती है। यह केन्द्रीय स्तर पर इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविधालय तथा राज्य स्तर पर राज्य मुक्त विश्व विधालयों द्वारा संचालित होती है। ये वयस्क शिक्षा की महत्वपूर्ण एजेन्सीज है। मुक्त एवं दूरस्थ शिक्षा में उम्र की कोई सीमा नहीं होती है। कोई भी व्यक्ति कभी भी अपने ज्ञान एवं कौशल को बढ़ाने के लिये इस माध्यम से शिक्षा प्राप्त कर सकता है।

12.5 जीवन पर्यन्त सीखने के अभिकरण (Agencies of life-long learning)

तेजी से बदलते वैश्विक परिदृश्य में जीवन पर्यन्त सीखने के अवसर व्यक्तिगत विकास ,सामाजिक समरसता एवं आर्थिक विकास के लिये आवश्यक है। सतत विकास का लक्ष्य 4 का उद्देश्य सीखने की पारिस्थितिकी का विकास तथा जीवन भर कार्य करने तथा सीखने के लिये स्थानीय से राष्ट्रीय स्तर तक क्षमता निर्माण, साझेदारी को प्रोत्साहन तथा एवं ज्ञान पाने के लिये तैयार करना है। इसकी विषय वस्तु है –

- गुणात्मक सीखने की पारिस्थितिकी का निर्माण ,
- जीवन कौशलों को बढ़ावा ,
- यह सुनिश्चित करना कोई भी पीछे न रह पाये

वर्तमान में विभिन्न संगठन जीवन पर्यन्त शिक्षा के लिये कार्य कर रहे है। लघु अवधि के सर्टिफिकेट, डिप्लोमा, डिग्री कोर्स ऑनलाइन या हाइब्रिड मोड में संचालित हो रहे है, जिसके माध्यम से व्यक्ति जीवन पर्यन्त सीखने के अवसर उपलब्ध हो रहे है। जैसे - स्वयं (SWAYAM), स्वयंप्रभा (SWAYAMPRABHA), विभिन्न संस्थानों के शैक्षिक प्लेटफ़ॉर्म के माध्यम से वर्तमान में अनेक गुणवत्ताधारित जीवनोंपयोगी कौशल विकास के कार्यक्रम ऑन लाइन संचालित हो रहे है। जिन्हें विभिन्न व्यवसायों में संलग्न व्यक्ति अपनी आवश्यकता एवं रुचि के अनुसार अपने ज्ञान एवं कौशल के विकास के लिये कभी भी कर सकते है। जो उनके व्यावहारिक एवं व्यावसायिक विकास में सहायक होते है।

जीवन पर्यंत शिक्षा, शिक्षा के क्षेत्र में क्रांतिकारी परिवर्तन के साथ ही सतत विकास, बेहतर स्वास्थ्य एवं समावेशी भविष्य के निर्माण के लिए आवश्यक है। आजीवन सीखने के लिए वातावरण सृजन तथा व्यक्तियों को आजीवन सीखने के अवसर उपलब्ध होने आवश्यक है।

- विश्वविद्यालयों द्वारा जीवन अपर्यंत शिक्षा

ऐकडेमिक स्टाफ कॉलेज, वयस्क एवं सतत शिक्षा विस्तार विभाग (Department of adult continuing education extension)

- समुदाय पॉलीटेक्नीक (Community Polytechnics)
- समुदाय कॉलेज (Community colleges)
- मुक्त विश्वविधालय एवं खुला विधालय (Open Universities and Open schools)
- मास मीडिया (Mass media)
- व्यापारिक घराने (Business houses)
- व्यवसायिक संगठन (Professional organizations)

12.6 सतत शिक्षा के अभिकरण (Agencies of continuing education)

सतत शिक्षा एक व्यापक शब्द है जिसमें औपचारिक शिक्षण गतिविधियों के भिन्न शिक्षण गतिविधियां शामिल जिनमे उपाधि एवं रिजल्ट आवश्यक नहीं होता है। इसके अंतर्गत मुख्य रूप से वे शिक्षार्थी शामिल होते जिनकी स्कूली शिक्षा अथवा उच्च शिक्षा में कोई अंतराल (gap) उत्पन्न हो जाता है ।इसे निरंतर शिक्षा भी कहा जाता है यह पेशेवरों के बीच लोकप्रिय है। कार्य बल के लगातार बदलते परिदृश्य को देखते हुये व्यवसाय से पूर्व प्राप्त किए गए ज्ञान एवं कौशल शीघ्र ही अप्रसंगिक हो रहे है । तब सतत शिक्षा के भूमिका ज्यादा बढ़ जाती है।जैसे- सेमीनार, कार्यशालाएं, लघु अवधि के पाठ्यक्रम एक प्रकार से सतत शिक्षा के माध्यम है। यह बेहतर कैरियर विकल्पों को प्राप्त करने में सहायक है । यह व्यक्ति में संतुष्टि एवं प्रोत्साहन की भावना का विकास करती है। ज्ञान आधारित समाज के विकास के लिये सतत शिक्षा लोक शिक्षा केंद्रों (LSK) के द्वारा भी विभिन्न कर्यक्रमों में साक्षरता के सतत अवसर उपलब्ध करवाने के लिये पुस्तकों, मीडिया (media) एवं सूचना संचार तकनीकी (information communication technology) के उपयोग की सुविधा उपलब्ध करवाना आवश्यक है ।

शिक्षा का मुख्य कार्य व्यक्ति को अपने व्यक्तित्व को विकसित करने और अच्छी आदतों की और प्रवर्त करने तथा बड़े समुदाय के जीवन में बेहतर सामंजस्य करने के लिये तैयार करना है। शिक्षा का मुख्य कार्य व्यक्तियों को सामाजिक बनाना, उन्हे मूल्यों एवं आदर्शो से युक्त करना तथा समुदाय परम्पराओ एवं चिंतन से अवगत कराना है। जनसंख्या के एक बड़े हिस्से की सांस्कृतिक, भोगोलिक, आर्थिक वंचना शिक्षा

प्राप्त करने के समान अवसरों के प्राप्त करने में बाधा उत्पन्न करती है। जिसके फलस्वरूप औपचारिक शिक्षा सभी व्यक्तियों को उपलब्ध नहीं हो पाती है ।तेजी से हो रहे तकनीकी एवं सामाजिक परिवर्तनों के कारण एक बार अर्जित की गई शिक्षा कुछ समय बाद अप्रसंगिक हो जाती है। प्रासंगिक एवं जीवनोंपयोगी ज्ञान एवं कौशलों के अर्जन के लिये सतत शिक्षा अत्यंत महत्वपूर्ण है । वैश्वीकरण (globalization) जीवन के प्रत्येक क्षण में प्रवेश कर चुका है । जिसके फलस्वरूप हम सभी अधिक करीब आते जा रहें हैं। ऐसे में जहाँ अवसर बढ़ रहें है साथ ही चुनौतियाँ भी तेजी से बढ़ रही है। तेजी से बदल रही परिसतिथियों में उत्पन्न नई चुनौतियों एवं क्रियात्मक (functional) साक्षरता के महत्व को ध्यान में रखते हुये भारत सरकार साक्षर भारत मिशन प्रारंभ किया गया ।

साक्षर भारत कार्यक्रम एक विस्तृत पाठ्यक्रम (content) आधारित कार्यक्रम है । यह सतत शिक्षा लाभों (virtue) को एक नयी पहचान देता है। वर्तमान तकनीकी संचालित दुनियाँ में ज्ञान तेजी से बदल रहा है । तब प्रत्येक व्यक्ति को नवीनतम ज्ञान को प्राप्त करना आवश्यक है। साक्षर भारत कार्यक्रमों में साक्षरता के साथ साथ सतत शिक्षा कार्यक्रम शामिल होते है।

साक्षर भारत कार्यक्रम के उद्देश्य है: –

- अशिक्षित लोगों को बुनियादी भाषा एवं गणितीय कौशलों की शिक्षा प्रदान करना ।
- नव साक्षारों को बुनियादी शिक्षा के उच्च स्तर तक लाकर औपचारिक शिक्षा के समकक्ष स्तर प्राप्त करने काबिल बनाना ।
- निरक्षरों एवं नव साक्षरों को जीविकोपार्जन एवं जीवन स्तर में सुधार हेतु कौशल विकास के कार्यक्रम आयोजित का प्रासंगिक शिक्षा उपलब्ध कराना ।
- निरक्षरों एवं नव साक्षरों को सतत शिक्षा अवसर उपलब्ध करवा कर ज्ञान आधारित समाज के विकास को प्रोत्साहन देना ।

अभ्यास प्रश्न (Practice questions)

4. वयस्क शिक्षा निदेशालय के कार्य लिखिये?

5. सतत विकास लक्ष्य 4 का उद्देश्य स्पष्ट कीजिए ?

6.	साक्षर भारत कार्यक्रम के उद्देश्य क्या है ?

12.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1. औपचारिक शिक्षा शिक्षण संस्थानों जैसे - विद्यालय, विश्वविद्यालय ,कॉलेज में प्रदान की जाती है जहां व्यक्ति मुलभूत शिक्षण कौशल एवं ज्ञान प्राप्त करता है यह शिक्षा पूर्व प्राथमिक शिक्षा से प्रारंभ होकर उच्च शिक्षा तक जारी रहती है। एक स्तर की शिक्षा को सफलतापूर्वक पूर्ण करने पर प्रमाणपत्र या उपाधि प्रदान की जाती है। विद्यालय स्तर की शिक्षा विभिन्न बोर्डों जैसे -केन्द्रीय माध्यमिक शिक्षा बोर्ड, राज्यों के शिक्षा बोर्ड आदि द्वारा तथा उच्च शिक्षा विश्वविद्यालयों द्वारा निर्धारित नियमों एवं नियंत्रकों के तहत संचालित होती है। यह निश्चित योग्यताधारी शिक्षकों द्वारा निश्चित पाठ्यक्रमों के आधार पर,निश्चित सत्र में, निश्चित माध्यम से शिक्षण संस्थानों में दी जाती है।

2.

a. सत्य

b. सत्य

c. असत्य

d. असत्य

3.

a. आवश्यकता

b. ज्ञान आधारित

c. ज्ञान एवं कौशल

4.

I. राष्ट्रीय साक्षरता मिशन को शैक्षिक एवं तकनीकी संसाधन एवं सहयोग ,

II.शिक्षण अधिगम सामग्री के विकास के लिये दिशा निर्देश देना,

III. प्रशिक्षण एवं अभिमुखिकरण (orientation) कार्यक्रम आयोजित करना,

IV.साक्षरता अभियानों के प्रगति एवं स्तिथि निरीक्षण (monitor) तथा नियमित पृष्ठ पोषण (feedback) देना।

V. मीडिया सामग्री का उत्पादन तथा इलेक्ट्रॉनिक, प्रिन्ट, पारंपरिक तथा लोक परम्पराओ का शिक्षा एवं साक्षरता के लिये प्रोत्साहन।

VI. सामाजिक शिक्षा अनुसंधान संस्थानों द्वारा संचालित साक्षरता अभियानों का समवर्ती एवं वाह्य मूल्यांकन कर राष्ट्रीय साक्षरता मिशन को नियमित पृष्ठपोषण देना।

VII. जिला साक्षरता समिति, राज्य साक्षरता अभियान में शामिल संस्थानों, राज्य संसाधन केंद्रों तथा संस्थानों जो निरंतर वयस्क शिक्षा की सामग्री एवं प्रक्रिया के सुधार के लिये कार्य कर रही है, के बीच सामंजस्य, सहयोग एवं नेटवर्किंग करना है।

5. सतत विकास का लक्ष्य 4 (sustainable development goal 4) का उद्देश्य सीखने की पारिस्थितिकी का विकास तथा जीवन भर कार्य करने तथा सीखने के लिये स्थानीय से राष्ट्रीय स्तर तक क्षमता निर्माण (capacity building), साझेदारी को प्रोत्साहन तथा एवं ज्ञान पाने के लिये तैयार करना है।

6. साक्षर भारत कार्यक्रम के उद्देश्य है –

- अशिक्षित लोगों को बुनियादी भाषा एवं गणितीय कौशलों की शिक्षा प्रदान करना ,
- नव साक्षारों को बुनियादी शिक्षा के उच्च स्तर तक लाकर औपचारिक शिक्षा के समकक्ष स्तर प्राप्त करने काबिल बनाना,
- निरक्षरों एवं नव साक्षरों को जीविकोपार्जन एवं जीवन स्तर में सुधार हेतु कौशल विकास के कार्यक्रम आयोजित का प्रासंगिक शिक्षा उपलब्ध कराना,
- निरक्षरों एवं नव साक्षरों को सतत शिक्षा अवसर उपलब्ध करवा कर ज्ञान आधारित समाज के विकास को प्रोत्साहन देना।

12.8 सारांश (summary)

मानवीय आवश्यकताओं में परिवर्तन के साथ सामाजिक संस्थाओं में परिवर्तन होते है। शिक्षा एक सामाजिक प्रक्रिया है। जिस पर आवश्यकता एवं परिवर्तनों का सीधा प्रभाव पड़ता है। तकनीकी हमारे वर्तमान जीवन शैली को प्रभावशाली ढंग से प्रभावित करती है। तकनीकी के अभाव में आधुनिक समाज विकसित नहीं हो सकता है। आधुनिक तकनीकी ने अनेक व्यवसायों को जन्म दिया है जो विशेष कुशलता एवं ज्ञान की मांग करती है। तब वयस्क शिक्षा, जीवन पर्यन्त सीखना एवं सतत शिक्षा ज्यादा महत्वपूर्ण एवं उपयोगी हो जाती है। वर्तमान समय में आवश्यकता के अनुसार व्यक्ति को ज्ञान एवं कौशलों के विकास के लिये आजीवन सीखते रहने के लिये तैयार रहना आवश्यक है। सामुदायिक एवं स्वयंसेवी गतिविधियों का समावेश आजीवन सीखने तथा सतत शिक्षा के लिये आवश्यक है।

बुनियादी साक्षरता प्राप्त करना, आवश्यक जीवन कौशलों को सीखना, जीविकोपार्जन के अवसर प्रत्येक नागरिक का मौलिक अधिकार है। किसी व्यक्ति के व्यक्तिगत, सामाजिक, आर्थिक विकास में जीवन पर्यंत सीखने के अवसर सकारात्मक प्रभाव डालते है। वयस्क शिक्षा, आजीवन शिक्षा और सतत शिक्षा समाज एवं राष्ट्र की उन्नति में सहयोग करती है।

12.9 दीर्घ उत्तरीय प्रश्न (Descriptive questions)

1. वयस्क शिक्षा के अभिकरण एवं महत्व को स्पष्ट कीजिए।

(Clarify agencies of adult education and its importance.)

2. जीवन पर्यन्त सीखने की प्रासंगिकता अपने शब्दों में स्पष्ट कीजिए।

(Explain relevance of life -long learning in your own words.)

3. सतत शिक्षा की अवधारणा स्पष्ट कीजिए।

(Clarify concept of continuous education.)

4. शिक्षा के विभिन्न अभिकरणों का वर्णन कीजिये।

(Describe different agencies of education.)

12.10 संदर्भ ग्रंथ

https://dsel.education.gov.in/adult_education

https://www.egyankosh.ac.in/bitstream/123456789/68570/1

https://www.education.gov.in/sites/upload_files/mhrd/files/NEP_final

Govt. of India (2020). Annual Report, MHRD, Govt. of India, New Delhi.

https://www.uil.unesco.org/en

https://egyankosh.ac.in/bitstream/123456789/9162/1/Unit-2.pdf

https://www.education.gov.in/sites/upload_files/mhrd/files/NEP_final_

https://www.academia.edu/5670098/

Block-4

इकाई 13: जनसंख्या शिक्षा: इसका संप्रत्यय, प्रकृति, उद्देश्य एवं महत्व (Population Education: Concept, Nature, Objectives and its significance)

इकाई की रूपरेखा:-

13.1 प्रस्तावना
13.2 उद्देश्य
13.3 जनसंख्या शिक्षा का अर्थ एवं परिभाषा
13.4 जनसंख्या शिक्षा की विशेषताएं
13.5 जनसंख्या शिक्षा के उद्देश्य
13.6 जनसंख्या शिक्षा का महत्व व आवश्यकता
13.7 जनसंख्या शिक्षा की प्रकृति
13.8 जनसंख्या शिक्षा की अवधारणा
13.9 जनसंख्या शिक्षा का विकास
13.10 जनसंख्या वृद्धि समस्या व उनके समाधान
13.11 सारांश
13.12 शब्दावली
13.13 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
13.14 सन्दर्भ ग्रन्थ
13.15 निबन्धात्मक प्रश्न

13.1 प्रस्तावना

जनसंख्या शिक्षा का विचार सम्पूर्ण विश्व के निए नवीन है। इस विचार के उदभव एवं प्रसार का मूल कारण है - जनसंख्या की तीव्र गति से वृद्धि। इस वृद्धि का अनुमान डा0 मलैया के अंग्रकित शब्दों से सहज लगाया जा सकता है:

20वी सदी के आरम्भ में संसार की जनसंख्या लगभग 1 अरब 50 करोड़ थी। वर्तमान में लगभग 6.5 अरब व्यक्ति है तथा इस सदी के अन्त तक यह सम्भावना है कि संसार की आबादी 7 अरब हो जाएगी। पिछले 20 वर्षो में संसार की आबादी लगभ 1 अरब बढ़ी है।

जनसंख्या की इस असाधारण वृद्धि ने संसार के समक्ष एक भीषण समस्या उपस्थित कर दी है, क्योंकि यह व्यक्तिगत, राष्ट्रीय एवं अन्तराष्ट्रीय जीवन के प्रत्येक पक्षा पर दूषित प्रभाव डाल रही है। इसका प्रभाव व्यक्ति सुख एवं सम्पत्ति पर, राष्ट्र की प्रगति एवं समृद्धि पर और अन्तराष्ट्रीय सुरक्षा एवं शान्ति पर पड़ता है। अतः जनसंख्या-वृद्धि अथवा विस्फोट को गम्भीरतम समस्या बताते हुए डा0 लल्ला तथा डा0 मूर्ति ने लिखा है – "जनसंख्या विस्फोट की गम्भीर समस्या ने हमारे समय के विश्व को मुसीबत में फंसा दिया है|"

पृथ्वी पर निरन्तर बढ़ती जनसंख्या आज विश्व में चिन्ता का प्रमुख कारण बन रहा है। क्योंकि इस वृद्धि ने लगभग सभी देशों को किसी न किसी रूप में प्रभावित किया है और उनके प्रगति में बाधाएं उत्पन्न की है। अविकसित और विकासशील देशों में यह विविध प्रकार की समस्याओं को जन्म देने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करती है इनमें से प्रमुख समस्याएं इस प्रकार से है-

1. भोजन, कपड़ा, मकान व पीने योग्य पानी
2. रहने का निम्न स्तर
3. निरक्षता की समस्या
4. चिकित्सा सुविधाओं की कमी
5. बेरोजगारी
6. कम शिक्षा सुविधाएं
7. शहरीकरण - इसके फलस्वरूप मलिन बस्तियों, ड्रग्स-सेवन आदि को जन्म मिला है।

इन सभी समस्याओं को समुचित रूप से समझने के लिए आप इस इकाई में जनसंख्या शिक्षा का संप्रत्यय, प्रकृति, उद्देश्य एवं महत्व के बारे में अध्ययन करेंगे|

13.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के उपरान्त आप

- संसार में बढ़ती हुई जनसंख्या की प्रकृति को स्पष्ट कर सकेंगे।
- जनसंख्या वृद्धि के दुष्परिणामों की व्याख्या कर सकेंगे।
- जनसंख्या वृद्धि के कारणों को स्पष्ट कर सकेंगे।
- जनसंख्या शिक्षा का संप्रत्यय व प्रकृति की व्याख्या कर सकेंगे।
- जनसंख्या शिक्षा के उद्देश्य एवं महत्व को स्पष्ट कर सकेंगे।

13.3 जनसंख्या शिक्षा का अर्थ एवं परिभाषा:

शिक्षा शब्द का अनेक अर्थों में प्रयुक्त किया जाता है। शिक्षा की पाठ्यवस्तु एवं प्रकृति भी बदलती रही है। शिक्षा एक समाजिक परिवर्तन और सामाजिक नियन्त्रण का शक्तिशाली यन्त्र है। शिक्षा सामाजिक समस्याओं का व्यवहारिक समाधान भी देती है।

शिक्षा अध्ययन क्षेत्रों का उद्देश्य एवं प्रकृति भिन्न होती है। इस तथ्य को कुछ उदाहरणों से स्पष्ट किया जा सकता है-

	शिक्षा का अध्ययन क्षेत्र	**उद्देश्य एवं प्रकृति**
1.	शिक्षा मनोविज्ञान	बाल केन्द्रित शिक्षा
2.	शिक्ष तकनीकी	उद्देश्य केन्द्रित शिक्षा
3.	शिक्षा समाजशास्त्र	व्यवसाय केन्द्रित शिक्षा
4.	पर्यावरण शिक्षा	समस्या केन्द्रित शिक्षा

जनसंख्या शिक्षा भी शिक्षा का एक अध्ययन क्षेत्र है। जनसंख्या की समस्या के समाधान में शिक्षा की अहम भूमिका है। इस प्रकार जनसंख्या शिक्षा की प्रकृति समस्या केन्द्रित है।

जनसंख्या शिक्षा का मुख्य उद्देश्य छात्रों में जनसंख्या की वृद्धि के सम्बन्ध में जागरूकता एवं संवेदनशीलता उत्पन्न करना है, जिस प्रकार पर्यावरण शिक्षा के अन्तर्गत किया जाता है।

जनसंख्या शिक्षा, शिक्षा का एक नया पर्याय है, जिसका विकास विशेष रूप में सन 1970 में भारत में हुआ। इस प्रत्यय के प्रवर्तक कोलम्बिया विश्वविद्यालय के स्लोन आर0 बेलैण्ड माने जाते है। कुछ विद्वान इसे यौन शिक्षा, काम शिक्षा, जनसंख्यानिरोध शिक्षा, पारिवारिक जीवन शिक्षा, परिवार कल्याण शिक्षा आदि नामों से भी सम्बोधित करते हैं। परन्तु जनसंख्या शिक्षा सबसे उपयुक्त नाम माना गया है।

जनसंख्या शिक्षा के सम्बन्ध में फिलिप एम0 हापर का कहना है कि बीसवीं सदी के शिक्षा के पाठ्यक्रम में जनसंख्या शिक्षा महत्वपूर्ण प्रकरण है।

इसकी जानकारी विद्यालय में देने की आवश्यकता है। जनसंख्या अध्ययन तथा इसके निष्कर्ष भी इस शताब्दी के सन्दर्भ में देना चाहिए तथा इसकी उपयोगिता भी समझनी चाहिए|

डी0 गोपालराव के अनुसार, "जनसंख्या शिक्षा का अर्थ है कि ऐसा शैक्षिक पाठ्यक्रम जो जनसंख्या का अध्ययन इस प्रकार से करे कि तीव्रता से बढ़ती हुई जनसंख्या से उत्पन्न होने वाली समस्याओं के बारे में तर्क संगत समाधान का निर्णय लेने में छात्रो की सहायता कर सकें"।

अमेरिकी शिक्षाविदों ने जनसंख्या शिक्षा के लिए नया शब्द जनसंख्या जागृति का अधिक प्रयोग किया है।

जनसंख्या शिक्षा का सर्वप्रथम विशद वर्णन सितम्बर 1970 में युनेस्को की ओर से बैंकाक में आयोजित की जाने वाली जनसंख्या शिक्षा संगोष्टी द्वारा इस प्रकार किया गया – "जनसंख्या शिक्षा एक शैक्षिक कार्यक्रम है, जिसमें परिवार, समाज, राष्ट्र एवं विश्वभर की जनसंख्या की स्थिति का अध्ययन किया जाता है। इस अध्ययन का उद्देश्य छात्रों में इस स्थिति के प्रति विवेकपूर्ण, उत्तरदायी दृष्टिकोण एवं व्यवहार का विकास करना है"।

उस्मान के अनुसार: "जनसंख्या शिक्षा, जनसंख्या वृद्धि और राष्ट्रीय विकास के अन्तर संबंधी समझ को विकसित करती है"।

विश्वविद्यालय अनुदान आयोग प्रतिवेदन के अनुसार: "जनसंख्या शिक्षा जन-समुदाय में जनसंख्या की वृद्धि, नीति, कार्यक्रमों तथा लघु परिवार की अवधारणा को समझने का साधन है, जिससें समुदाय पर पड़ने वाले विपरीत प्रभाव की जानकारी दी जा सके"।

अतः इन परिभाषाओं से जनसंख्या का अर्थ, क्षेत्र एवं विशेष ताओं का बोध होता है। इसका क्षेत्र अधिक व्यापक है जो पर्यावरण और मानव कल्याण से सम्बन्धित है।

13.4 जनसंख्या शिक्षा की विशेषताएं

उपरोक्त परिभाषाओं की समीक्षा से जनसंख्या शिक्षा की अधोलिखित विशेषताओं का बोध होता है-

1. जनसंख्या शिक्षा एक प्रक्रिया है, जिससे जनसंख्या वृद्धि के प्रति जागरूकता का विकास किया जाता है।

2. जनसंख्या शिक्षा, शिक्षा विषय का एक नया क्षेत्र है, जिसमें जनसंख्या का अध्ययन किया जाता है, मनुष्य, समाज तथा राष्ट्र पर पड़ने वाले प्रभाव की जानकारी दी जाती है।

3. इसके अन्तर्गत जनसंख्या की वृद्धि तथा स्वरूप में परिवर्तन तथा समस्याओं का अध्ययन, समाधान के उपाय तथा कारणों के पारस्परिक सम्बन्धों का बोध होता है।

4. जनसंख्या का अध्ययन करना और जीवन, परिवार और समाज में गुणवत्ता लाना है।

5. जनसंख्या शिक्षा से बालको में छोटे परिवार और उससे लाभ की जानकारी दी जाती है, जिससें जनसंख्या वृद्धि के प्रति समूचित अभिवृत्ति एवं मूल्यों का विकास करना है।

6. जनसंख्या शिक्षा एक शैक्षिक कार्यक्रम है, जो परिवार, समुदाय, राष्ट्र तथा विश्व में बढ़ रही जनसंख्या के कुप्रभाव के प्रति समुचित अभिवृत्ति एवं मूल्यों का विकास करना है।

7. यह शिक्षा का वह क्षेत्र है, जिसमें छात्र और अध्यापक में जनसंख्या वृद्धि के सम्बन्ध में जागृति लाकर, सम्बन्धित समस्याओं के समाधान में ठोस योगदान करते हैं।

यह औपचारिक तथा अनौपचारिक शिक्षा के कार्यक्रम द्वारा जानकारी दी जाती है।

17.5 जनसंख्या शिक्षा के उद्देश्य:

भारत सरकार ने अप्रैल 1996 में राष्ट्रीय नीति की घोषणा की इस नीति के उद्देश्य एवं लक्ष्यों को इस प्रकार निर्धारित किया की जनसंख्या के विस्फोट का ठीक तरह से मुकाबला किया जा सके और बढ़ती हुई जनसंख्या के कारण देश पर आए संकट का मुकाबला किया जा सके।

जनसंख्या नीति के लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए जनसंख्या सम्बन्धी शिक्षा पर जोर दिया। फलस्वरूप इसे उच्च शिक्षा की संस्थाओं के पाठ्यक्रम में इसे शामिल किया गया।

राष्ट्रीय एकता, प्रौढ़ शिक्षा, ग्राम विकास, पर्यावरण, कानूनी साक्षरता पर जार देने का निश्चय किया गया। यह भी तय किया गया कि जनसंख्या शिक्षा को पाठ्य सहगामी क्रियाओं में शामिल किया जाए।

भारत में 15 वर्ष से कम आयु के बच्चों की संख्या बहुत अधिक है। यही बड़े होकर विवाह करके माता पिता बनेंगे। इनको परिवार के आकार के विषय में जानकारी देना चाहिए जिनका जनसंख्या वृद्धि से सीधा सम्बन्ध है। अतः इस वर्ग के बच्चों को बढ़ती जनसंख्या के दुष्प्रभाव से है अवगत कराना अवाश्यक है। जिससे वे अपने भावी परिवार के आकार के विषय में निर्णय कर सकें।

इस प्रकार जनसंख्या शिक्षा वह शिक्षा जिसमें युवा पीढ़ी के लोगो को जनसंख्या की गति, उसकी दिशा और देश के सामाजिक एवं आर्थिक जीवन, उसके प्रभाव और परिवार के आकार छोटे परिवार के लाभ आदि की जानकारी प्रदान की जाए।

विभिन्न विद्वानों ने जनसंख्या शिक्षा के भिन्न भिन्न प्रकार के उद्देश्य निश्चित किए हैं ।

राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसन्धान एवं प्रशिक्षण परिषद, दिल्ली राष्ट्रीय सेमिनार तथा सम्मेलन में जनसंख्या शिक्षा के उद्देश्यों का प्रतिपादन किया है जिनका विवरण यहां दिया गया है-

जनसंख्या शिक्षा के उद्देश्यों को राष्ट्रीय सेमिनार द्वारा सार रूप से इस प्रकार अंकित किया गया है – ‘‘जनसंख्या शिक्षा के उद्देश्य – छात्रों को यह समझाने की योग्यता प्रदान करना चाहिए कि परिवार का सीमा निर्धारण राष्ट्र में उत्तम जीवन को सुविधाजनक बना सकता है और परिवार का छोटा आकर प्रत्येक परिवार के सदस्य के जीवन स्तर के उन्नयन में अतिशय योगदान दे सकता है’’।

जनसंख्या शिक्षा के उद्देश्य बहुआयामी हैं , यहाँ प्रमुख उद्देश्यों का उल्लेख किया गया है।

1. **जनसंख्या वृद्धि की गति से अवगत कराना:** इसके लिए अपने देश स्तर तथा विश्व स्तर की जनसंख्या का अध्ययन किया जाता है, जनसंख्या सम्बन्धी आँकड़ो को दिया जाता है जिससे जनसंख्या वृद्धि की दर तथा वर्तमान स्थिति का बोध कराया जाता है।

2. जनसंख्या वृद्धि और विकास की गति के मध्य सम्बन्ध स्थापित करना: जनसंख्या वृद्धि और विकास की गति एक दूसरे को प्रभावित करते हैं । दोनो में परस्पर सम्बन्ध होता है। दोनों के मध्य घटकों की जानकारी से सम्बन्ध स्थापित करते हैं।

3. जनसंख्या वृद्धि के कुप्रभाव से अवगत कराना: जनसंख्या वृद्धि का प्रभाव मनुष्य का जीवन मापन तथा स्तर, समाज, राष्ट्र तथा विश्व पर किस प्रकार प्रभाव पड़ रहा है। समाजिक जीवन, आर्थिक या सांस्कृतिक जीवन किस प्रकार प्रभावित हो रहा है इन तथ्यों की जानकारी देना।

4. मनुष्य तथा पारिवारिक जीवन को सुखी तथा समृद्धिशाली बनाना: परिवार में अच्छी शिक्षा दीक्षा, अच्छी देखभाल, स्वास्थ्य तथा उनकी आवश्यकताओं पर ध्यान देकर पूर्ति करना है। जनसंख्या शिक्षा का अर्थ जन्मदर को कम करना ही नहीं है, अपितु परिवार के बच्चों के जीवन को सुखी एवं समृद्धशाली बनाना है।

5. परिवार नियोजन कार्यक्रमों से सम्बन्ध स्थापित करना: परिवार नियोजन का जनसंख्या शिक्षा में महत्वपूर्ण स्थान है। अतः जनसंख्या शिक्षा प्राथमिक कार्य है। परिवार नियोजन की विधियों एवं कार्यक्रमों के बारे में जानकारी देना।

6. **जीवन स्तर को ऊँचा उठाना:** जनसंख्या शिक्षा का मुख्य उद्देश्य व्यक्ति के जीवन स्तर को ऊँचा उठाना है और उसमें गुणात्मक परिवर्तन लाना है यह तभी सम्भव होगा जब परिवार को सीमित रखा जाये और जनसंख्या को शिक्षा के लक्ष्यों के प्रति जागरूकता रखा जायें।

7. उत्पाद क्षमता से सम्बन्ध स्थापित करना: जनसंख्या वृद्धि के कारण खाद्यान्न एवं अन्य जीवनोपयोगी सामाग्रियों की आवश्यकता अपेक्षाकृत बढ़ जाती है। अतः व्यक्ति को अपनी उत्पादक क्षमता वृद्धि करनी चाहिये, जिससे वे अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति आसानी से कर सकें।

8. जनसंख्या वृद्धि की गति राकने के उपायों के प्रति जानकारी देना: जनसंख्या में हो रही वृद्धि को राकने के लिये अनेक साधन एवं तौर तरीको का प्रयोग किया जा रहा हैं। इनकी जानकारी प्रत्येक के लिये आवश्यक है अतः इसके रोकने के उपायों पर बल देना चाहिये।

9. जनसंख्या एवं पर्यावरण से सम्बन्ध स्थापित करना: जनसंख्या वृद्धि का पर्यावरण पर किस सीमा तक प्रभाव पड़ता है इसके क्या क्या दुष्परिणाम हो रहे है आदि बातों की जानकारी करना इसका लक्ष्यय होना चाहिए।

10. मानवीय मूल्यों का विकास करना: मानवीय मूल्यों मानव जीवन को किस सीमा तक प्रभावित करते है?इससे व्यत्कि कैसे आदर्श एवं संयमी जीवन की ओर उन्मुख हो सकता है?इसकी जानकारी देना जनसंख्या शिक्षा का अभीष्ट लक्ष्य होना चाहिये।

11.जीवन में गुणवत्ता विकास करना: व्यक्ति अपने जीवन में किस प्रकार स्वस्थ रहे, दाम्पत्य जीवन को किस प्रकार सुखी बनाया जा सके और जीवन के विविध पक्षो में गुणवत्ता लायी जाये।

12.जीवन शिक्षा के अन्य पहलुओं से अवगत करना: छात्रों को योजनाओ सम्बन्धी जीतियो, कानून, कार्यक्रम तथा मूल्यकन आदि के सम्बन्ध में जानकारी देना। जन संचार माध्यमों, रेडियो तथा दूरदर्शन के कार्यक्रमों की जानकारी देना। आत्म निर्भरता, विवाह बन्धन आदि के विषय में भी जानकारी दी जायें।

अभ्यास प्रश्न

बहुविकल्पीय प्रश्न

1. जनसंख्या शिक्षा का मुख्य उद्देश्य है -

    1. छात्रों को जनसंख्या वृद्धि से जागृत कराना।
    2. छात्रों को जनसंख्या वृद्धि के प्रति संवेदनशील करना
    3. दोनो ही
    4. उपरोक्त कोई नहीं

2. जनसंख्या शिक्षा की व्यवस्थ कीजिए -

    1. प्रथामिक स्तर पर 2. उच्च शिक्षा स्तर पर
    3. जनसंख्या नीतिया दोषी 4. उपरोक्त सभी

13.6 जनसंख्या शिक्षा का महत्व व आवश्यकता

यह स्वाभाविक प्रश्न उठता है कि जनसंख्या शिक्षा की क्या आवश्यकता है? इसका उत्तर स्पष्ट है कि जनसंख्या वृद्धि ने पर्यावरण की गुणवत्ता को अधिक प्रभावित किया है, जिससे मनुष्य तथा समाज को अनके प्रकार की कठनाईयों एवं समस्याओं का सामना करना पड़ रहा है। कहा जाता है कि पीने का पानी पीने योग्य नहीं रहा है, हवा श्वास लेने योग्य नहीं रहा तथा भोजन खाने योग्य नहीं रहा है तथा पर्यावरण में असुन्तलन आ गया है।

शिक्षाविद् तथा जनसंख्या अध्ययनवेत्ता यह अनुभव करने लगे हैं कि यदि जनसंख्या वृद्धि पर नियंत्रण नहीं किया गया तो भुखमरी, अकाल, महामारी के प्रकोपों को नहीं रोका जा सकता है। राष्ट्रीय स्तर पर अनेक कार्यक्रमों का आयोजन किया गया है जिसमें शिक्षकों के प्रशिक्षण से जनसंख्या की जागृति पैदा की जाएगी।

इस प्रकार जनसंख्या शिक्षा के कार्यक्रमों की महत्ता और आवश्यकता निम्न प्रकार से है -

1. छोटा परिवार सदैव सुखी होता है, अतः यदि जनसंख्या शिक्षा द्वारा बालकों एवं बालिकाओं में यह विचार समविष्ट कर दिया जाय तो वे अपने आप परिवार नियोजन करेंगे।

2. यदि जीव विज्ञान के अध्ययन को आवश्यक मानकर पाठ्यक्रम में स्थान दिया जा सकता है तो मानव जनसंख्या के अध्ययन को आवश्यकता मानकर पाठ्यक्रम में स्थान दिया जाना चाहिए।

3. भारत में विवाह की आयु अन्य अनेक देशों की तुलना में बहुत कम है। अतः युवकों एवं युवतियों को विवाह से पूर्व जनसंख्या वृद्धि से उत्पन्न होने वाली समस्याओं से अवगत कराया जाना आवश्यक है।

4. प्रत्येक देश पर अपने नागरिकों के कल्याण, स्वास्थ एवं पूर्ण विकास का उत्तरदायित्व है। वह अपने इस उत्तरदायित्व का निर्वाह तभी कर सकता है जब वह उनको जनसंख्या शिक्षा द्वारा जनसंख्या वृद्धि के कुप्रभावों से परिचित कराये।

5. जनसंख्या की द्रुत गति से वृद्धि देश की आर्थिक प्रगति, समाजिक उन्नति एवं व्यक्तियों के रहन सहन के स्तर के उन्नयन में उल्लेखनीय अवरोध उपस्थित करती है। अतः जनसंख्या शिक्षा द्वारा बालकों एवं बालिकाओं को इन तथ्यों से परिचित किया जाना आवश्यक है।

उपरोक्त तर्कों के आधार पर हम डा0 लल्ला व डा0 मूर्ति के शब्दो में बलपूर्वक कह सकते हैं कि कोई भी बुद्धिमान व्यक्ति आधुनिक समय के सन्दर्भ में जनसंख्या शिक्षा के महत्व एवं आवश्यकता की अपेक्षा नहीं कर सकता।“

जनसंख्या शिक्षा की आवश्यकता निम्नलिखित कारणों से भी है -

1. विकासशील देशों की एक विशेष बात यह है कि उनकी 40 से 45 प्रतिशत जनसंख्या 15 वर्ष की कम आयु की है। भारत में ऐसी जनसंख्या 42 प्रतिशत है जनसंख्या की वृद्धि की दर रोकने के लिए इस विशाल जनसमूह की जनांकिकीय आचरण को प्रभावित करना आवश्यक है। अतः विद्यालयों तथा कालेजों की जनसंख्या शिक्षा को प्रदान करके ही ऐसा किया जा सकता है।

2. अधिकांश विकासशील देशों ने सन्तति नियन्त्रण के लिए राष्ट्रीय जनसंख्या नीति तथा अन्य कार्यक्रम बनाये हैं। अतः परिवार नियोजन नीति तथा सन्तति नियन्त्रण के सम्बन्ध में जनसंचार के विभिन्न साधनों - समाचार पत्रों, पत्र पत्रिकाओं, रेडिया प्रसारणों, फिल्मों, विज्ञापनों, इश्तहारों आदि का प्रयोग किया जा सकता है। स्पष्टतया इनसे पाठकों या श्रोताओं को दूर नहीं रखा जा सकता, साथ ही बच्चे भी उससे दूर नहीं रह सकते हैं। इस प्रकार संयोगवश या आकस्मिक ढंग से प्राप्त जानकारी से हानि हो सकती है। इसलिए जनसंख्या के लक्षणों की जनसंख्या शिक्षा के एक सुव्यवस्थित कार्यक्रम के माध्यम से सुव्यवस्थित रूप से जानकारी प्रदान करने की आवश्यकता है।

3. छात्रों की जनसंख्या की तीव्र गति से वृद्धि से देश की समाजिक उन्नति एवं आर्थिक प्रगति पर पड़ रहे कुप्रभावों में जनसंख्या शिक्षा द्वारा अवगत कराया जाना आवश्यक है।

4. यदि जनसंख्या का विस्फोट न होता और यदि सन्तति दर को कम करने के लिए प्रारम्भ किए गये कार्यक्रम के शीघ्र परिणाम न निकले होते तो विद्यालय में जनसंख्या शिक्षा की आवश्यकता प्रतीत न होती। वास्तविकता यह है कि जनसंख्या की जटिल समस्याओं का समाधान करने तथा परिवार नियोजन के कार्यक्रमों को सफल बनाने एवं उनके लक्ष्यों की प्रप्ति के लिए विद्यालयों में जनसंख्या शिक्षा की आवश्यकता है।

5. जनसंख्या की समस्या एक दीर्घकालीन समस्या है। अतः प्रत्येक पीढ़ी को इसकी मूल बातों को समझना अनिवार्य है। इन मूल बातों की जानकारी प्रदान करने के लिए जनसंख्या शिक्षा प्रदान करना आवश्यक है जिससे यह प्रत्येक नई पीढ़ी के लिए एक प्रेरणादायक शक्ति के रूप में निरन्तर कार्य कर सके।

6. जनसंख्या शिक्षा एक ऐसा साधन है कि जिसके माध्यम से युवा पीढ़ी को समकालीन जीवन की वास्तविकता का सामना करने की शिक्षा देकर सक्रिय नागरिक बनाया जा सकता है। और उनको 20 वी सदी में जनसंख्या की बढ़ोत्तरी के परिणामों तथा तथ्यों से अवगत कराकर राष्ट्रीय विकास के कार्यक्रम को सफल बनाने के लिए तत्पर बनाया जा सकता है। अतः इस दृष्टि से भी जनसंख्या शिक्षा की आवश्यकता है।

7. हमारे देश में जनसंख्या शिक्षा की आवश्यकता ग्रामीण विद्यालयों में अधिक हैं क्योंकि भारत की अधिकांश जनसंख्या ग्रामों में रहती है और दूसरे ग्रामीण क्षेत्रों में शहरी क्षेत्रों की अपेक्षा जन्म दर अधिक है।

17.7 जनसंख्या शिक्षा की प्रकृति

जनसंख्या शिक्षा की सार्थकता के विषय में एनसर्ट के कार्यक्रम को मुख्य स्थान दिया गया है -

1. छात्रों को आधुनिक संसार की जनसंख्या विस्फोट की घटना से अवगत कराना|

2. जनसंख्या वृद्धि के दवाब का व्यक्ति, परिवार, समाज, देश तथा विश्व पर अनुभव करना।

3. परिवार का आकार तथा रहने के स्तर को सुधारना

4. जनसंख्या नियन्त्रण-तन्त्र तथा दुर्भिक्ष, अपराध तथा समाजिक संघर्ष, जन्म एवं मृत्यु दर, देश की शान्ति तथा सुरक्षा, भोजन, वस्त्र, मकान, रोजगार तथा शिक्षा आदि के सन्दर्भ में

इसलिए जनसंख्या शिक्षा की प्रकृति का स्पष्टीकरण इस प्रकार से किया गया है - जनसंख्या शिक्षा का उद्देश्य, प्रकृति, छात्रों को यह समझने की योग्यता प्रदान करना कि परिवार के आकार को नियन्त्रित किया जा सकता है, जनसंख्या का सीमा निर्धारण राष्ट्र में उत्तम जीवन को सुविधाजनक बना सकता है और परिवार का छोटा आकार प्रत्येक परिवार के सदस्य के जीवन स्तर के उन्नयन में अतिशय योगदान दे सकता है।

जनसंख्या शिक्षा क्यों ?

प्रश्न उठता है – जनसंख्या शिक्षा क्यों दी जाए? इसका उत्तर स्पष्ट है। आज जनसंख्या इतनी तेजी से बढ़ रही है कि भौतिक साधनों का विकास पीछे छूट गया है। भैतिक साधनों -अन्न, वस्त्र, आवास तथा जनसंख्या के मध्य असन्तुलन हो गया है। ये समस्याएँ, शोषण, उत्पीड़न को बढ़ावा दे रही है। समाजिक अन्याय बढ़ रहा है।

अतः इस परिस्थिति से निपटने के लिए शिक्षा शास्त्री तथा जनसंख्याविद् यह अनुभव करने लगे हैं कि इस समस्या को वैचारिक क्रान्ति का रूप प्रदान करना होगा। सरकारी अभिकरणों में एन्सर्त तथा गैर सरकारी अभिकरणों में फैमिली प्लानिंग एसोसिएशन, आल इण्डिया फैडरेशन ऑफ एजुकेशनल एशोसियेशन आदि संस्थाए जनसंख्या हेतु कार्य कर रही हैं।

यह कार्यक्रम 1. विद्यालयों, महाविद्यालयों अन्य शिक्षा संस्थाओं 2. जिन्होने विद्यालय छोड़ दिया है या शिक्षा पाई ही नहीं है तथा 3. शिक्षक - प्रशिक्षकों एवं शिक्षकों, जो स्कूल प्रशिक्षण मार्ग दर्शन आदि के द्वारा शिक्षा देते हैं।

13.8 जनसंख्या शिक्षा की अवधारणा -

जनसंख्या की वृद्धि और उसके दूरगामी परिणामों के प्रति सचेत रहने का विचार सन् 1960 में विकसित हुआ है। अभी तक इस अवधारणा को स्पष्ट रूप से परिभाषित तथा व्यस्थित करने का प्रयत्न किया

गया है। इसको शिक्षा की प्रक्रिया से जोड़ने का प्रयत्न किया गया है। हॉजर, ने इसकी आवश्यकता पर बल देते हुए कहा है कि अब समय आ गया है कि बीसवीं सदी के स्कूलों के पाठ्यक्रम में बीसवीं सदी की जनसंख्या की प्रवृत्ति तथा परिणामों का अध्ययन कराया जाए।

भारत में प्रोफेसर स्लोन वेलैण्ड ने जनसंख्या शिक्षा के विचार को मूर्त रूप दिया। प्रो0 स्लोन कोलम्बिया विश्वविद्यालय से सम्बन्धित हैं। उन्होंने जनसंख्या शिक्षा के विषय में कहा है – संख्या चाहे जो भी हो, हमारा संबंध औपचारिक शिक्षा के अन्तर्गत निर्देशन प्रणाली में परिवार नियोजन की सार्वजनिक नीति, परिवार तथा राष्ट्र, परिवार नियोजन की वांछनीयता आदि को सम्मिलित किया जाऐ। साथ ही जनसंख्या का आर्थिक तथा समाजिक विकास, परिवार के आकार तथा परिवार के गुणों की गतिशीलता का भी अध्ययन किया जाना चाहिए। अतः किसी विशेष समाज में भाषाशास्त्रीय प्रावधान में विद्यालय स्तर पर विशेष शिक्षण विधि की आवश्यकता विकसित करना है।

बर्लेसन ने जनसंख्या सचेतना के रूप में जनसंख्या शिक्षा को स्वीकार किया है। विद्यालय को इसका साधन बताते हुए उसने कहा है कि जनसंख्या शिक्षा के परिणामस्वरूप शिक्षा पर बढते व्यय को और भी बढ़ाने का साधन बनाती है। शिक्षा जनसंख्या समस्या से सम्बन्धित ज्ञान के प्रति चेतना है। इसके दो उद्देश्य हैं 1. शिक्षा शास्त्री तथा उनसे सम्बन्धित लोग जनसंख्या के महत्व, विस्तार की हानि तथा प्रकृति को समझें तथा 2. छात्र तथा अध्यापक अपनी अभिवृत्तियों के स्वरूप को समझें ।

जनसंख्या शिक्षा, उच्च शिक्षा की संस्थाओं में 1. पाठ्यक्रम में 2. समाज के विभिन्न वर्गों में चेतना की समस्या है। राष्ट्रीय एकता, प्रौढ़ शिक्षा, ग्राम विकास, पर्यावरण, कानूनी शिक्षा, जनता के लिए विज्ञान आदि को रखा जाना चाहिए। जनसंख्या शिक्षा को पाठ्य सहगामी क्रियाओं में भी सम्मिलित किया जाना चाहिए ।

विश्वविद्यालय अनुदान आयोग ने उच्च शिक्षा संस्थाओं में जनसंख्या शिक्षा को आरम्भ करने की आवश्यकता अनुभव की है। अब यह शिक्षा हमारी शिक्षा प्रणाली का आधार बन चुकी है। औपचारिक एवं अनौपचारिक शिक्षा माध्यमों द्वारा यह शिक्षा प्रणाली को नई दिशा प्रदान करेगी।

13.9 जनसंख्या शिक्षा का विकास

जनसंख्या शिक्षा का विचार आधुनिक युग की देन है। जहां तक जनसंख्या वृद्धि से होने वाले दुष्परिणामों की बात है इस ओर सर्वप्रथम ध्यान 18 वी सदीं में इंग्लैण्ड के एक पादरी माल्थस का गया था। उनके बाद अर्थशास्त्रीयों ने इस समस्या का अध्ययन शुरू किया और यह अर्थशास्त्र की विषय वस्तु बन गई।

पर जब संसार की जनसंख्या अति तीव्र गति से बढ़ने लगी जो उसके दुष्परिणाम सामने आने लगे अतः अर्थशास्त्रियों के साथ साथ राजनीतिज्ञों का ध्यान भी जनसंख्या नियन्त्रण की ओर गया। इस क्षेत्र में सर्वप्रथम 20 वी सदी के छठे दशक में अमेरिकी अर्थशास्त्रियों, राजनितिज्ञों और शिक्षा आयोजकों ने कदम रखा। उन्होंने जनसंख्या नियन्त्रण के लिए बच्चों को प्रारम्भ से ही जनसंख्या सम्बन्धी ज्ञान कराने और उसमें जनसंख्या नियंत्रण के प्रति अभिवृति का विकास करने पर बल दिया, कोलंबिया विश्वविद्यालय के प्रोफेसर स्लोन आर बैलैझडेन ने इसे जनसंख्या शिक्षा की संज्ञा दी।

जहाँ तक भारत में जनसंख्या वृद्धि की बात है इस ओर हमारा ध्यान बहुत पहले गया था और स्वतंत्र होते ही हमने इसके नियन्त्रण के लिए प्रयास भी शुरू कर दिये थे। प्रथम पंचवर्षीय योजना (1951 – 56) के दौरान 1952 में हमारे देश में परिवार नियोजन कार्यक्रम शुरू किया गया। 1961 की जनगणना ने सरकार को और सावधान कर दिया और उसने परिवार नियोजन सम्बन्धी प्रचार कार्य को गति देना शुरू किया। पर जनसंख्या नियन्त्रण के लिए जनसंख्या शिक्षा पर सर्वप्रथम विचार 1969 में फैमली प्लानिंग एसोशियेशन आफ इण्डिया द्वारा बम्बई में आयोजित राष्ट्रीय सम्मेलन में किया गया। इस सम्मेलन में जनसेख्या शिक्षा के सम्बन्ध में निम्नलिखित सुझाव सामने आए -

1. राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसन्धान एवं प्रशिक्षण परिषद में जनसंख्या शिक्षा प्रकोष्ठ का गठन किया जाए जो पूरे देश के लिए जनसंख्या शिक्षा के स्वरूप और उसकी कार्यविधियों को निश्चित करे और इस क्षेत्र में केन्द्र तथा प्रान्तीय सरकारों का मार्गदर्शन करे।

2. सभी स्तर की विद्यालयी शिक्षा और शिक्षक शिक्षा पाठयक्रमों में जनसंख्या शिक्षा को स्थान दिया जाय।

3. जनसंख्या शिक्षा की सामग्री तैयार की जाय, पुस्तकें तैयार की जाए और उसके पढ़ाने तथा मूल्यांकन की विधियों को विकसित किया जाए।

4. यह शिक्षा इस प्रकार की हो कि बालक यह समझे कि छोटा परिवार सुख का सार होता है। परिवार के आकार को निश्चित किया जा सकता है और परिवार, समुदाय, राष्ट्र और समूचे संसार के हित के लिए परिवार का आकार छोटा होना अति आवश्यक है।

इस सम्मेलन के सुझाव पर राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसन्धान एवं प्रशिक्षण परिषद में जनसंख्या प्रकोष्ट का गठन किया गया इस प्रकोष्ट ने 1971 में जनसंख्या शिक्षा पर दिल्ली में दूसरे राष्ट्रीय सम्मेलन का आयोजन किया। इस सम्मेलन में निम्न निर्णय लिये गये -

1. प्रथमिक स्तर पर सबसे अधिक बच्चे पढते हैं उन्हें सुखी परिवार के बारे में सामान्य जानकारी दी जाये। यह जानकारी भाषा और समाजिक विषयों में तत्सम्बन्धी प्रकरण जोड़े जाएँ और बच्चों को जनसंख्या वृद्धि के दुष्परिणामों से अवगत कराया जाय।

2. उच्च प्राथमिक स्तर पर आते आते बच्चे और अधिक समझदार हो जाते हैं । इस स्तर पर भाषा एवं सामाजिक विषयों के साथ साथ जीव विज्ञान में भी तत्सम्बन्धी प्रकरण जोड़े जाएँ और बच्चों को जनसंख्या वृद्धि के दुष्परिणामों से अवगत कराया जाय।

3. माध्यमिक स्तर पर बच्चों को भाषा इतिहास भूगोल, नागरिकशास्त्र, अर्थशास्त्र, जीव विज्ञान और गणित विषयों के साथ साथ जनसंख्या शिक्षा दी जाय।

4. सभी शिक्षक पाठयक्रमों में जनसंख्या शिक्षा की पाठय वस्तु एवं शिक्षण विधियों का समावेश किया जाए और एम.एड. स्तर पर इसे विशेष अध्ययन के रूप में जोड़ा जाए।

5. विद्यालय से बाहर के युवकों को जनसंख्या के प्रति सचेत करने हेतु विद्यालय सामुदायिक केन्द्रों के रूप में कार्य करे।

6. एन.सी.ई.आर.टी. को सबके लिए शीघ्रातिशीघ्र पाठ्यक्रम तैयार करना चाहिए और प्रान्तीय शिक्षा संस्थानों के सहयोग से उसे सभी प्रान्तो में लागू करना चाहिए।

7. विभिन्न प्रान्तों के माध्यमिक बोर्डों को भी इस कार्य में सहयोग प्रदान करना चाहिए।

इन सुझावों के आलोक में हमारे देश में जनसेख्या शिक्षा के क्षेत्र में कार्य होने लगा। 1974 में एन० सी० ई० आर० टी० ने जनसंख्या शिक्षा का पाठ्यक्रम तैयार किया और उसे केन्द्र तथा प्रान्तीय सरकारों के पास भेजा। कुछ प्रान्तीय सरकारों इसे अपनी सुविधा के अनुसार लागू भी किया। 1980 में एन० सी० ई० आर० टी० ने इस सम्बन्ध में एक सर्वेक्षण किया और यह पाया कि कुछ प्रान्तो में प्राथमिक और माध्यमिक स्तर पर भाषा, इतिहास, भूगोल, नागरिकशास्त्र, जीव विज्ञान और गृह विज्ञान के साथ कुछ ऐसे प्रकरण जोड़े दिए गए हैं जिनसे बच्चों की जनसंख्या वृद्धि के दुष्परिणामों के प्रति जागरूक किया जा सकता है और यह भी पाया गया कि कुछ प्रान्तों के शिक्षा पाठयक्रमों में भी इसका समावेश कर दिया गया है। परन्तु इस सबसे बच्चों की मानसिकता पर क्या प्रभाव पड़ा इस सम्बन्ध में कुछ ज्ञात नहीं हो सका है।

17.10 जनसंख्या वृद्धि समस्या व उनके समाधान

जनसंख्या शिक्षा की समस्याएं असाधरण रूप से जटिल और उलझी हुई है। इसका कारण यह है कि जनसंख्या शिक्षा का क्षेत्र अत्यधिक व्यापक एवं विस्तृत है। इसके अन्तर्गत जनसंख्या की वृद्धि की गति, वितरण एवं स्वरूप और व्यक्ति, परिवार, समाज, राष्ट्र एवं विश्व पर पड़ने वाले उनके मुखर प्रभावों का अध्ययन सम्मिलित है। इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए हम जनसंख्या शिक्षा की सार्वभौमिक समस्याओं और उनके समाधान के उपायों का निम्नांकित शीषकों के अन्तर्गत वर्णन किया जा रहा है यथा-

1. **समस्या: छात्रों के लिए जनसंख्या शिक्षा सम्बन्धी साहित्य का अभाव:** सभी स्तरों के विद्यालयों में अध्ययन करने वाले छात्रों के लिए जनसंख्या शिक्षा सम्बन्धी साहित्य का अत्यधिक अभाव है। इस अभाव के फलस्वरूप उनको जनसंख्या वृद्धि के वास्तविक आँकड़ो और व्यक्ति, समाज एवं राष्ट्र के जीवन पर इस वृद्धि के प्रभावों का पूर्ण ज्ञान नहीं हो पाता है। यही कारण है कि विद्यालय स्तर पर जनसंख्या शिक्षा का प्रसार नहीं हो पा रहा है।

समाधान: पर्याप्त व उपयुक्त साहित्य की व्यवस्था: विद्यालय स्तर पर जनसंख्या शिक्षा के प्रसार को गति प्रदान करने के लिए पर्याप्त एवं उपयुक्त साहित्य की यथाशीघ्र व्यवस्था की जानी आवश्यक है। इस साहित्य का निर्माण सरल एवं सुबोध भाषा वाली पुस्तकों के रूप में किया जाना चाहिए। ताकि प्राथमिक एवं माध्यमिक विद्यालयों के छात्रों को उनका अध्ययन करके, ज्ञान प्राप्त करने में किसी प्रकार की कठिनाई का अनुभव न हो। इसके अतिरिक्त, समाजिक विज्ञान की पुस्तको में जनसंख्या शिक्षा से सम्बन्धित विषयों को स्थान दिया जाना चाहिए।

2. **समस्या: शिक्षको में जनसंख्या सम्बन्धी ज्ञान का अभाव:** सभी स्तरों के विद्यालयों के शिक्षकों में जनसंख्या शिक्षा सम्बन्धी ज्ञान का पर्याप्त अभाव है। इसके तीन मुख्य कारण हैं -

पहला, अभी तक जनसंख्या शिक्षा पर विद्वानों द्वारा बहुत कम पुस्तकों का लेखन किया गया है। अतः शिक्षकों को जनसंख्या शिक्षा की पर्याप्त सामग्री उपलब्ध नहीं हो पाती है।

दूसरा, सेवारत शिक्ष्कों को जनसंख्या शिक्षा सम्बन्धी ज्ञान प्रदान करने के लिए केन्द्रीय सरकार, राज्य सरकारों, शिक्षा विभागों एवं विश्वविद्यालयों द्वारा कोई संगठित योजना संचालित नहीं की गई हैं।

तीसरा, कालेजों, विश्वविद्यालयों एवं शिक्षक- प्रशिक्षण संस्थाओं के पाठ्यक्रमों में जनसंख्या शिक्षा नामक विषय को कोई स्थान नहीं दिया गया है।

इन सब कारणों के फलस्वरूप सेवारत एवं नव प्रशिक्षित शिक्षकों में जनसंख्या शिक्षा के समुचित ज्ञान के होने की आशा करना कल्पना मात्र है। समुचित ज्ञान न होने के कारण वे छात्रों को जनसंख्या संबन्धी बातों का ज्ञान प्रदान करने में असमर्थ रहते हैं।

समाधान - शिक्षकों को जनसंख्या शिक्षा समबन्धी ज्ञान देने की व्यवस्था:- यदि हम शिक्षकों से यह आशा करते हैं कि ये छात्रों को जनसंख्या शिक्षा सम्बन्धी तथ्यों की जानकारी प्रदान करें तो यह परम आवश्यक है कि स्वयं शिक्षकों को इस ज्ञान से सम्पन्न करने के लिए उसकी व्यवस्था की जाये इस कारण व्यवस्था के सम्बन्ध में दो सुझाव दिए जा सकते हैं यथा पहला, राज्यों या शिक्षा विभागों द्वारा जनसंख्या शिक्षा के केन्द्र स्थापित किए जायें और विद्यालयों द्वारा अपने सेवारत अध्यापकों को वहां निश्चित अवधि तक रहने के लिए पूर्ण वेतन पर अवकाश दिया जाये। इन केन्द्रों में अध्यापकों के लिए व्याख्यानों, विचार गोष्ठियों और अध्ययन की सभी सुविधाओं का प्रबन्ध किया जाए।

दुसरा कालेजों, विश्वविद्यालयों एवं शिक्षक, प्रशिक्षण संस्थाओं के पाठ्यक्रमों में जनसंख्या शिक्षा के विषय को सम्मिलित किया जाये।

यदि इन दोनो सुझावों को व्यावहारिक रूप प्रदान कर दिया जाए तो सेवारत एवं नव प्रशिक्षित दोनों प्रकार के शिक्षकों को जनसंख्या शिक्षा का पर्याप्त ज्ञान हो जायेगा। अतः वे अपने छात्रों को इस ज्ञान से लाभान्वित कर सकेंगे।

3. समस्या: विद्यालयों में जनसंख्या शिक्षा सम्बन्धी उपकरणों का अभाव:- हमारे विद्यालयों में जनसंख्या शिक्षा सम्बन्धी उपकरणों का अभाव है। ऐसे विद्यालय के दर्शन दुर्लभ हैं जो इन उपकरणों से पूर्णतया सुसज्जित हों। सामान्य शिक्षा के उपकरणों का संग्रह करने के लिए जितना प्रयास किया जाता हैं उसका शतांश प्रयास भी जनसंख्या शिक्षा सम्बन्धी उपकरणों को उपलब्ध करने के लिए नहीं किया जाता हैं। सम्भवतः इस कारण इन उपकरणों का महँगा होना है। पर यदि प्रतिवर्ष थोड़ा थोड़ा धन व्यय करके इन उपकरणों का संचय किया जाय तो इनका अभाव अवश्य अदृश्य हो सकता है। किन्तु वस्तु स्थिति यह है कि इनके प्रति लेशमात्र भी ध्यान नहीं दिया जा रहा है परिणामतः हमारे विद्यालयों में नितान्त अभाव हैं और इस अभाव का जनसंख्या शिक्षा की प्रगति पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ रहा है।

समाधान - उपकरणों की व्यवस्था:- विद्यालय प्रबन्धकों को यह समझना चाहिए कि जितने आवश्यक सामान्य शिक्षा के उपकरण हैं उतने ही आवश्यक जनसंख्या शिक्षा के उपकरण भी हैं। इन उपकरणों की

व्यवस्था के लिए सतत् चेष्टा करनी चाहिए। इन उपकरणों में निम्नलिखित पर विशेष ध्यान दिया जाना चाहिए।

1. जनसंख्या शिक्षा के लिए उपयोगी फिल्म और श्रव्य दृश्य सामग्री।

2. छात्रों को अपने देश एवं विश्व की जनसंख्या सम्बन्धी जानकारी प्रदान करने वाले ग्राफ, चार्ट, चित्र, माडल आदि

4. **समस्या - जनसंख्या सम्बन्धी शोध कार्य का अभाव:-** हमारे देश में जनसंख्या सम्बन्धी शोधकार्य अभी प्रारम्भिक अवस्था में हैं। फलस्वरूप विद्वानों एवं सुशिक्षित व्यक्तियों को भी जनसंख्या वृद्धि के प्रभावों एवं परिणामों का पर्याप्त ज्ञान नहीं है। अतः सामान्य रूप से जनसंख्या शिक्षा के विषय में अभी तक अधिकांश व्यक्तियों में विविध प्रकार की भ्रान्तियाँ हैं। यही भ्रान्तियाँ जनसंख्या शिक्षा के विकास में बाधा उपस्थित कर रहीं हैं।

समाधान - शोधकार्य की व्यवस्था:- व्यक्तियों को जनसंख्या वृद्धि के प्रभावों एवं परिणामों से भली भाँति अवगत करने के लिए जनसंख्या सम्बन्धी शोधकार्य की उत्तम व्यवस्था की जानी अनिवार्य हैं। यह कार्य मुख्यतः निम्नलिखित प्रश्नों से सम्बन्धित होना चाहिए-

1. विद्यालयों में जनसंख्या शिक्षा के लिए अनुकूल वातावरण का निर्माण किस प्रकार किया जा सकता है?

2. विद्यालयों की प्रबन्ध समितियों एवं शिक्षा विभागों द्वारा जनसंख्या शिक्षा के प्रसार में कितना और किस प्रकार का योगदान दिया जा सकता है?

3. शिक्षकों को जनसंख्या शिक्षा सम्बन्धी ज्ञान से पूर्णरूपेण सम्पन्न करने के लिए किस प्रकार के कार्यक्रम उपयोगी सिद्ध हो सकते है?

4. जनसधारण में जनसंख्या शिक्षा की आवश्यकता एवं उपयोगिता के विषय में किन उपायों द्वारा अधिकाधिक विश्वास उत्पन्न किया जा सकता है?

5. **समस्या: अशिक्षित, अर्द्धशिक्षित अभिभावकों द्वारा जनसंख्या शिक्षा का विरोध:-** एक अध्ययन के फलस्वरूप यह ज्ञात हुआ है कि अशिक्षित एवं अर्द्ध शिक्षित अभिभावक विद्यालयों में जनसंख्या शिक्षा दिए जाने के विरोधी हैं| उनका विरोध निम्नलिखित चार कारणों पर अधारित हैं-

1. जनसंख्या शिक्षा, परिवार नियोजन का ही दूसरा नाम है। अतः इसका विद्यालय शिक्षा से कोई सम्बन्ध नहीं है।

2. जनसंख्या शिक्षा का सम्बन्ध यौन शिक्षा से है। अतः यह शिक्षा बालकों एवं बालिकाओं के नैतिक चरित्र को भ्रष्ट कर देगी।

3. जनसंख्या शिक्षा का सम्बन्ध जनसंख्या विषयक तथ्यों एवं आँकड़ो से है। ये तथ्य एवं आँकड़े इतने कठिन है कि अल्प आयु के बालक इनको आत्मसात नहीं कर सकते हैं।

4. जनसंख्या शिक्षा का विचार अन्य देशों से ग्रहण किया गया है। और उन्ही से प्रभावित होकर इस शिक्षा को विद्यालयों में स्थान दिया जा रहा हैं। ऐसा किया जाना सर्वथा अनुचित हैं।

समाधान: अभिभावकों के विरोध की समाप्ति:- विद्यालयों में जनसंख्या शिक्षा के कार्यक्रम को सफल बनाने के लिए अशिक्षित एव अर्द्धशिक्षित अभिभावकों के विरोध को समाप्त किया जाना चाहिए। इस लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए अग्रलिखित दो उपायों का प्रयोग किया जा सकता है-
पहला - पुस्तिकाओं, समाचारपत्रों, फिल्म प्रदर्शनी और विद्वानों के व्याख्यनों द्वारा जनसंख्या शिक्षा की धारणा का स्पष्टीकरण किया गया है।

दूसरा –विद्यालयों द्वारा जनसंख्या शिक्षा के दिवसों, समारोहों आदि का आयोजन किया जाय और अभिभावकों को उनमें आमन्त्रित करके शिक्षा सम्बन्धी बातों से परिचित किया जाए।

ये उपाय विलम्बकारी और कुछ सीमा तक खर्चीले भी हैं। पर यदि धैर्य और लगन से कार्य किया जाय जो इन उपायों द्वारा अभिभवकों में जनसंख्या शिक्षा सम्बन्धी उचित धारणा का विकास करके उनके विरोध का अन्त किया जा सकता है।

13.11 सारांश

इसमें दो मत नहीं कि शिक्षा समाजिक परिवर्तन का मूल साधन है। पर कुछ सामाजिक परिवर्तनों के लिए शिक्षा से अधिक महत्व सामाजिक एवं राजनैतिक क्रान्तियों का होता है। जनसंख्या नियन्त्रण विचार नहीं कार्य है। इसके लिए इस समय शिक्षा से अधिक महत्व समाजिक एवं राजनैतिक क्रान्तियों का है। और इसका सबसे अच्छा साधन जन संचार के माध्यम यथा पोस्टर, पम्पलेट, पत्र पत्रिकाऐं, रेडियो और टेलिविजन हैं।

इसके सन्दर्भ में दूसरा निवेदन यह है कि अब जनसंख्या संबंधी कोरे ज्ञान से काम चलने वाला नहीं है। अब परिवार नियोजन सम्बन्धी कानून बनाने की आवश्यकता है और उसका सख्ती से पालन करने की आवश्यकता है। जब चोटी के नेता स्वार्थ हित में राष्ट्रहित की बात नहीं सोच पाते तो साधारण जनता राष्ट्रहित की बात कैसे सोच सकता है। अब आवश्यकता है वोट की राजनिति छोड़कर राष्ट्रहित की राजनिति करने की। शासनतन्त्र कोई भी हो उसे लोकहित की बात अवश्य सोचनी चाहिए एवं करनी चाहिए। परिवार नियोजन में लोकहित छुपा हैं। अतः भारत में ही नहीं इसका पालन पूरे संसार में होना चाहिए। ईश्वर सबको सद्बुद्धि दे।

13.12 शब्दावली

जनसंख्या शिक्षा: जनसंख्या शिक्षा का अर्थ है कि ऐसा शैक्षिक पाठ्यक्रम जो जनसंख्या का अध्ययन इस प्रकार से करे कि तीव्रता से बढ़ती हुई जनसंख्या से उत्पन्न होने वाली समस्याओं के बारे में तर्क संगत समाधान का निर्णय लेने में छात्रो की सहायता कर सके|

जनसंख्या नियंत्रण : प्राकृतिक एवं मानवीय प्रयासों द्वारा बेतहाशा बढ़ती जनसंख्या को काबू में लाना|

अनुकूलतम जनसंख्या : किसी भी देश के प्राकृतिक संसाधनों के अनुकूल जनसंख्या |

13.13 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1.दोनो ही 2.सभी स्तरों पर 3. उपरोक्त सभी

13.14 सन्दर्भ ग्रन्थ

1. उदीयमान भारतीय समाज में शिक्षा- डॉ0 जे. एस. वालिया

2. भारतीय शिक्षा का इतिहास- लाल एवं शर्मा

3. भारतीय शिक्षा और उसकी समस्यायें - पी.डी. पाठक

4. भारतीय शिक्षा और उसकी समस्यायें- डॉ0 गुरशरण त्यागी

5. भारत में शैक्षिक व्यवस्था का विकास- श्रीमती स्वाति जैन

6. भारतीय शिक्षा और उसकी समस्यायें - डा0 आर. ए. शर्मा

13.15 निबन्धात्मक प्रश्न

1. जनसंख्या शिक्षा से आप क्या समझते हैं? इसकी विशेषताओं का वर्णन कीजिए?

2. जनसंख्या शिक्षा के विकास में बाधक कारकों को बताइये तथा समाधान के सुझाव दीजिए?

3. जनसंख्या शिक्षा के विकास में बाधक कारकों को बताइये।

इकाई 14: जनसंख्या नियंत्रण हेतु शैक्षिक कार्यक्रम (Educational Programmes for Population Control)

इकाई की रूपरेखा:-

14.1 प्रस्तावना
14.2 उद्देश्य
14.3 मानवीय जनसंख्या की अभिवृद्धि का इतिहास
14.4 मानव जनसंख्या को प्रभावित करने वाले कारक
14.5 जनसंख्या वृद्धि की समस्याएं
14.6 जनसंख्या विस्फोट पर नियंत्रण के उपाय
14.7 जनसंख्या विस्फोट
14.8 जनसंख्या विस्फोट के कुप्रभाव
14.9 राष्ट्रीय जनसंख्या नीति
14.10 सारांश
14.11 शब्दावली
14.12 सन्दर्भ ग्रन्थ
14.13 निबन्धात्मक प्रश्न

14.1 प्रस्तावना

आज ज्ञान के विस्फोट तथा जनसंख्या के विस्फोट की अधिक चर्चा रहती है। ज्ञान दस वर्ष में दो गुना होता है। जनसंख्या 25 वर्ष में दो गुनी होती है। ज्ञान वृद्धि की दर जनसंख्या वृद्धि से ढाई गुनी अधिक है। जनसंख्या की वृद्धि की समस्या अधिक महत्वपूर्ण है क्योंकि मनुष्य ने पृथ्वी पर व्यापक परिवर्तन किये हैं । मानव पृथ्वी की सतह पर परिवर्तन लाने वाला अधिक सशक्त कारक माना जाता है जिसके समान कोई अन्य कारक नहीं है। वैज्ञानिक, औद्योगिक, तकनीकी क्षेत्र में उसकी पहुँच से भी कुछ परे नहीं है। अनके प्रकरण जो विवादास्पद है जैसे आर्थिक, धार्मिक, सामाजिक, राजनैतिक तथा शिक्षा से सम्बन्धिक समस्यायें हैं, जो जनसंख्या की वृद्धि से जुड़ी हुई है। जन्म दर में हस्तक्षेप करने को अनैतिक कार्य तथा अपराध मानते हैं, क्योंकि उच्च जन्म दर भुखमरी तथा अन्य प्रकार की समस्याओं को जन्म देती है। यह कहा जाता है कि यदि किसी प्रकार जनसंख्या की वृद्धि होती रही, तब भविष्य में अकाल और भुखमरी को कोई रोक नहीं सकता है।

पर्यावरण की अधिकांश समस्यायें तथा प्रदूषण का मुख्य कारण जनसंख्या का विस्फोट अथवा जनसंख्या वृद्धि ही है।

मानव जनसंख्या का विस्फोट अनेक प्रकार की समस्याओं को जन्म देता है। सबसे गम्भीर समस्या पर्यावरण प्रदूषण की है, जिसे जनसंख्या के विस्फोट ने ही उत्पन्न किया है। मानव तथा समाज की प्रसन्नता तथा खुशहाली पर्यावरण की गुणवत्ता पर ही निर्भर है। इसीलिए आज की आवश्यकता पर्यावरण प्रबन्धन की है। प्रस्तुत इकाई में आप जनसंख्या नियंत्रण हेतु शैक्षिक कार्यक्रम के बारे में अध्ययन करेंगे|

14.2 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के उपरान्त आप:

- जनसंख्या वृद्धि से उत्पन्न होने वाले कुप्रभावों के बारे में बता पायेंगे|
- जनसंख्या शिक्षा के संप्रत्यय को स्पष्ट कर सकेंगे|
- जनसंख्या नियन्त्रण के संप्रत्यय को स्पष्ट कर सकेंगे|
- जनसंख्या वृद्धि से पर्यावरण पर पड़ने वाले कुप्रभावों की व्याख्या कर पायेंगे
- जनसंख्या सम्बन्धी योजना व नीतियों को स्पष्ट कर सकेंगे|
- जनसंख्या नियंन्त्रण के उपाय व साधनों को स्पष्ट कर सकेंगे|

14.3 मानवीय जनसंख्या की अभिवृद्धि का इतिहास

मानवीय जनसंख्या में अतीत से समय समय पर वृद्धि होती रही है। परन्तु 1800 ई0 के मध्य जनसंख्या में वृद्धि अधिक हुई है। मानवीय जनसंख्या की वृद्धि का सम्बन्ध पर्यावरण तथा मनुष्य के सम्बन्धों पर अधारित होता है। मानव की परिस्थितिकी तथा जनसंख्या वृद्धि की प्रवृत्ति का अध्ययन तीन स्तरों पर किया जाता है।

1. प्राचीन मानव की परिस्थितिकी

2. कृषि मानव की परिस्थितिकी

3. औद्योगिक मानव की परिस्थितिकी

1. **प्राचीन मानव की परिस्थितिकी** : जब से मनुष्य के मस्तिष्क का विकास हुआ है और मानव इतिहास में क्रान्ति भी आई है। प्राचीन मानव की परिस्थितिकी तथा प्राकृतिक समुदाय की स्थिति अस्पष्ट रही है क्योंकि वह अपने खाने की खोज तक ही सीमित रहा है।

प्राचीन युग में मानव छोटे छोटे समूह में जंगलों में रहता था तथा अपने भोजन के लिए जानवरों का शिकार करता था तथा फलों को एकत्रित करता था तथा अक्सर जंगली खाने पर ही निर्भर रहता था।

मनुष्य शारीरिक और मानसिक दृष्टि से शाकाहरी और मांसाहारी दोनों ही था। मनुष्य पहला जीवित प्राणी है जो शाकाहारी अर्थात अपना भोजन पौधे से प्राप्त करता था। इसके अतिरिक्त अपने भोजन हेतु जानवरों का शिकार भी करता था। प्राचीन काल में कुछ फलों, बीजों, तनों, जड़ों को भी अपने भोजन के रूप में उपयोग करता था। वह मांसाहारी जानवरों का मांस भी अधिक पसन्द करता था।

प्राचीन युग की इस अवस्था में मनुष्य की संस्कृति भोजन चक्र के एक घटक के रूप तक ही सीमित रही और जनसंख्या वृद्धि से भोजन की जटिलता बढ़ती गई| प्रत्येक वर्ष नष्ट पौधों को लगाना और उनका प्रतिवर्ष उपभोग करना था। इस प्रकार मनुष्य का मुख्य कार्य आखेट करना तथा खाने हेतु फलों, जड़ों आदि को एकत्रित करना था।

कृषि मानव की परिस्थितिकी : लगभग 7 हजार ई0 पूर्व मिश्र में आदि मनुष्य ने अपने पर्यावरण में सुधार लाने का प्रयास आरम्भ कर दिया था और विशिष्ट प्रकार के पौधों को उगाना आरम्भ किया जिससे वे अनाज पैदा करने लगे। जानवरों का पालना भी आरम्भ किया उनके लिए अनाज को भोजन के रूप में प्रयुक्त करने लगे| यदि परिस्थितिकी शब्दावली में कहा जाए तब यह उपयुक्त होगा कि व्यक्तिगत रूप में उसने भोजन चक्र में ही परिवर्तन किया। कृषि के विकास के साथ मनुष्य ने अपने रहने हेतु आवास की व्यवस्था करनी आरम्भ की थी। जिससे वे स्थाई रूप से निवास कर सके व सर्दी, गर्मी, वर्षा आदि से अपने जीवन को सुरक्षित रख सके। उनका जीवन अपेक्षाकृत सुरक्षित हुआ और स्थाई रूप से भोजन की व्यवस्था करने लगे। इस प्रकार उनके बच्चे भी जीवित रहने लगे। शिशु मृत्युदर भी कम हुआ फलस्वरूप जनसंख्या में वृद्धि होना आरम्भ हुआ । आठ हजार ई0 पूर्व विश्व की कुल जनसंख्या 50 लाख के लगभग थी। विश्व जनसंख्या 1650 में 4.5 अरब हो गई।

3. **औद्योगिक मानव परिस्थितिकी**: मानवीय जनसंख्या में वृद्धि होती रही और मनुष्य पर्यावरण को परिवर्तित करता गया। परिणाम यह हुआ कि जनसंख्या में अधिक वृद्धि हुई। पहियों के आविष्कार ने यातायात का विकास किया और एक स्थान से भोजन की सामग्री दूसरे स्थान पर पहुँचाना आरम्भ हों गया|

एक स्थान पर अधिक जनसंख्या केन्द्रित होने लगी। कोयला और रेल की खोज हुई जिससे ईधन का क्षेत्र बड़ा, जिसका प्रभाव जनसंख्या की वृद्धि पर भी हुआ। मशीनों के आविष्कार ने औद्योगिक मानव का विकास किया। भोजन की सामग्री को वे संचित भी करने लगे। औषधि विज्ञान का विकास हुआ जिससे मृत्यु दर कम हुई। कृषि विज्ञान से अधिक अनाज का उत्पादन होने लगा। पालतू जानवरों के अच्छे साधन विकसित हो गए।

इस औद्योगिक युग में जनसंख्या की वृद्धि हुई और जन्म दर में भी अधिक वृद्धि हुई। सन 1930 तक विश्व की आबादी 1खरब हो गई थी तथा 1930 में 2 खरब तथा 1960 तक 3 खरब हो गई थी। 1830 से 1930 के मध्य जनसंख्या की वृद्धि 10 करोड़ के लगभग हुई थी।

आधुनिक समय में जनसंख्या की वृद्धि की दर अधिक है। प्रतिवर्ष 55 करोड़ की वृद्धि हो रही है। 1.5 लाख वृद्धि प्रतिदिन। 6300 प्रति घण्टा या 100 व्यक्ति प्रतिमिनट की दर से वृद्धि हो रही है। इसके अतिरिक्त मृत्यु दर जन्म दर से अधिक है। यह अनुमान किया गया कि एक खरब जनसंख्या की आवश्यकताओं की पूर्ति कृषि तथा औद्योगिक स्त्रोत कर सकते हैं।

जनसंख्या विज्ञान के आधार पर विस्तृत सांख्यिकी के कुछ निष्कर्षो को यहां पर दिया गया है -

1. जनपद की अपेक्षा गाँव में लोग कृषि करते हैं, उनकी जन्म दर अधिक होती है। जितना बड़ा शहर होता है जन्मदर उतनी कम होती है।

2. किसी क्षेत्र में शहर हो या गाँव हो निम्न आर्थिक स्तर वर्ग के व्यक्तियों में जन्मदर अधिक होती है|

3. जब किसी मानवीय वर्ग में समृद्धि का विकास होता है तब उनमें जन्म दर कम हो जाती है।

4. पुरूषों की अपेक्षा स्त्रियों की मृत्युदर कम होती है।

5. समृद्धि के विकास से तलाक की दर भी अधिक होती है।

14.4 मानव जनसंख्या को प्रभावित करने वाले कारक:

जनसंख्या की आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु मनुष्य ने पर्यावरण पर नियन्त्रण करने का प्रयास किया है। वे साधन इस प्रकार से हैं :-

1. कृषि के द्वारा खाद्य पदार्थों का उत्पादन, खाद्य पदार्थों की सुरक्षा करना, बिना मौसम के खाद्य पदार्थों को कोल्ड स्टोर के द्वारा उपलब्ध कराना तथा बेयर हाउस भन्डारण में अनाजों का संचय करना।

2. सौर मण्डल की ऊर्जा का उपयोग करना, परमाणु ऊर्जा का उपयोग, विद्युत शक्ति का उपयोग करने से मानव कार्य की क्षमता में वृद्धि हुई है।

3. पशुओं के शत्रुओं को समाप्त करना जैसे: शेर, चीते, तेन्दुओं, जहरीले साँप व जन्तुओं आदि से जीवन अधिक सुरक्षित हुआ है|

औषधि विज्ञान का विकास होना तथा उसकी सुविधाओं उपलब्ध हाने से बीमारियों पर भी नियन्त्रण पाने का प्रयास किया है।

उपरोक्त पर्यावरण घटकों पर नियन्त्रण के फलस्वरूप जनसंख्या में वृद्धि हुई है। परन्तु कुछ ऐसे अभिक्रम हैं , जिनसे जनसंख्या नियंत्रण का प्रयास किया गया है।

1. **खाद्य पदार्थ का भण्डारण:** इसकी सुविधा से फसल न होने पर, कृषि के लिए मौसम ठीक न हाने के कारण फसल नष्ट हो जाने पर, ऐसी स्थिति में भण्डारण की सुविधा से अकाल पड़ने से सुरक्षा हो जाती है।

2. अपर्याप्त आवास: आवास असुविधाओं के कारण गर्मी, सर्दी तथा बरसात के मौसम में मृत्यु अधिक हो जाती है। बीमारियाँ भी बढ़ जाती हैं।

3. प्राकृतिक प्रकोप: जैस बाढ़ का आना, सूखा पड़ना, ज्वालामुखी विस्फोट, भूचाल आना तथा आँधी का आना जैसे प्राकृतिक प्रकोप मानव जीवन को प्रभावित करते हैं । इसके कारण मृत्यु दर बढ़ जाती है और जनसंख्या कम हो जाती है।

4. युद्ध तथा महायुद्ध: अतीत काल से मानव जनसंख्या में युद्ध तथा महायुद्ध होते रहे हैं जिससे मनुष्यों का संहार होता रहा है । मानव जाति में स्पर्धा की भावना तथा एक दूसरे पर विजय पाने की प्रकृति होने के कारण युद्ध हुआ करते हैं। युद्ध के फलस्वरूप हमेशा मृत्यु दर में वृद्धि होता है।

5. बीमारियाँ तथा महामारी: अतीत काल से बीमारियाँ तथा महामारियों से जनसंख्या कम होती रही है| औषधि विज्ञान के विकास होने पर भी बिमारियाँ पूर्ण रूप से समाप्त नहीं हो सकी है। अधिकांश मृत्यु का कारण बीमारियाँ ही होती है।

6. विस्फोट और दुर्घटनाएं: आज के समय में विस्फोट अधिक हो रहें है। वायुयान, रेल दुर्घटनाँए में बड़ी संख्या में जन हानि, सुड़क दुर्घटनायें होती है। इन विस्फोटो तथा दुर्घटनाओं से भी जनसंख्या में कमी आती है। उपरोक्त सभी कारक जनसंख्या वृद्धि पर लगाम लगाता है ।

14.5 जनसंख्या वृद्धि की समस्याएं

मानवीय जनसंख्या वृद्धि की समस्यायें दो प्रकार की होती हैं -

एक वह देश जिसकी जनसंख्या बहुत अधिक हो चुकी है तथा दूसरा वह देश जिसकी जनसंख्या कम है जैसे कनाडा, डेनमार्क, आस्ट्रेलिया तथा यूरोपीय देश है, सबकी समस्याएं अलग अलग हैं| कम जनसंख्या वाले देशों की समस्यायें दूसरे प्रकार की है यहाँ उनका वर्णन करना आवश्यक नहीं है। यहाँ उन्ही देश की समस्याओं का वर्णन किया गया है जिन देशों की जनसंख्या अधिक है जैसे चीन, भारत, बांग्लादेश तथा पाकिस्तान।

मानव जनसंख्या की वृद्धि का प्रभाव स्रोतों तथा साधनों पर अधिक पड़ता है। क्योंकि उनका विशेष रूप से कृषि योग्य भूमि पर अधिक दबाब पड़ता है फलस्वरूप सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक परिस्थितिकी और पर्यावरण संबंधी समस्यायें उत्पन्न हो जाती हैं। पर्यावरण की समस्यायें स्थान, समय के अनुसार तथा क्षेत्रीय परिस्थितियों के अनुसार विविधि प्रकार की होती है। यहाँ उन समस्याओं का वर्णन किया गया है जो राष्ट्र विकसित हो रहे हैं जिनकी जनसंख्या भी अधिक है।

1. विकासशील देशों की समस्यायें: विश्व की कुल जनसंख्या का 20 प्रतिशत चीन तथा16 प्रतिशत भारत में है। विकासशील देशों में विश्व की 75 प्रतिशत जनसंख्या रहती है| यहाँ तकनीकि का विकास निम्न स्तर का है जिसका प्रभाव कृषि की क्षमता पर पड़ता है और यह औद्योगिक विकास में भी बाधक है जबकि स्थानीय स्रोत पर्याप्त रूप से उपलब्ध है।

2. विकसित देशों की जनसंख्या की समस्याएं: विकसित देशों में शहरीकरण अधिकतया यहाँ के औद्योगिक तथा तकनिकी विकास पर निर्भर करता है। इन देशों में कृषि का विकास भी बड़े स्तर पर हुआ है। इन देशों में औद्योगिक तथा तकनिकी विकास भी हुआ है। फिर भी जनसंख्या की समस्यायें इन राष्ट्रो की अपनी ही है। विकासशील देशों की जनसंख्या वृद्धि सम्बंधित समस्याएं निम्न प्रकार से है;

विकासशील देशों में जनसंख्या की वृद्धि दर और अभिवृद्धि तेजी से हो रही है। बेरोजगारी, आवास की सुविधाओं का अभाव, स्वास्थ्य संबंधी अल्प सुविधायें, प्राकृतिक स्रोतों का उचित उपयोग न होना तथा औद्योगिक विकास धीमी गति से होना आदि प्रमुख समस्यायें हैं। इन समस्याओं का संक्षिप्त विवरण यहाँ दिया गया है।

1. जनसंख्या की वृद्धि में तीव्रता: अधिकांश विकासशील देशों में जन्म दर अधिक है और मुत्यु दर कम करने का प्रयत्न किया जा रहा है। क्योंकि औषधि विज्ञान का विस्तार तेजी से हो रहा है तथा सभी विकासशील देश परिवार नियोजन कार्यक्रम को अपना रहे हैं और उन्हें बढ़ावा भी दिया जा रहा है तथा इसके लिए प्रयास भी किया जा रहा है। परन्तु भारत में इसे गंभीरता से नहीं लिया जा रहा है। जनसंख्या का कृषि, आवास, शिक्षा संस्थाओं तथा समाजिक सुविधाओं पर बोझ अधिक हो रहा है। प्रत्येक स्थान पर लम्बी कतारें लगी दिखाई देती हैं।

2. बेरोजगारी की समस्या: विकासशील देशों की बड़ी जनसंख्या कृषि पर निर्भर है, द्वितीय स्थान उद्योग का है क्योंकि औद्योगिक विकास कम हुआ है| शिक्षित व्यक्तियों के लिये अवसर कम हैं| ग्रामीण क्षेत्रों से व्यक्ति शहरों की ओर नौकरी की खोज में आते हैं इसलिये शहरों की आबादी तेजी से बढ़ रही है। इसका परिणाम यह है कि सामाजिक, आर्थिक तथा पर्यावरण की समस्यायें उत्पन्न हो रही है।

3. रहन सहन के स्तर में गिरावट व भोजन की गुणवत्ता में ह्रास: जनसंख्या वृद्धि के कारण पौष्टिक तथा सन्तुलित आहार में कमी होती जा रही है। रहन सहन का स्तर भी गिरता जा रहा है। क्योंकि जनसंख्या वृद्धि अनुसार आवास सुविधायें भी पर्याप्तरूप से नहीं बढ़ पा रही है| स्वास्थ्य की समस्यायें भी बढ़ रही है। और औषधि की सुविधायें भी पर्याप्त नहीं हैं क्योंकि आर्थिक स्रोतों का अभाव है जिसका सीधा प्रभाव स्वास्थ्य पर पड़ता है।

4. नगरी करण की समस्या : शहरों का विस्तार तेजी से हो रहा है। जिसके कारण यातायात पर दबाब बढ़ रहा है। जल वितरण व सीवर की समस्या हो रही है। फैक्टरी तथा मिलों के धुएँ से वायु और जल प्रदूषण बढ़ रहा है। यातायात के शोर गुल से ध्वनि प्रदूषण बढ़ रहा है। इसके कारण अनेक प्रकार की मानसिक हृदय तथा श्वांस की बीमारियाँ बढ़ रही है।

नगरों का विस्तार होने से झुग्गी तथा झोपड़ी में रहने वालो की संख्या भी बढ़ती है जिससे गन्दगी अधिक हो रही है जो शहरों की मुख्य समस्या है। इसके अतिरिक्त अधिक उपजाऊ भूमि को आवास तथा सड़को के लिये घेरते जा रहे हैं तथा कारखानों का विकास भी शहरों में हो रहा है। इस प्रकार कृषि की उपजाऊ भूमि भी कम होती जा रही है।

5. कृषि स्रोतो का समुचित प्रबन्धन न होना: विकासशील देशों का मुख्य आर्थिक स्रोत कृषि है। आज भी कृषि परम्परागत ढंग से की जा रही है। आर्थिक स्रोत तथा साधनों का अभाव है। इसलिए किसान खाद तथा कृषि व मशीनों का उपयोग नहीं कर पा रहा है। इस कारण कृषि उत्पादन की दर कम है। खेतों का

आकार छोटा होने के कारण कृषि यन्त्रो का उपयोग नहीं हो पाता है। यह भी कृषि विकास तथा उत्पादन में बाधा करते हैं तथा कृषि उत्पादन की दर भी कम है।

6. औद्यौगिक क्षेत्र में वृद्धि की गति धीमी है: विकासशील देशों में औद्यौगिक क्षेत्र में विकास की गति धीमी है। उसका कारण आर्थिक सुविधाओं का अभाव है जिससे प्राकृतिक स्रोतों का समुचित उपयोग नहीं हो पा रहा है। औद्यौगिक प्रशिक्षण तथा कार्य कुशलता का विकास नहीं हुआ है। क्योंकि अधिकांश जनसंख्या गरीब है। यह उत्पादों को नहीं खरीद सकती है। इन कारणो से औद्योगिक विकास की गति धीमी है।

7. व्यक्तियों में रूढ़िवादी प्रवृत्ति: विकासशील देशों की गम्भीर समस्या व्यक्तियों की रूढ़िवादी प्रवृत्ति है। वह अपनी परम्पराओं को छोड़ना नहीं चाहते और नये औद्यौगिक तथा तकनीकी आयामों को स्वीकार नहीं करते हैं । इनमें धार्मिक प्रवृत्ति भी अधिक होती है। इसलिये जीवन के नये मूल्यों तथा नये ढंग को भी स्वीकार नहीं करते है। इस प्रवृत्ति को प्रौढ़ शिक्षा तथा सतत् शिक्षा व जनसंख्या की शिक्षा के कार्यक्रमों से ही दूर किया जा सकता है।

8. ग्रामीण जनसंख्या का अधिक विस्तार: भारतवर्ष में तथा अन्य विकासशील देशों में लगभग 70 प्रतिशत से अधिक ग्रामीण क्षेत्रों में जनसंख्या निवास करती है। भारत में स्वतंत्रता के बाद जो विकास हुये यथा - शिक्षा के विस्तार हेतु महाविद्यालय, विश्वविद्यालय, व्यवसायिक पाठ्यक्रम तथा संस्थायें, अस्पताल, बैंक सेवायें, संचार माध्यमों का विकास एवं विस्तार, मनोरंजन के साधन तथा सामाजिक तथा सांस्कृतिक सुविधाओं का विकास शहरों में ही किया गया है जहाँ देश की 25 प्रतिशत जन संख्या रहती है। इस कारण गाँव से शहर सुरक्षित है| कृषि के कार्यों में जन शक्ति का अभाव होने लगा है। गाँव का जीवन स्तर तथा प्रति व्यक्ति आय भी कम है।

9. जनसंख्या की वृद्धि से पर्यावरण की समस्या: पर्यावरण की अधिकांश समस्यायें जनसंख्या की वृद्धि के कारण ही है। आर्थिक, कृषि एवं औद्योगिक विकास जनसंख्या की वृद्धि के कारण देश की आवश्यकताओं की पूर्ति नहीं कर पा रही है। जनसंख्या की वृद्धि पर्यावरण में अधोलिखित समस्यायें उत्पन्न करती हैं ।

1. पर्यावरण की गुणवता में गिरावट आती है।

2. भोजन तथा खाद्य पदार्थों की गुणवत्ता भी प्रभावित होती है।

3. कृषि के उत्पादन के लिए रासायनिक खादों का उपयोग करने तथा कृषि के पौधों की बीमारियों के लिए दवाओं का प्रयोग भी पर्यावरण में प्रदूषण उत्पन्न करता है। अनेक प्रकार की बीमारियों का फैलाता है।

4. जनसंख्या वृद्धि से नगरीकरण अधिक होता है। अर्थात नगरों तथा कस्बों का विस्तार होता है। जिससे जल प्रदूषण, ध्वनि प्रदूषण, वायु प्रदूषण तथा भूमि प्रदूषण अधिक होता है।

5. औद्योगिक तथा तकनीकि का विकास ही देश की आवश्यकताओं की पूर्ति कर सकता है। परन्तु इनके विकास से भी पर्यावरण, जल, वायु, भूमि प्रदूषण होता है।

6. जनसंख्या की वृद्धि से जीवन स्तर भी गिरता है और अर्थिक स्तर भी नीचा हो जाता है।

7. उच्च शिक्षा सुविधाओं में भी कमी जाती है क्योंकि जिस गति से जनसंख्या में वृद्धि हो रही है उस गति से शिक्षा की सुविधाओं में वृद्धि नहीं हो पा रही है। विद्यालयों, महाविद्यालयों तथा विश्वविद्यालयों पर निरंतर जनसंख्या का दबाव दिन प्रतिदिन बढ़ रहा है।

इसके अतिरिक्त व्यवसायिक तथा तकनीकी संस्थाओं पर अपेक्षाकृत अधिक दबाव बढ़ रहा है, जिसके कारण छात्रों में असन्तोष बढ़ रहा है और अनुशासनहीनता भी बढ़ रही है।

8. जनसंख्या वृद्धि के कारण मानव की गुणवत्ता में भी गिरावट आयी है। समाज में बुराईयां, भ्रष्टाचार तथा दोष बढ़ रहे हैं। राजनीति, धर्म, समाज तथा संस्कृति के क्षेत्र में भी मूल्यों का ह्रास हो रहा है। इसलिए आज नैतिक शिक्षा, मूल्यों में शिक्षा की नितान्त आवश्यकता है। मानव में भी शारीरिक सामाजिक, मनोवैज्ञानिक तथा सांस्कृतिक क्षेत्र में प्रदूषण हो रहा है जिसका प्रमुख कारण जनसंख्या वृद्धि ही है।

इतना ही नहीं आज प्रत्येक क्षेत्र में यथा सरकारी सेवाओं तथा सामाजिक सेवाओं के क्षेत्र में भी गिरावट आई है। क्योंकि सभी क्षेत्रों पर जनसंख्या का दबाव बढ़ रहा है। प्रत्येक कार्यालय में लम्बी कतारें लगी दिखाई देती हैं। इस कारण इन सभी क्षेत्रों में गिरावट आई है। यदि हम इन सभी प्रकार की समस्याओं का समाधान करना चाहते हैं तब जनसंख्या की वृद्धि पर नियन्त्रण करना होगा। जनसंख्या में पलायन की प्रवृत्ति को भी नियन्त्रित करनी होगी। सरकार को बिना किसी अन्य विचार के जनसंख्या के नियन्त्रण हेतु कानून बनाना होगा तथा उन्हें कड़ाई से लागू भी करना होगा। तभी इस दिशा में सकारात्मक परिणाम प्राप्त हों सकेंगे। सभी के लिए समान कानून लागू करना होगा। सभी परिवारों के लिए समान मानक प्रयुक्त करने होंगे।

14.6 जनसंख्या विस्फोट पर नियंत्रण के उपाय-

परिवार-नियोजन व जनसंख्या शिक्षा

भारत में जनसंख्या विस्फोट पर नियंत्रण करने के लिए दो उपायों का प्रयोग किया जा रहा है। यथा 1.परिवार नियोजन व 2. जनसंख्या शिक्षा|

इन दोनों उपायों के सम्बन्ध से हमें इण्डिया 1979 में निम्न विवरण मिलते हैं। भारत सरकार ने यह अनुभव किया कि जनसंख्या की तीव्र वृद्धि, व्यक्तियों के रहन सहन के स्तर को ऊँचा उठाने में सहायता देने के स्थान पर बाधा उपस्थित करेगी। अपने इस अनुभव के कारण सरकार ने सन् 1952 में परिवार नियोजन का कार्यक्रम आरम्भ किया। इस कार्यक्रम में चिकित्सा सम्बन्धी सेवाओं को प्राथमिकता दी गई। सन् 1961 की जनगणना के परिणामों के प्रकाशन के पश्चात सरकार को यह ज्ञात हुआ कि जनसंख्या वृद्धि की वास्तविक दर अनुमानित दर से अधिक थी| अतः सरकार ने चिकित्सा सम्बन्धी सेवाओं के साथ साथ प्रचार का कार्य भी आरम्भ किया। इस कार्य में सफलता प्राप्त करने के लिए अनेक योजनाएं कार्यान्वित की गई। यथा फिल्मों का प्रदर्शन, पुस्तिकाओं का प्रकाशन, पंचायतों एवं अन्य स्थानीय संस्थाओं के माध्यम से परिवार नियोजन सम्बन्धी सूचनाओं का प्रसार और विद्यालय के पाठ्यक्रम में जनसंख्या शिक्षा को सम्मिलित करने का निश्चय किया।

क्योंकि भारत में परिवार नियोजन का कार्य पूर्णरूपेण स्वैच्छिक है। इसलिए सरकार को उल्लिखित उपायों के बावजूद जनसंख्या वृद्धि की दर को कम करने में सफलता प्राप्त नहीं हुई। अतः सरकार ने जनसंख्या शिक्षा की योजना कार्यान्वित की।

भारत सरकार ने जनसंख्या शिक्षा का विचार अमेरिका के शिक्षाविदों से ग्रहण किया। इन शिक्षाविदों में उल्लेखनीय है कोलम्बिया विश्वविद्यालय के प्रोफेसर बेलैण्ड| डा0 मलैया के अनुसार सन् 1960 के बाद ही जनसंख्या शिक्षा के सम्बन्ध में कार्य प्रारम्भ किया गया । कोलम्बिया विश्वविद्यालय के प्रोफेसर बेलैण्ड महोदय ने इस सम्बन्ध में बहुत कार्य किया तथा भारत में जनसंख्या शिक्षा के प्रसार का श्रेय इन्हीं को है।

प्रोफेसर बेलैण्ड के कार्य से प्रभावित होकर भारत सरकार के आदेशानुसार परिवार नियोजन संघ ने 7 और 8 मार्च 1968 को बम्बई में एक सेमिनार का आयोजन करके जनसंख्या शिक्षा के प्रसार का प्रस्ताव प्रस्तुत किया। हमारे देश की सरकार और शिक्षाविदों ने इस प्रस्ताव का समर्थन किया और यह विचार व्यक्त किया कि जनसंख्या शिक्षा को सामान्य शिक्षा का अभिन्न अंग बनाया जाना आवश्यक है। उसी समय से इस विचार को व्यावहारिक रूप प्रदान किए जाने का सतत प्रयास किया जा रहा है।

भारत सरकार ने सन 1980 में राष्ट्रीय जनसंख्या शिक्षा परियोजना की स्थापना की। इस परियोजना के माध्यम से स्कूल कालेजों के छात्रों तथा वयस्क और अनौपचारिक शिक्षा प्राप्त करने वाले लोगों तक छोटे परिवार एवं जनसंख्या सम्बन्धी अन्य मुद्दों का संदेश पहुचाने का उद्देश्य प्राप्त करने के लिए कदम उठाए गए। यह परियोजना अब विद्यालय एवं अनौपचारिक शिक्षा, कालेज तथा वयस्क परियोजना के माध्यम से क्रियान्वित की जा रही है। इस परियोजना ने विद्यालय शिक्षा प्रणाली में जनसंख्या शिक्षा को अब संस्थानिक रूप प्रदान करने के लिए कदम उठाए हैं। इस समय यह परियोजना 29 राज्यों में एवं तथा केन्द्र शासित प्रदेशों में चल रही है। सातवीं योजना में व्यवस्थित रूप से अनौपचारिक क्षेत्रों की ओर उन्मुख किया गया।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 में शिक्षा के सभी स्तरों पर छोटा परिवार सम्बन्धी मानदण्ड को पाठ्यक्रम के एक मुख्य घटक के रूप में अपनाने के लिए कहा गया। जनसंख्या शिक्षा सम्बन्धी कार्यक्रम के माध्यम से इसे प्राप्त करने का प्रयास किया गया है। माध्यमिक स्तर पर भूगोल, अर्थशास्त्र, नागरिकशास्त्र, विज्ञान भाषा की पाठ्य पुस्तकों और इनके पाठयक्रमों में जनसंख्या से सम्बंधित विषय वस्तु को एकीकृत किया गया है। यह विषय वस्तु जनसंख्या और आर्थिक विकास, समाजिक विकास, पर्यावरण, स्वास्थ्य और पोषण, परिवारिक जीवन तथा जनसंख्या डायनामिक्स जैसे क्षेत्रों से ली गई है। यह विषय वस्तु 6 प्रमुख शीर्षकों से सम्बन्धित है। जो इस प्रकार है -

1. परिवार का आकार और परिवार कल्याण

2. विलम्ब से विवाह

3. उत्तरदायी अभिभावत्व

4. जनसंख्या परिवर्णन तथा संसाधन का विकास

5. जनसंख्या से जुड़े हुए मूल्य

6. महिलाओं का स्तर

14.7 जनसंख्या विस्फोट

पृथ्वी कर निरन्तर बढती जनसंख्या आज विश्व में चिन्ता का प्रमुख कारण है क्योंकि इस वृद्धि ने लगभग सभी देशों को किसी न किसी रूप में प्रभावित किया है और उनकी प्रगति में बाधाऐं उत्पन्न की है। बढ़ती जनसंख्या देश में उपलब्ध साधन तथा उपभोक्ताओं के अनुपात को गड़बड़ा देती है। विकसित और

विकासशील देशों में यह विविध प्रकार की समस्याओं को जन्म देने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करती है। इसमें से प्रमुख समस्याएँ निम्न प्रकार है:-

1. भोजन कपड़ा, मकान तथा पीने योग्य पानी का अभाव,

2. रहने का निम्न स्तर,

3. निरक्षता की समस्या

4. चिकित्सा सुविधा की कमी

5. बेरोजगारी

6. शिक्षा की अल्प सुविधायें

7. शहरीकरण इसके फलस्वरूप मलिन बस्तियों, ड्रग्स सेवन आदि को जन्म मिला है

8. जनाधिक्य की समस्या

9. प्राकृतिक संसाधन जैसे वायु, जल, वनस्पति आदि की सीमित उपलब्धता

10. वनों का विनाश

11. प्रदूषण में वृद्धि - श्रीमति इन्दिरा गाँधी के शब्दो में “अधिक जनसंख्या गरीबी को बुलावा देती है और गरीबी प्रदूषण को जन्म देती है”।

12. अत्यधिक कोलाहल, ध्वनि प्रदूषण , समाजिक प्रदूषण आदि।

14.8 जनसंख्या विस्फोट के कुप्रभाव

भारत में जनसंख्या विस्फोट के कुप्रभाव वैयक्तिक, सामाजिक, राजनैतिक, आर्थिक आदि सभी क्षेत्रों में उभर कर सामने आ गये है। राष्ट्रीय आय में वृद्धि होने के कारण प्रति व्यक्ति की आय में वृद्धि नहीं हुई है। फलस्वरूप अधिकांश व्यक्तियों का रहन सहन का स्तन निरन्तर गिरता चला जा रहा है। इससे भी अधिक दुख की बात यह है कि धनाभाव ने कितने ही व्यक्तियों को चिन्ता का शिकार बना दिया है जिसका कुफल वे अपने स्वास्थ्य को खोकर या मानसिक एवं संक्रामक रोगों से ग्रस्त होकर जीने को मजबूर होते हैं। इसके अतिरिक्त उन व्यक्तियो की संख्या कम नहीं है जिनको धनाभाव के कारण न तो पेट भरने के लिए भोजन

मिलता है, न तन ढकने को कपड़ा और न रहने के लिए मकान। इन बदनसीब व्यक्तियों को हजारों की संख्या में नगर के फुटपाथ पर अपनी जिन्दगी के दिन गिनते हुए देखा जा सकता है।

जनसंख्या की असाधरण वृद्धि ने सामाजिक तनाव और सामाजिक दूरी को जन्म देकर हमारे देश की सामाजिक एकता को तहस नहस करने की खुली चुनौती दे दी है। इस एकता के विनाश का दुष्परिणाम ग्रामों में विशेष रूप से दिखाई दे रहा है।

14.9 राष्ट्रीय जनसंख्या नीति

अप्रैल 1976 में घोषित जनसंख्या नीति में संशोधन किया गया। संशोधन नीति की महत्वपूर्ण बातें निम्नलिखित हैं -

1. परिवार कल्याण से सम्बन्धित चिकित्सा सेवाओं तथा पुनर्जनन योग्य बनाने वाली सेवाओं की निशुल्क व्यवस्था,

2. माता तथा बच्चे के स्वास्थ्य सम्बन्धी कार्यक्रमों को महत्व देना,

3. औपचारिक तथा अनौपचारिक माध्यमो के द्वारा महिलाओ के शिक्षा स्तर में सुधार लाना,

4. लड़कों व लड़कियों की विवाह आयु बढ़ाकर क्रमशः 21 तथा 18 वर्ष करना,

5. जनसंख्या सम्बन्धी शिक्षा पर अधिक बल देना,

6. राज्य सरकारों को दी जाने वाली केन्द्रीय सहायता का 8 प्रतिशत विशेष रूप से परिवार कल्याण कार्यों के निष्पादन तथा सफलता से सम्बन्धित करना,

7. परिवार कल्याण के कार्यक्रमों को बढ़ावा देने के लिए केन्द्रीय तथा राज्य सरकारों द्वारा प्रचार माध्यमों का पूरी तरह उपयोग करना जिनमें प्रसार दृष्टिकोण भी शामिल है।

8. भारत सरकार तथा राज्य सरकारो के सभी मन्त्रालयों तथा विभागों को परिवार कल्याण कार्यक्रम से सम्बद्ध करना।

14.10 सारांश

आज हमार देश में जनसंख्या एक विराट रूप ले चुकी है| हालंकि ज्ञान का स्तर भी बढ़ा है। शिक्षा के नए नए आयाम भी स्थापित किए जा रहे हैं। भारत सरकार व राज्य सरकारें मिलकर जनसंख्या नियन्त्रण करने में अपना काम लगातार कर रही है। लेकिन उसके बावजूद भी जनसंख्या नियंन्त्रण नहीं हो पा रही है। अधिकांश लोग बच्चे के जन्म को भगवान का देन मानते हैं और वे सरकार द्वारा चलाए जा रहे नीतियों को मानने में संकोच करते हैं।

अतः अब सरकार को चाहिए कि इस नियम का सख्ती से लागू करे और साथ ही शिक्षा के साधनों द्वारा लोगो के दिलों में यह बात बैठाए कि छोटा परिवार ही सुखी परिवार होता है। उस परिवार को हर प्रकार की सुविधा प्रदान करना चाहिए।

14.11 शब्दावली

1.**जनसंख्या अध्ययन:** जनसंख्या की प्रक्रिया का वर्णन, गतिविधि तथा सांख्यिकी विश्लेषण करने वाला विज्ञान।

2. जन्मदर: एक हजार की जनसंख्या में प्रतिवर्ष पैदा होने वालों की संख्या जन्मदर कहलाती है।

3. मृत्युदर: एक हजार की जनसंख्या में प्रतिवर्ष मरने वालो की संख्या को मृत्युदर कहते हैं।

4. शिशु मृत्युदर: एक हजार की जनसंख्या में प्रतिवर्ष मरने वाले शिशओं की संख्या को शिशु मृत्यु दर कहते हैं।

5. जीवन आकांक्षा:मरने वालों की औसत आयु को जीवन आकांक्षा कहते हैं। भारत वर्ष में जीवन आकांक्षा 54 वर्ष की आयु है। जबकि न्यूजीलैण्ड में 74 वर्ष तथा ब्रिटेन में 75 वर्ष की आयु है। इसका कारण यह है कि भारत में शिशु मृत्युदर अधिक है क्योंकि शिशुओं के मरने की संख्या अधिक होती है।

6. प्राकृतिक वृद्धि: प्रति एक हजार की जनसंख्या में मरने वालों की संख्या में पैदा होने वालों की संख्या की अधिकता को प्राकृतिक वृद्धि कहते हैं। बाहर से आने वाली जनसंख्या को इसमें सम्मिलित नहीं करते हैं।

7. उत्पादकता / उपजाऊपन: जनसंख्या की वास्तविकता पैदा करने की संख्या को उत्पादकता कहा जाता है। उत्पादकता सामाजिक तथा प्राकृतिक वृद्धि घटको पर निर्भर होती है। इसमें अधिक विषमता पाई जाती है।

8. मानवीय जन्म दर: प्रति एक हजार की जनसंख्या में प्रतिवर्ष पैदा होने वालों की औसत संख्या को मानवीय जन्म दर कहा जाता है। जबकि प्रत्येक आयु में व्यक्तियों की उत्पादकता समान नहीं होती है| जनसंख्या अध्ययन विशेषज्ञ प्रत्येक आयु वर्ग के व्यक्तियों की जन्मदर को विशिष्ट मापक के रूप में प्रयुक्त करते हैं।

9. मानवीय मृत्यु दर: प्रति एक हजार की जनसंख्या में प्रतिवर्ष मरने वालों की औसत संख्या को मनवीय मृत्यु दर कहते हैं। यहाँ भी विशेषज्ञ अधिक संवेदनशील मापक का प्रयोग करते हैं। क्योंकि विभिन्न आयु वर्ग के व्यक्तियों का मानवीय मृत्यु दर समान नहीं होता है। कुछ में मृत्यु दर अधिक होती है तथा कुछ में कम होती है। यह भी सामाजिक तथा परिस्थितिकी के उपर निर्भर करती है।

10. मानवीय जनसंख्या का घनत्व: पृथ्वी पर जनसंख्या का वितरण असमान है। मानवीय जनसंख्या का वितरण गाँव नगर, जिला, प्रदेश, राष्ट्र, विश्व तथा किसी विशिष्ट क्षेत्र में विभाजित किया जाता है। किसी क्षेत्र के भूमि के क्षेत्र का सम्पूर्ण रहने वाले व्यक्तियों की जनसंख्या के योग में भाग देकर ज्ञात किया जा सकता है। प्रति वर्ग किलोमीटर या प्रति वर्ग मील में रहने वालों की औसत संख्या को जनसंख्या का घनत्व कहते हैं। इसमें जनसंख्या की सघनता तथा विरलता के सम्बन्ध में जानकारी मिलती है। विश्व की औसत जनसंख्या का घनत्व 27 व्यक्ति प्रति वर्ग किमी है।

11. विस्तृत सांख्यिकी: जनसंख्या के अध्ययन में सांख्यिकी के विश्लेषण में जो मापक प्राप्त किए जाते है, उसे विस्तृत सांख्यिकी कहते हैं।

14.12 सन्दर्भ ग्रन्थ

1. उदीयमान भारतीय समाज में शिक्षा- डॉ0 जे. एस. वालिया

2. भारतीय शिक्षा का इतिहास- लाल एवं शर्मा

3. भारतीय शिक्षा और उसकी समस्यायें - पी.डी. पाठक

4. भारतीय शिक्षा और उसकी समस्यायें- डॉ0 गुरशरण त्यागी

5. भारत में शैक्षिक व्यवस्था का विकास- श्रीमती स्वाति जैन

6. भारतीय शिक्षा और उसकी समस्यायें - डा0 आर. ए. शर्मा

14.13 निबंधात्मक प्रश्न

1. जनसंख्या वृद्धि से उत्पन्न होने वाले कुप्रभावों को स्पष्ट कीजिए|
2. जनसंख्या शिक्षा के संप्रत्यय को विस्तार से व्याख्या कीजिए |
3. जनसंख्या नियन्त्रण के संप्रत्यय को स्पष्ट कीजिए|
4. जनसंख्या वृद्धि से पर्यावरण पर पड़ने वाले कुप्रभावों की व्याख्या कीजिए|
5. जनसंख्या सम्बन्धी योजना व नीतियों की विवेचना कीजिए|
6. जनसंख्या नियंन्त्रण के उपाय व साधनों को स्पष्ट कीजिए|

BLOCK-5

UNIT-15 शिक्षा का अधिकार अधिनियम 2009 (Right to education act 2009)

15.1 प्रस्तावना

15.2 उद्देश्य

15.3 शिक्षा का अधिकार अधिनियम 2009

15.4 आरटीई अधिनियम 2009 के संवैधानिक प्रावधान

15.5 आरटीई अधिनियम 2009 का क्रियान्वयन

15.6 आरटीई अधिनियम 2009 में संशोधन

15.7 आरटीई अधिनियम का महत्व

15.8 चुनौतियाँ एवं सुधार

15.9 आरटीई अधिनियम की आलोचना

15.10 आरटीई अधिनियम की उपलब्धि

15.11 सारांश

15.12 स्वमूल्यांकित प्रश्नों के उत्तर

15.13 संदर्भ ग्रन्थ सूची

15.14 शब्दावली

15.15 निबन्धात्मक प्रश्न

15.1 प्रस्तावना

शिक्षा मनुष्य का एक मौलिक अधिकार है, जो जाति, लिंग, राष्ट्रीयता, जातीयता या राजनीतिक झुकाव की परवाह किए बिना सभी के लिए निःशुल्क प्रारंभिक शिक्षा सुनिश्चित करता है। शिक्षा का मतलब

सिर्फ़ तथ्य सीखना नहीं है। शिक्षा के उद्देश्य हैं मानव व्यक्तित्व का पूर्ण विकास और उसकी गरिमा की भावना को बढ़ावा देना मानवाधिकारों और मौलिक स्वतंत्रताओं के प्रति सम्मान को मज़बूत करना सभी को एक स्वतंत्र समाज में प्रभावी रूप से भाग लेने में सक्षम बनाना और सभी देशों और सभी जातीय या धार्मिक समूहों के बीच समझ, सहिष्णुता, सम्मान और मित्रता के माध्यम से मानवाधिकारों, समानता और गैर-भेदभाव और शांति को बढ़ावा देना। मनुष्य को संसार में ईश्वर की सर्वश्रेष्ठ रचना के रूप में परिभाषित किया गया है। इस महत्वपूर्ण उपाधि के कारणों में सबसे महत्वपूर्ण कारण है, मनुष्य का विवेक। अर्थात् मानवीय गुणों की परिणति के रूप में मानवीय बौद्धिक क्षमता ही वह सर्वोत्तम गुण है, जो मनुष्य को अन्य प्राणियों से भिन्न, अद्वितीय एवं सर्वश्रेष्ठ बनाती है। मानव जीवन को अधिक सभ्य एवं सुसंस्कृत बनाने का महत्वपूर्ण दायित्व शिक्षा प्रणाली द्वारा पूरा किया जाता है। शिक्षा ही वह साधन है, जो मानव जीवन को निम्न स्तर से उच्च स्तर पर ले जाती है। शिक्षा को मानव जीवन के विकास की कुंजी बताया गया है। शिक्षा समाज के विभिन्न समुदायों के बीच एकता स्थापित करती है। चूंकि शिक्षा लोगों के जीवन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है, इसलिए अंतर्राष्ट्रीय, राष्ट्रीय, क्षेत्रीय और स्थानीय स्तर पर यह सुनिश्चित करने के प्रयास किए गए हैं कि लोगों को शिक्षा का अधिकार मिले।

15.2 उद्देश्य

- प्रस्तुत इकाई में आप शिक्षा के अधिकार अधिनियम को जान पाएंगे।
- शिक्षा के अधिकार अधिनियम के महत्व को समझ पाएंगे।
- आरटीई अधिनियम 2009 के संवैधानिक प्रावधान स्पष्ट कर सकेंगे।
- आरटीई अधिनियम 2009 के कार्यान्वयन की व्याख्या कर सकेंगे।
- आरटीई अधिनियम से सम्बंधित चुनौतियों एवं आवश्यक सुधारों को जान पाएंगे।
- आरटीई अधिनियम 2009 की उपलब्धियों को जान पाएंगे।

15.3 शिक्षा का अधिकार अधिनियम (आरटीई) 2009

शिक्षा का अधिकार अधिनियम या आरटीई, जिसे बच्चों को निःशुल्क और अनिवार्य शिक्षा का अधिकार अधिनियम, 2009 के रूप में भी जाना जाता है, भारत में एक ऐतिहासिक कानून है। हर बच्चे की गुणवत्तापूर्ण शिक्षा तक पहुँच सुनिश्चित करने के उद्देश्य से अधिनियमित इस कानून ने देश के शैक्षिक परिदृश्य को बदल दिया है। जिससे शिक्षा को मौलिक अधिकार बनाया गया। हालाँकि, इस संशोधन ने इसके

कार्यान्वयन के तरीके का वर्णन करने के लिए एक कानून की आवश्यकता को निर्दिष्ट किया, जिसके कारण एक अलग शिक्षा विधेयक का प्रारूप तैयार करना आवश्यक हो गया।

भारतीय संसद द्वारा 4 अगस्त, 2009 को अधिनियमित शिक्षा का अधिकार अधिनियम (RTE) 2009 जिसमें भारतीय संविधान के अनुच्छेद 21ए के तहत भारत में 6 से 14 वर्ष के बच्चों के लिए मुफ्त और अनिवार्य शिक्षा के महत्व के तौर-तरीकों का वर्णन किया गया है जो यह सुनिश्चित करता है कि बच्चों को निःशुल्क और अनिवार्य शिक्षा तक पहुँच प्राप्त हो। जिससे शिक्षा को मौलिक अधिकार बनाया गया। संविधान (छियासिवाँ संशोधन) अधिनियम, 2002 ने भारत के संविधान में अनुच्छेद 21-ए को शामिल किया, ताकि छह से चौदह वर्ष की आयु के सभी बच्चों को मौलिक अधिकार के रूप में निःशुल्क और अनिवार्य शिक्षा प्रदान की जा सके, जिसे राज्य कानून द्वारा निर्धारित कर सकता है। (RTE) अधिनियम, 2009, के अंतर्गत प्रत्येक बच्चे को एक औपचारिक स्कूल में संतोषजनक और समान गुणवत्ता की पूर्णकालिक प्राथमिक शिक्षा का अधिकार है, जो कुछ आवश्यक मानदंडों और मानकों को पूरा करता है। इस विधेयक का एक कच्चा मसौदा वर्ष 2005 में तैयार किया गया था। निजी स्कूलों में वंचित बच्चों के लिए 25% आरक्षण प्रदान करने के अनिवार्य प्रावधान के कारण इसका बहुत विरोध हुआ। मसौदा विधेयक तैयार करने वाली केंद्रीय शिक्षा सलाहकार बोर्ड (सीएबीई) की उप-समिति ने इस प्रावधान को लोकतांत्रिक और समतावादी समाज बनाने के लिए एक महत्वपूर्ण शर्त माना। भारतीय विधि आयोग ने शुरू में निजी स्कूलों में वंचित छात्रों के लिए 50% आरक्षण का प्रस्ताव रखा था।

इस विधेयक को 2 जुलाई 2009 को कैबिनेट ने मंजूरी दी थी। राज्य सभा ने 20 जुलाई 2009 को और लोक सभा ने 4 अगस्त 2009 को विधेयक पारित किया। इसे राष्ट्रपति की स्वीकृति मिली और 26 अगस्त 2009 को इसे बच्चों के निःशुल्क और अनिवार्य शिक्षा अधिकार अधिनियम के रूप में कानून के रूप में अधिसूचित किया गया। यह कानून 1 अप्रैल 2010 से जम्मू और कश्मीर राज्य को छोड़कर पूरे भारत में लागू हुआ, भारत के इतिहास में पहली बार प्रधानमंत्री के भाषण द्वारा कानून लागू किया गया। अपने भाषण में, भारत के प्रधान मंत्री ने कहा कि, "हम यह सुनिश्चित करने के लिए प्रतिबद्ध हैं कि जेंडर और सामाजिक श्रेणी के बावजूद सभी बच्चों को शिक्षा तक पहुँच मिले। एक ऐसी शिक्षा जो उन्हें भारत के जिम्मेदार और सक्रिय नागरिक बनने के लिए आवश्यक कौशल, ज्ञान, मूल्य और दृष्टिकोण प्राप्त करने में सक्षम बनाती है।" 7 मई 2014 को, भारत के सर्वोच्च न्यायालय ने फैसला सुनाया कि शिक्षा का अधिकार अधिनियम अल्पसंख्यक संस्थानों पर लागू नहीं होता है। इस अधिनियम का पूरा शीर्षक "बच्चों को निःशुल्क और अनिवार्य शिक्षा का अधिकार अधिनियम" है। इसे अगस्त 2009 में संसद द्वारा पारित किया

गया था। जब यह अधिनियम 2010 में लागू हुआ, तो भारत उन 135 देशों में से एक बन गया, जहाँ शिक्षा हर बच्चे का मौलिक अधिकार है।

इसके अनुसार, शिक्षा के अधिकार को मौलिक अधिकार बना दिया गया और राज्य नीति के निर्देशक सिद्धांतों की सूची से हटा दिया गया। RTE, 86 वें संशोधन के तहत परिकल्पित परिणामी कानून है। इस अनुच्छेद के शीर्षक में “निःशुल्क” शब्द शामिल है। इसका मतलब यह है कि कोई भी बच्चा (गैर सरकारी किसी भी स्कूल में अपने माता-पिता द्वारा दाखिला लिए गए बच्चों को छोड़कर) किसी भी तरह की फीस या प्रभार या खर्च का भुगतान करने के लिए उत्तरदायी नहीं है, जो उसे प्रारंभिक शिक्षा प्राप्त करने और उसे पूरा करने से रोक सकता है। यह अधिनियम सरकार के लिए छह से चौदह वर्ष की आयु वर्ग के सभी बच्चों द्वारा प्रारंभिक शिक्षा में प्रवेश, उपस्थिति और पूर्णता सुनिश्चित करना अनिवार्य बनाता है। अनिवार्य रूप से, यह अधिनियम समाज के आर्थिक रूप से कमजोर वर्गों के सभी बच्चों को मुफ्त प्रारंभिक शिक्षा सुनिश्चित करता है।

15.4 आरटीई अधिनियम 2009 के संवैधानिक प्रावधान

आरटीई अधिनियम निम्नलिखित प्रावधान करता है ।

- बच्चों को पड़ोस के स्कूल में अपनी प्रारंभिक शिक्षा पूरी करने तक निःशुल्क और अनिवार्य शिक्षा का अधिकार।
- अधिनियम यह स्पष्ट करता है कि 'अनिवार्य शिक्षा' का तात्पर्य है कि छह से चौदह वर्ष की आयु के बच्चों के प्रवेश, उपस्थिति और प्रारंभिक शिक्षा को पूरा करना सुनिश्चित करना सरकार की ओर से एक दायित्व है। 'निःशुल्क' शब्द से संकेत मिलता है कि बच्चे को कोई शुल्क नहीं देना है जो उसे ऐसी शिक्षा पूरी करने से रोक सकता है।
- सरकारी स्कूल निःशुल्क और अनिवार्य शिक्षा प्रदान करते हैं। सहायता प्राप्त स्कूल वित्त पोषण के अनुपात में शिक्षा प्रदान करते हैं (न्यूनतम 25%)। शिक्षक निजी ट्यूशन और गैर-शिक्षण कर्तव्यों को नहीं करेंगे । शिक्षकों को सरकार द्वारा आयोजित शिक्षक पात्रता परीक्षा (टीईटी) उत्तीर्ण करनी होगी। न्यूनतम योग्यता राष्ट्रीय अध्यापक शिक्षा परिषद (एनसीटीई) द्वारा निर्धारित की जाती है।
- विद्यालय प्रबंधन समितियाँ (एसएमसी) अनुदान की निगरानी करती हैं और विकास योजनाएँ तैयार करती हैं। अधिनियम में गैर-प्रवेशित बच्चे को उसकी उचित आयु की कक्षा में प्रवेश देने का प्रावधान है।

- यह छात्र शिक्षक अनुपात (पीटीआर), बुनियादी ढांचे और इमारतों, स्कूल के कार्य दिवसों और शिक्षकों के लिए मानकों और मानदंडों को निर्दिष्ट करता है।
- इसमें यह भी कहा गया है कि शिक्षकों की पोस्टिंग में शहरी-ग्रामीण असंतुलन नहीं होना चाहिए। अधिनियम में जनगणना, चुनाव और आपदा राहत कार्य के अलावा गैर-शैक्षणिक कार्यों के लिए शिक्षकों की नियुक्ति पर रोक लगाने का प्रावधान है।
- अधिनियम में परिकल्पना की गई है, कि पाठ्यक्रम को भारतीय संविधान में निहित मूल्यों के अनुरूप विकसित किया जाना चाहिए जो बच्चे के सर्वांगीण विकास का ध्यान रखेगा। पाठ्यक्रम बच्चे के ज्ञान, उसकी क्षमता और प्रतिभा पर आधारित होना चाहिए बच्चे को आघात, भय और चिंता से मुक्त करने में मदद करनी चाहिए, एक ऐसी प्रणाली के माध्यम से जो बाल-केंद्रित और बाल-अनुकूल दोनों हो।
- यह निःशुल्क और अनिवार्य शिक्षा प्रदान करने में उपयुक्त सरकारों, स्थानीय प्राधिकरण और अभिभावकों के कर्तव्यों और जिम्मेदारियों को निर्दिष्ट करता है, और केंद्र और राज्य सरकारों के बीच वित्तीय और अन्य जिम्मेदारियों को साझा करता है।
- अधिनियम में प्रावधान है कि नियुक्त किए जाने वाले शिक्षकों को उचित रूप से प्रशिक्षित और योग्य होना चाहिए।
- यह शारीरिक दंड और मानसिक उत्पीड़न, बच्चों के प्रवेश के लिए स्क्रीनिंग प्रक्रिया, कैपिटेशन शुल्क, शिक्षकों द्वारा निजी ट्यूशन और बिना मान्यता के स्कूलों को चलाने पर रोक लगाता है।

स्व मूल्यांकन हेतु प्रश्न

रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए –

1. आरटीई विधेयक को ----------को कैबिनेट ने मंजूरी दी थी।
2. सरकारी स्कूल निःशुल्क और --------प्रदान करते हैं।
3. शिक्षा हर बच्चे का ------------है।

15.5 आरटीई अधिनियम 2009 का क्रियान्वयन

साझा जिम्मेदारी: भारतीय संविधान में शिक्षा एक साझा मामला है, जो केंद्र और राज्य दोनों सरकारों को शिक्षा से संबंधित कानून बनाने की अनुमति देता है।

भूमिकाएँ और क्रियान्वयन: कानून शैक्षिक नीतियों के क्रियान्वयन के लिए केंद्र सरकार, राज्य सरकारों और स्थानीय निकायों को विशिष्ट भूमिकाएँ सौंपता है।

वित्तीय चुनौतियाँ: सार्वभौमिक शिक्षा के लिए सभी आवश्यक स्कूलों में गुणवत्तापूर्ण शिक्षा प्रदान करने के लिए राज्यों के पास अक्सर वित्तीय संसाधनों की कमी होती है।

केंद्र सरकार की सहायता: प्राथमिक राजस्व संग्रहकर्ता के रूप में, केंद्र सरकार को राज्यों को वित्तीय सहायता प्रदान करने की आवश्यकता हो सकती है।

वित्त पोषण अनुमान: एक समिति ने अनुमान लगाया कि शिक्षा से संबंधित कानूनों को लागू करने के लिए पाँच वर्षों में 1.71 ट्रिलियन रुपये (US$38.2 बिलियन) की आवश्यकता होगी।

हितधारकों की भूमिका

अधिनियम में केंद्र और राज्य सरकारों, स्थानीय अधिकारियों, शिक्षकों और स्कूल प्रबंधन समिति (एसएमसी) के कार्यों और भूमिकाओं को स्पष्ट रूप से परिभाषित किया गया है।

केंद्र सरकार

- केंद्र सरकार प्रारंभिक शिक्षा और बाल विकास के क्षेत्र में 15 सदस्यों की एक राष्ट्रीय सलाहकार परिषद का गठन करेगी। परिषद की भूमिका सरकार को विधेयक के कार्यान्वयन के संबंध में सलाह देना है: नियुक्त शैक्षणिक प्राधिकरण की सहायता से राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा विकसित करना [धारा 6 (ए)]
- शिक्षक योग्यता और प्रशिक्षण के मानकों को विकसित करना और लागू करना [धारा 6(बी)];
- नवाचार, अनुसंधान, योजना और क्षमता निर्माण के लिए राज्य सरकारों को तकनीकी और वित्तीय सहायता और संसाधन प्रदान करना [धारा 6(सी)]
- अधिसूचना द्वारा अनुसूची में संशोधन करना; तथा
- प्रारंभिक शिक्षा में गुणवत्ता सुधारने के लिए केंद्रीय शिक्षक पात्रता परीक्षा (सीटीईटी) का आयोजन।

राज्य सरकार

- निःशुल्क और अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा प्रदान करती है।
- प्रवेश, उपस्थिति और पूर्णता सुनिश्चित करती है।
- पड़ोस के स्कूलों की उपलब्धता सुनिश्चित करती है।

- यह छात्र शिक्षक अनुपात (पीटीआर), भवन और बुनियादी ढांचे, स्कूल-कार्य दिवस, शिक्षक-कार्य घंटों से संबंधित मानदंड और मानक निर्धारित करता है।
- शिक्षा का अधिकार अधिनियम के विकास और बेहतर कार्यान्वयन को देखने के लिए एक शैक्षणिक प्राधिकरण की नियुक्ति करना।
- किसी भी आधार पर किसी भी बच्चे के खिलाफ भेदभाव को रोकना।

स्थानीय प्राधिकरण

- □अपने अधिकार क्षेत्र में रहने वाले 14 वर्ष तक की आयु के सभी बच्चों का रिकॉर्ड बनाए रखना।
- □प्रवासी परिवारों के बच्चों सहित सभी बच्चों का प्रवेश सुनिश्चित करना।
- □सुनिश्चित करना कि किसी भी प्रावधान के तहत किसी भी बच्चे के साथ भेदभाव न हो।
- □शैक्षणिक कैलेंडर तय करना।
- □अपने अधिकार क्षेत्र में स्कूलों के कामकाज की निगरानी करना।

शिक्षक

- □विद्यालय में नियमितता और समय की पाबंदी बनाए रखें।
- □पूरे पाठ्यक्रम को निर्धारित समय में पूरा करें।
- □प्रत्येक बच्चे की सीखने की क्षमता का आकलन करें और यदि आवश्यक हो तो अनुपूरक अतिरिक्त निर्देश प्रदान करें।
- □माता-पिता के साथ नियमित बैठकें करें और उन्हें उपस्थिति में नियमितता, सीखने की क्षमता, प्रगति और बच्चे से संबंधित अन्य मुद्दों से अवगत कराएं।

स्कूल प्रबंधन समिति (एसएमसी)

सभी सरकारी, सरकारी सहायता प्राप्त और विशेष श्रेणी के स्कूलों को अधिनियम की धारा 21 के अनुसार स्कूल प्रबंधन समिति (एसएमसी) का गठन करना होगा। निजी स्कूल धारा 21 के अंतर्गत नहीं आते हैं क्योंकि उन्हें पहले से ही अपने ट्रस्ट/सोसायटी पंजीकरण के आधार पर प्रबंधन समितियां बनाने का आदेश दिया गया है। एसएमसी में स्थानीय प्राधिकरण के अधिकारी, माता-पिता, अभिभावक और शिक्षक शामिल होंगे।

एसएमसी को निम्नलिखित कार्य करने होंगे-

- स्कूल के कामकाज की निगरानी करना।

- स्कूल विकास योजना तैयार करना और उसकी सिफारिश करना।
- सरकारी अनुदानों के उपयोग की निगरानी करना और निर्धारित अन्य कार्य करना।

15.6 आरटीई अधिनियम 2009 में संशोधन

संशोधन अधिनियम (2012)- आरटीई अधिनियम में विकलांग बच्चों को शामिल किया गया। गंभीर विकलांगता वाले बच्चों के लिए घर-आधारित शिक्षा की सिफारिश की गई। धार्मिक और अल्पसंख्यक शैक्षणिक संस्थानों को अधिनियम से छूट दी गई।

संशोधन अधिनियम (2019)- स्कूलों में नो-डिटेंशन पॉलिसी को खत्म कर दिया गया है। मौजूदा प्रावधानों के तहत, आठवीं कक्षा तक किसी भी छात्र को रोका नहीं जा सकता। नो-डिटेंशन पॉलिसी को जारी रखने या न रखने का फैसला करने का अधिकार राज्यों के पास है।

15.7 शिक्षा के अधिकार अधिनियम का महत्व

शिक्षा अन्य सभी बुनियादी मानवाधिकारों को प्राप्त करने के लिए एक महत्वपूर्ण कदम है। शिक्षा गरीबी को कम करने, सामाजिक असमानताओं को कम करने, महिलाओं और अन्य हाशिए पर पड़े लोगों को सशक्त बनाने, भेदभाव को कम करने और अंततः व्यक्तियों को अपनी पूरी क्षमता के साथ जीवन जीने में मदद कर सकती है। यह रोजगार और व्यवसाय के मामले में बेहतर जीवन के अवसरों तक पहुँच को बेहतर बनाने में मदद करती है। यह किसी क्षेत्र में शांति और समग्र समृद्धि भी ला सकती है। इसलिए, शिक्षा सबसे महत्वपूर्ण अधिकारों में से एक है। इसके महत्व को हम निम्नलिखित बिंदुओं के द्वारा समझ सकते हैं।

- इस अधिनियम में छात्र एवं शिक्षक किस अनुपात में हों इसके लिए विशिष्ट मानक निर्धारित किए गए हैं,जो कि छात्रों को गुणवत्तापूर्ण शिक्षा प्रदान करने में एक बहुत ही महत्वपूर्ण बिंदु है।
- इसमें छात्रों एवं छात्राओं के लिए अलग-अलग शौचालय की सुविधा प्रदान करने, कक्षा की स्थिति के लिए पर्याप्त मानक रखने, पेयजल की सुविधा आदि की भी बात की गई है।
- शिक्षकों की नियुक्ति में शहरी-ग्रामीण असंतुलन से बचने पर जोर देना महत्वपूर्ण है, क्योंकि देश के शहरी क्षेत्रों की तुलना में गांवों में शिक्षा की गुणवत्ता और संख्या में बड़ा अंतर है।
- बच्चों के उत्पीड़न और भेदभाव के प्रति शून्य सहनशीलता का प्रावधान है। जाति, धर्म या लिंग पूर्वाग्रह के बिना निष्पक्ष प्रवेश सुनिश्चित करती है। आर.टी.ई एक्ट में सभी के लिए शिक्षा की अवधारणा के तहत प्रवेश के लिए स्क्रीनिंग प्रक्रियाओं पर प्रतिबंध यह सुनिश्चित करता है, कि

जाति, धर्म, लिंग आदि के आधार पर बच्चों के साथ कोई भेदभाव नहीं होगा। सभी को शिक्षा का समान अधिकार है ।

- आर.टी.ई एक्ट में यह भी अनिवार्य किया गया है, कि कक्षा 8 तक किसी भी बच्चे को रोका न जाए। स्कूलों में कक्षा-उपयुक्त शिक्षण परिणाम प्राप्त करने के लिए इसने 2009 में सतत व्यापक मूल्यांकन (CCE) प्रणाली की शुरुआत की।
- आर.टी.ई एक्ट में सभी प्राथमिक विद्यालयों में सहभागी लोकतंत्र और शासन को बढ़ावा देने के लिए प्रत्येक विद्यालय में एक विद्यालय प्रबंधन समिति (एसएमसी) के गठन का भी प्रावधान है। इन समितियों को विद्यालय के कामकाज की निगरानी करने और उसके लिए विकासात्मक योजनाएं तैयार करने का अधिकार है।
- यह अधिनियम न्यायोचित है, और इसमें शिकायत निवारण तंत्र है जो लोगों को अधिनियम के प्रावधानों का अनुपालन न होने पर कार्रवाई करने की अनुमति देता है।
- आरटीई अधिनियम के तहत सभी निजी स्कूलों को अपनी 25 प्रतिशत सीटें सामाजिक रूप से वंचित और आर्थिक रूप से पिछड़े वर्गों के बच्चों के लिए आरक्षित करनी होंगी । इस कदम का उद्देश्य सामाजिक समावेश को बढ़ावा देना और अधिक न्यायपूर्ण और समान देश का मार्ग प्रशस्त करना है।
- समावेशी शिक्षा के मामले में आर.टी.ई एक्ट शायद सबसे महत्वपूर्ण कदम है। इस प्रावधान का उद्देश्य सामाजिक एकीकरण हासिल करना है। इसके परिणामस्वरूप स्कूलों को होने वाले नुकसान की भरपाई केंद्र सरकार द्वारा की जाएगी।
- इस प्रावधान का उद्देश्य सामाजिक एकीकरण प्राप्त करना है।
- शिक्षा का अधिकार अधिनियम के परिणामस्वरूप उच्च प्राथमिक स्तर (कक्षा 6-8) में नामांकन में वृद्धि हुई है ।
- सख्त बुनियादी ढांचे के मानदंडों के परिणामस्वरूप, विशेष रूप से ग्रामीण क्षेत्रों में, स्कूल के बुनियादी ढांचे में सुधार हुआ।
- यह प्रावधान आरटीई अधिनियम की धारा 12(1)(सी) में शामिल है। सभी स्कूलों (निजी, गैर-सहायता प्राप्त, सहायता प्राप्त या विशेष श्रेणी) को प्रवेश स्तर पर अपनी 25% सीटें आर्थिक रूप से कमजोर वर्ग (ईडब्ल्यूएस) और वंचित समूहों के छात्रों के लिए **आरक्षित करनी चाहिए।**

15.8 चुनौतियाँ एवं सुधार

शिक्षा का अधिकार अधिनियम 2009 लागू होने के बाद जहां देश की प्रारंभिक शिक्षा में कई बदलाव हुए हैं, वहीं इस एक्ट को पूरी तरह से लागू करने के रास्ते में अभी भी कई चुनौतियां हैं।

वित्तीय आवंटन का अभाव- करीब दो दशक से प्रमुख शिक्षाविदों द्वारा शिक्षा के लिए देश के आम बजट में कम से कम 6% आवंटित करने की मांग की जा रही है, लेकिन यह अभी तक संभव नहीं हो पाया है। जिससे की अधिनियम को प्रभावी रूप से क्रियान्वित करने में सरकार सफल नहीं हो पा रही है

सार्वजनिक शिक्षा प्रणाली के प्रति उदासीनता- आज के समय में सार्वजनिक शिक्षा प्रणाली उदासीनता की शिकार हो गई है। देश के अंदर मध्यमवर्गीय परिवार अपने बच्चों को महंगी फीस के बावजूद निजी स्कूलों में भेजना स्टेटस सिंबल समझते हैं। इनके बीच सरकारी स्कूल में अपने बच्चों को भेजना उनकी गरिमा के खिलाफ है। पब्लिक स्कूल प्रणाली को जब सामान्य सामुदायिक संसाधनों के रूप में देखा जाने लगेगा, तो इसमें काफी सुधार होगा।

सामूहिक प्रयास का अभाव- शिक्षा का अधिकार अधिनियम 2009 के अनुसार कोई बच्चा स्कूल जाने से वंचित न रहे। लेकिन हकीकत कुछ और ही बयां करती है। आज भी हम अपने आसपास अनेक मासूम बच्चों को चाय की दुकान पर खाली कप उठाते और ढाबे पर बर्तन साफ करते देख सकते हैं। सरकार का प्रयास इस कानून के माध्यम से इन मासूमों को स्कूल की राह दिखाना है। लेकिन न तो अकेली सरकार और न ही अभिभावक इस प्रयास को सफल सकते हैं, बल्कि सामूहिक प्रयास से ही शिक्षा के अधिकार के लक्ष्यों को हासिल किया जा सकता है। अगर ऐसा नहीं हुआ तो बाकी कई नियमों की तरह यह कानून भी कागजों में सिमट कर रह जाए तो कोई हैरानी वाली बात नहीं होगी। इसके लिए प्रत्येक व्यक्ति को चाहे वो शिक्षक हो या कोई आम नागरिक उसको इस कानून के प्रति समाज में जागरूकता फ़ैलाने का कार्य अपनी नैतिक जिम्मेदारी समझते हुए करना चाहिए जिससे की व्यक्ति शिक्षा की उपयोगिता को समझ कर अपने तथा अपने आस-पास के सभी बच्चों को शिक्षा के अधिकार के लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए प्रेरित कर सके ।

शिक्षा का अधिकार अधिनियम के प्रावधान के बावजूद शिक्षक और बच्चों का अनुपात उपयुक्त नहीं है अभी भी शिक्षकों की संख्या में लगातार कमी बनी हुई है जिससे की शिक्षा की गुणवत्ता प्रभावित हो रही है।

शिक्षा का अधिकार अधिनियम के प्रावधान के अनुसार गैर शैक्षणिक कार्यों में शिक्षकों को नियुक्त नहीं किया जाना चाहिए। इसके बावजूद शिक्षकों को इन सभी कार्यों में संलग्न किया जा रहा है जिससे की विद्यालयों में शिक्षा के सुचारू संचालन में बाधा उत्पन्न होती है।

सुधार

आरटीई एक्ट के सफल क्रियान्वयन हेतु आरटीई का विस्तार किया जाना चाहिए। सरकार को इस अधिनियम के प्रावधानों के समुचित क्रियान्वयन के लिये नीति अपनानी चाहिए। इसके लिये स्कूलों को विश्वास में लेना एवं समय पर क्षतिपूर्ति राशि प्रदान करना भी आवश्यक है। इस प्रकार, सरकार वंचितों एवं गरीबों के बच्चों के लिये गुणवत्तापूर्ण शिक्षा की व्यवस्था कर शिक्षा के अधिकार को सुनिश्चित कर सकती है। इसके अलावा कुछ जानकारों का यह भी कहना है, कि इसका विस्तार करके परिणामों की गुणवत्ता बढ़ाई जा सकती है। एक्ट में 3-6 आयु समूहों और 14-18 आयु समूहों को शामिल करने की आवश्यकता है।

- स्कूलों की समुचित निगरानी करनी चाहिए एवं समय-समय पर इस अधिनियम के प्रावधानों के कार्यान्वयन की रिपोर्ट लेनी चाहिए।
- स्कूलों की निगरानी के लिये ऑनलाइन प्रबंधन प्रणाली का प्रयोग करना चाहिए। अध्ययन गुणवत्ता सुनिश्चित करने के लिए उचित मूल्यांकन प्रणाली को महत्व देना चाहिए।
- अध्यापन गुणवत्ता में सुधार के लिये शिक्षण-प्रशिक्षण व्यवस्थाओं पर ध्यान देना चाहिए। तथा शिक्षकों की संख्या उचित अनुपात में होनी चाहिए एवं शिक्षकों को गैर शैक्षणिक कार्य नहीं सौपें जाने चाहिए।
- 25% कोटा का पालन न करने के मामले में कड़े दंड का प्रावधान किया जाना चाहिए।

स्वमूल्यांकित प्रश्न

4. नो-डिटेंशन पॉलिसी क्या है ?
5. आर टी ई एक्ट के अनुसार किस आयु तक के बच्चों के लिए निःशुल्क शिक्षा का प्रावधान है ?

15.9 आरटीई अधिनियम की आलोचना

आरटीई अधिनियम भारत में शिक्षा को वास्तव में निःशुल्क और अनिवार्य बनाने की दिशा में सही दिशा में उठाया गया एक कदम है, लेकिन इसे कई आलोचनाओं का सामना करना पड़ा है। कुछ आलोचनाएँ नीचे दी गई हैं-

- इस अधिनियम को बिना किसी विचार-विमर्श या परामर्श के जल्दबाजी में तैयार किया गया था।
- 6 वर्ष से कम उम्र के बच्चों को इस अधिनियम के अंतर्गत शामिल नहीं किया गया है।
- इस अधिनियम के अंतर्गत कई योजनाओं की तुलना सर्व शिक्षा अभियान जैसी शिक्षा पर पिछली योजनाओं से की गई है, और वे भ्रष्टाचार के आरोपों और अक्षमता से ग्रस्त हैं।
- प्रवेश के समय, जन्म प्रमाण पत्र, बीपीएल प्रमाण पत्र आदि जैसे कई दस्तावेजों की आवश्यकता होती है। ऐसा लगता है कि इस कदम ने अनाथ बच्चों को अधिनियम के लाभार्थियों से वंचित कर दिया है।
- निजी स्कूलों में ईडब्ल्यूएस और अन्य के लिए 25% सीटों के आरक्षण में कार्यान्वयन संबंधी बाधाएँ रही हैं। इस संबंध में कुछ चुनौतियाँ माता-पिता के प्रति भेदभावपूर्ण व्यवहार और छात्रों द्वारा एक अलग सामाजिक-सांस्कृतिक परिवेश में ढलने में आने वाली कठिनाइयों में शामिल हैं।
- कक्षा 8 तक ‘नो डिटेंशन’ नीति के संबंध में, 2019 में अधिनियम में संशोधन करके कक्षा 5 और 8 में नियमित वार्षिक परीक्षाएँ शुरू की गई।
- यदि कोई छात्र वार्षिक परीक्षा में असफल हो जाता है, तो उसे अतिरिक्त प्रशिक्षण दिया जाता है और पुनः परीक्षा के लिए उपस्थित होना पड़ता है। यदि यह पुनः परीक्षा उत्तीर्ण नहीं होती है, तो छात्र को कक्षा में रोका जा सकता है।
- कई राज्यों द्वारा शिकायत किए जाने के बाद यह संशोधन किया गया कि नियमित परीक्षाओं के बिना, बच्चों के सीखने के स्तर का प्रभावी ढंग से मूल्यांकन नहीं किया जा सकता है।
- इस संशोधन के खिलाफ़ जो राज्य थे, वे छह राज्य थे, जिनके सीखने के परिणाम उच्च थे, क्योंकि उन्होंने अधिनियम में अनिवार्य सीसीई प्रणाली को प्रभावी ढंग से लागू किया था। (ये छह राज्य आंध्र प्रदेश, कर्नाटक, केरल, गोवा, तेलंगाना और महाराष्ट्र थे।)
- अधिनियम के खिलाफ़ एक और आलोचना यह है कि भारत में सार्वजनिक शिक्षा प्रणाली के मानकों और परिणामों को बढ़ाने के बजाय, यह कुछ हद तक निजी स्कूलों को जिम्मेदारी सौंपता है। निजी स्कूल कभी-कभी प्रवेश देने से मना कर देते हैं क्योंकि सरकार द्वारा उन्हें तुरंत प्रतिपूर्ति नहीं की जाती है। अभिभावकों पर अपने बच्चों के लिए प्रवेश सुरक्षित करने के लिए धन दान करने या आवेदन शुल्क का भुगतान करने का दबाव डाला जाता है।
- शिक्षा के अधिकार को मौलिक अधिकार बनाने में आज़ादी के बाद 6 दशक से ज़्यादा का समय लग गया। अब, सरकार और सभी हितधारकों को शिक्षा की गुणवत्ता पर ध्यान देना चाहिए और

धीरे-धीरे समाज के सभी वर्गों के लिए समानता, समावेश और एकता को बढ़ावा देने के लिए पूरे देश में एक ही शिक्षा प्रणाली और मंच बनाने की दिशा में आगे बढ़ना चाहिए।

- सीखने के परिणामों की वास्तविक गुणवत्ता के बजाय आरटीई सांख्यिकी पर असंगत जोर दिया जाता है।
- स्थानीय सरकारें आरटीई अधिनियम 2009 धारा 12(1) के प्रावधानों के तहत अर्हता प्राप्त करने वाले छात्रों पर नज़र रखने के लिए संघर्ष करती हैं। नतीजतन, उन्हें प्रवेश के लिए योग्य छात्रों की पहचान करना मुश्किल लगता है।

15.10 आरटीई अधिनियम की उपलब्धि

आरटीई अधिनियम की सबसे बड़ी सफलता भारत में इसके 2010 में लागू होने के बाद लगभग 100% नामांकन दर हासिल करने में निहित है। आरटीई अधिनियम ने उच्च प्राथमिक स्तर (कक्षा 6-8) में नामांकन बढ़ाने में सफलतापूर्वक कामयाबी हासिल की है। सख्त बुनियादी ढांचे के मानदंडों के परिणामस्वरूप स्कूल के बुनियादी ढांचे में सुधार हुआ है, ग्रामीण क्षेत्रों में इसका विशेष प्रभाव देखने को मिला। असर सेंटर की वार्षिक शिक्षा स्थिति रिपोर्ट (एएसईआर) के अनुसार, बालिकाओं के उपयोग योग्य शौचालय वाले स्कूलों का प्रतिशत दोगुना हो गया, जो 2018 में 66.4% तक पहुंच गया। उसी वर्ष, चारदीवारी वाले स्कूलों की संख्या में 13.4 प्रतिशत अंकों की वृद्धि हुई। अब 91% स्कूलों में खाना पकाने के लिए शेड उपलब्ध हैं, जो पहले 82.1% था। इसके अतिरिक्त, गैर-पाठ्यपुस्तक पुस्तकें प्राप्त करने वाले स्कूलों का प्रतिशत 62.6% से बढ़कर 74.2% हो गया।

आरटीई के तहत 25% कोटा मानदंड के तहत 3.3 मिलियन से अधिक छात्रों ने प्रवेश प्राप्त किया। इसने शिक्षा को देश भर में समावेशी और सुलभ बना दिया। "नो डिटेंशन पॉलिसी" को हटाने से प्राथमिक शिक्षा प्रणाली में जवाबदेही आई है। सरकार ने स्कूली शिक्षा के लिए समग्र शिक्षा अभियान नामक एक एकीकृत योजना भी शुरू की है, जिसमें स्कूली शिक्षा की तीन योजनाएँ शामिल हैं: सर्व शिक्षा अभियान (एसएसए), राष्ट्रीय माध्यमिक शिक्षा अभियान (आरएमएसए) शिक्षक शिक्षा पर केंद्र प्रायोजित योजना (सीएसएसटीई)।

15.11 सारांश

अनिवार्य शिक्षा का अधिकार (RTE) अधिनियम 2009 पारित होना भारत के बच्चों के लिए एक ऐतिहासिक क्षण है। भारत के इतिहास में पहली बार, बच्चों को परिवारों और समुदायों की मदद से राज्य द्वारा

गुणवत्तापूर्ण प्राथमिक शिक्षा के उनके अधिकार की गारंटी दी गई है। हर बच्चे को स्कूल जाने का अधिकार होना चाहिए, चाहे वे कहीं से भी आए हों। यह वास्तव में महत्वपूर्ण है| RTE अधिनियम एक ऐसा कानून है जो कहता है कि भारत में सभी बच्चों को अच्छी शिक्षा मिलनी चाहिए। माता-पिता, शिक्षक, नेता और समुदाय जैसे सभी लोगों की यह सुनिश्चित करने में भूमिका है । हालांकि इसके बाद भी कई ऐसी खामियां व चुनौतियां हैं, जिसके कारण देश के हजारों बच्चे अनिवार्य शिक्षा से वंचित रह जाते हैं। अगर हम सब मिलकर काम करें, तो हर बच्चा एक बेहतरीन स्कूल में जा सकता है और अच्छी शिक्षा प्राप्त कर सकता है।

15.12 स्वमूल्यांकित प्रश्नों के उत्तर

1. 2 जुलाई 2009
2. अनिवार्य शिक्षा
3. मौलिक अधिकार
4. छह से चौदह वर्ष की आयु के बच्चों
5. शिक्षा के अधिकार अधिनियम की नो-डिटेंशन नीति के अनुसार, किसी भी छात्र को तब तक फेल नहीं किया जा सकता या स्कूल से निकाला नहीं जा सकता जब तक कि वह कक्षा 1 से 8 तक की प्राथमिक शिक्षा पूरी नहीं कर लेता।

15.13 सदर्भ ग्रन्थ सूची

1. https://www.google.com/search?client=firefox-b-e&q=rte+act+ https://www.cheggindia.com/general-knowledge/rte-act-2009/#h-conclusion
2. https://www.insightsonindia.com/social-justice/issues-related-to-education-sector/right-to-education/achievements-of-rte-act2009/
3. https://egyankosh.ac.in/handle/123456789/8527
4. https://dsel.education.gov.in/rte

15.14 शब्दावली

1. आरटीई- शिक्षा का अधिकार
2. सीएबीई- केंद्रीय शिक्षा सलाहकार बोर्ड
3. एसएमसी- स्कूल प्रबंधन समिति

15.15 निबन्धात्मक प्रश्न

1. शिक्षा का अधिकार अधिनियम की विस्तृत व्याख्या कीजिए।
2. शिक्षा का अधिकार अधिनियम के महत्व को सविस्तार समझाइए।
3. आरटीई अधिनियम की उपलब्धियों पर प्रकाश डालिए।
4. आरटीई अधिनियम के सफल क्रियान्वयन में आने वाली चुनौतियों को लिखिए ।

इकाई -16 (Unit-16)

राष्ट्रीय माध्यमिक शिक्षा अभियान (आरएमएसए) (Rashtriy Madhymik Shiksha Abhiyan RMSA)

16.1 प्रस्तावना

16.2 उद्देश्य

16.3 राष्ट्रीय माध्यमिक शिक्षा अभियान

16.4 राष्ट्रीय माध्यमिक शिक्षा अभियान के उद्देश्य

16.5 योजना का क्रियान्वयन

16.6 राष्ट्रीय माध्यमिक शिक्षा अभियान में शामिल कुछ प्रमुख क्षेत्र

16.7 राष्ट्रीय माध्यमिक शिक्षा अभियान कुछ महत्वपूर्ण उपलब्धियाँ

16.7.1 माध्यमिक शिक्षा तक पहुंच में वृद्धि

16.7.2 विशेष आवश्यकता वाले बच्चों के लिए योजना (सीडब्ल्यूएसएन)

16.7.3 शैक्षिक गुणवत्ता में वृद्धि

16.7.4 अन्य उपलब्धियाँ

16.8 सारांश

16.9 स्वमूल्यांकित प्रश्नों के उत्तर

16.10 संदर्भ ग्रन्थ सूची

16.11 शब्दावली

16.12 निबन्धात्मक प्रश्न

16.1 प्रस्तावना

शिक्षा द्वारा हमें नैतिक मूल्यों, समाज सेवा की भावना, सामाजिक न्याय, और समरसता के महत्व को समझने में मदद मिलती है। शिक्षित लोग समाज की समस्याओं के समाधान में योगदान करते हैं, सामाजिक बदलाव को प्रोत्साहित करते हैं, और समाज के उद्धार में योगदान करते हैं। शिक्षा मानव जीवन के हर पहलू पर सकारात्मक प्रभाव डालती है।

माध्यमिक शिक्षा,शिक्षा का एक महत्वपूर्ण चरण है क्योंकी माध्यमिक शिक्षा के पश्चात युवाओं में अपने भविष्य निर्माण हेतु योजनाएं बनाई जाती हैं , तथा वह उच्च शिक्षा ग्रहण करते हैं सभी माध्यमिक विद्यालयों को निर्धारित मानदंडों के अनुरूप बनाकर माध्यमिक स्तर पर प्रदान की जाने वाली शिक्षा की गुणवत्ता में सुधार लाना। लैंगिक, सामाजिक-आर्थिक और दिव्यांगता सम्बंधित बाधाओं को दूर करना । इनमें शिक्षक, प्रशिक्षण और शैक्षिक गुणवत्ता में सुधार शामिल है। माध्यमिक शिक्षा का उद्देश्य 15-16 वर्ष की आयु के सभी युवाओं को अच्छी गुणवत्ता वाली शिक्षा उपलब्ध, सुलभ और सस्ती बनाना है। माध्यमिक शिक्षा बच्चों को कॉलेज या विश्वविद्यालय जाने के अपने भविष्य के विकल्पों के लिए खुद को तैयार करने में मदद करती है। यह ज्ञान और सूचना साझा करने, अनुसंधान और परिवर्तन को प्रोत्साहित करती है और छात्रों को आवश्यक कौशल भी प्रदान करती है। अतः सभी के लिए शिक्षा सुलभ करने के लिए सरकार द्वारा कई महत्वपूर्ण योजनाएं क्रियान्वित की गई हैं जिनमें से माध्यमिक शिक्षा को सर्वसुलभ बनाने हेतु राष्ट्रीय माध्यमिक शिक्षा अभियान कार्यक्रम प्रारम्भ किया गया । प्रस्तुत इकाई में आप राष्ट्रीय माध्यमिक शिक्षा अभियान के विषय में विस्तृत जानकारी का अध्ययन करेंगे ।

16.2 उद्देश्य

- राष्ट्रीय माध्यमिक शिक्षा अभियान (आरएमएसए) को जान पाएंगे ।
- राष्ट्रीय माध्यमिक शिक्षा अभियान (आरएमएसए) के उद्देश्यों को समझ सकेंगे ।
- राष्ट्रीय माध्यमिक शिक्षा अभियान के कार्यों को जान पाएंगे ।
- आरएमएसए योजना की क्रियान्वयन प्रणाली को समझ पाएंगे ।
- राष्ट्रीय माध्यमिक शिक्षा अभियान की उपलब्धियों की विवेचना कर सकेंगे ।

16.3 राष्ट्रीय माध्यमिक शिक्षा अभियान

1986 की नई शिक्षा नीति और 1992 की कार्ययोजना की सिफारिशों के बाद भारत सरकार ने अलग-अलग समय पर माध्यमिक और उच्चतर माध्यमिक विद्यालयों के बच्चों की सहायता के लिए विभिन्न योजनाएं शुरू की। IEDSS (पूर्व में IEDC), गर्ल्स हॉस्टल, व्यावसायिक शिक्षा और ICT@ स्कूल योजनाओं को भारत में अच्छी गुणवत्ता की सुलभ और प्रासंगिक माध्यमिक शिक्षा प्रदान करने के समग्र उद्देश्य से शुरू किया गया था। इसका उद्देश्य बच्चों को मुफ्त अनिवार्य शिक्षा का अधिकार (आरटीई) अधिनियम, 2009 के कार्यान्वयन में राज्यों का समर्थन करना है। यह भारत के संविधान के अनुच्छेद 21-ए के तहत एक मौलिक अधिकार है।

राज्य सरकार और स्थानीय स्वशासन के साथ साझेदारी में, आरएमएसए इन चार मौजूदा योजनाओं में एक नई योजना को जोड़ा गया । राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986, और पीओए 1992 ने भारत में माध्यमिक शिक्षा के लिए सुविधाओं के विस्तार की आवश्यकता पर बल दिया। दस्तावेजों में इस बात पर भी जोर दिया गया है, कि विस्तार प्रक्रिया में बालिकाओं, अनुसूचित जाति (एससी) और अनुसूचित जनजाति (एसटी) के बच्चों पर विशेष जोर दिया जाना चाहिए; तथा विज्ञान, वाणिज्य और व्यावसायिक विषयों को प्राथमिकता दी जानी चाहिए। व्यावसायीकरण का उद्देश्य कम से कम 25% छात्रों को व्यावसायिक पाठ्यक्रमों में शामिल करना था, जो साकार नहीं हुआ और केवल 5% तक ही सीमित रह गया (एमएचआरडी वार्षिक रिपोर्ट 2003)। व्यवसायीकरण की इस गिरती दर का कारण जानना जरूरी था जिसके लिए शोध की आवश्यकता पर बल दिया गया जिसके तहत भारत में सार्वभौमिक शिक्षा के लिए मौजूदा व्यावसायिक आरएमएसए में माध्यमिक और उच्च शिक्षा स्तर के पाठ्यक्रमों को अधिक व्यावसायिक कौशल को शामिल करके समृद्ध करने की आवश्यकता पर जोर दिया गया, जो समय की मांग है। राष्ट्रीय माध्यमिक शिक्षा अभियान (आरएमएसए) माध्यमिक शिक्षा के विकास के लिए भारत सरकार के शिक्षा मंत्रालय वर्तमान में शिक्षा मंत्रालय की केंद्र प्रायोजित योजना है। राज्य सरकारें संघीय मंत्रालय से वित्तपोषण प्राप्त करने के लिए

अद्वितीय कार्यान्वयन निकाय स्थापित करती हैं। इसे माध्यमिक शिक्षा तक पहुँच बढ़ाने और इसकी गुणवत्ता में सुधार लाने के उद्देश्य से शुरू किया गया था। इसका मुख्य उद्देश्य किसी भी समुदाय से उचित दूरी पर एक माध्यमिक विद्यालय उपलब्ध कराकर नामांकन दर को 52.26% (2005-06) से बढ़ाकर 5 साल (2009-14) के भीतर 75% करना था। । यह योजना मार्च, 2009 में माध्यमिक शिक्षा तक पहुँच बढ़ाने और इसकी गुणवत्ता में सुधार लाने के उद्देश्य से शुरू की गई थी। इस योजना का कार्यान्वयन 2009-10 से शुरू हुआ। अन्य उद्देश्यों में सभी माध्यमिक विद्यालयों को निर्धारित मानदंडों के अनुरूप बनाकर माध्यमिक स्तर पर दी जाने वाली शिक्षा की गुणवत्ता में सुधार करना, लिंग, सामाजिक-आर्थिक और दिव्यांगता बाधाओं 2017 को दूर करना, यानी 12वीं पंचवर्षीय योजना के अंत तक माध्यमिक स्तर की शिक्षा तक सार्वभौमिक पहुँच प्रदान करना और 2020 तक सार्वभौमिक प्रतिधारण प्राप्त करना शामिल है। राष्ट्रीय माध्यमिक शिक्षा अभियान अतिरिक्त शिक्षकों की नियुक्ति ,शिक्षकों को सेवाकालीन प्रशिक्षण ,सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी (ICT) आधारित शिक्षा,पाठ्यचर्या एवं शिक्षण अधिगम सुधार का भी लक्ष्य रखता है स्कूलों में सूचना और संचार प्रौद्योगिकी (आईसीटी) को राष्ट्रीय माध्यमिक शिक्षा अभियान (आरएमएसए) में शामिल कर लिया गया है। अब स्कूलों में आईसीटी, आरएमएसए का एक घटक है। यह योजना विभिन्न सामाजिक, आर्थिक और अन्य भौगोलिक बाधाओं वाले छात्रों के बीच डिजिटल विभाजन को पाटने के लिए एक प्रमुख उत्प्रेरक है। यह योजना राज्यों/संघ शासित प्रदेशों को स्थायी आधार पर कंप्यूटर प्रयोगशालाएँ स्थापित करने के लिए सहायता प्रदान करती है। राष्ट्रीय माध्यमिक शिक्षा अभियान एक व्यापक और एकीकृत योजना है जो माध्यमिक शिक्षा के सभी पहलुओं पर केंद्रित है ,जैसे- भौतिक संसाधन, शिक्षक, पाठ्यक्रम ,मूल्यांकन शिक्षण ,समावेशन आदि। यह योजना यह भी सुनिश्चित करती है, कि स्कूलों को जनसंख्या शिक्षा परियोजना, अंतर्राष्ट्रीय विज्ञान और गणित ओलंपियाड की योजनाओं के लिए केंद्रीय रूप से वित्त पोषित किया जाए। आरएमएसए को शिक्षा मंत्रालय द्वारा राज्य और केन्द्र शासित प्रदेश सरकारों एवं अन्य हितधारकों राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद, (NCERT) केन्द्रीय माध्यमिक शिक्षा बोर्ड (CBSE), राष्ट्रीय मुक्त विद्यालयी संस्थान (NIOS) और केन्द्रीय विद्यालय संगठन (KVS) के सहयोग से लागू किया जाता है।

16.4 राष्ट्रीय माध्यमिक शिक्षा अभियान के उद्देश्य

आरएमएसए की एक महत्वपूर्ण योजना है, जिसका मुख्य उद्देश्य माध्यमिक शिक्षा की पहुँच के साथ-साथ उसकी गुणवत्ता को भी बढ़ाना है। राष्ट्रीय माध्यमिक शिक्षा अभियान (आरएमएसए) का उद्देश्य हर घर से उचित दूरी पर एक माध्यमिक विद्यालय उपलब्ध कराकर नामांकन दर में वृद्धि करना है। इस योजना का कार्यान्वयन मानव पूंजी उत्पन्न करने और भारत में सभी के लिए विकास और समानता तथा जीवन की

गुणवत्ता में तेजी लाने के लिए पर्याप्त परिस्थितियाँ प्रदान करने के लिए है। इस योजना में बहुआयामी अनुसंधान, तकनीकी परामर्श, कार्यान्वयन और वित्त पोषण सहायता शामिल है। इसके प्रमुख उद्देश्य निम्नलिखित हैं।

1. 14 से 18 वर्ष आयु वर्ग के सभी बच्चों को निःशुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा प्रदान करना यह सुनिश्चित करना कि प्रत्येक बच्चे को उसके निवास से उचित दूरी के भीतर गुणवत्तापूर्ण माध्यमिक शिक्षा उपलब्ध हो। माध्यमिक विद्यालयों के लिए यह दूरी 5 किमी तथा उच्च माध्यमिक विद्यालयों के लिए यह दूरी 7 किमी होनी चाहिए।
2. माध्यमिक स्तर पर दी जाने वाली शिक्षा की गुणवत्ता में सुधार करना।
3. सामाजिक-आर्थिक, लैंगिक और दिव्यांगता संबंधी बाधाओं को दूर करना।
4. 2017 तक यानी 12 वीं पंचवर्षीय योजना के अंत तक माध्यमिक शिक्षा तक सार्वभौमिक पहुँच।
5. 2020 तक सार्वभौमिक प्रतिधारण हासिल करना।
6. आरएमएसए के अंतर्गत प्रत्येक विद्यालयों में निम्नलिखित भौतिक सुविधाओं का होना आवश्यक है।

भौतिक संसाधन –

a) अतिरिक्त कक्षा-कक्ष
b) प्रयोगशालाएं
c) पुस्तकालय
d) कला एवं शिल्प
e) शौचालय
f) पीने के पानी की समुचित व्यवस्था
g) दुर्गम स्थानों में शिक्षकों के रहने के लिए लिए छात्रावास की व्यवस्था

गुणवत्तापूर्ण हस्तक्षेप

a) पीटीआर को 30:1 तक कम करने के लिए अतिरिक्त शिक्षकों की नियुक्ति
b) विज्ञान, गणित और अंग्रेजी शिक्षा पर ध्यान केंद्रित करना
c) शिक्षकों का सेवाकालीन प्रशिक्षण
d) विज्ञान प्रयोगशालाएँ
e) आईसीटी सक्षम शिक्षा
f) पाठ्यचर्या सुधार

g) शिक्षण अधिगम सुधार
h) राष्ट्रीय पाठ्यचर्या रूपरेखा (एनसीएफ 2005) के अनुसार पाठ्यक्रम संशोधन।

समानता हस्तक्षेप

a) सूक्ष्म नियोजन पर विशेष ध्यान
b) उन्नयन के लिए आश्रम विद्यालयों को प्राथमिकता
c) विद्यालय खोलने के लिए अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति/अल्पसंख्यक बहुल क्षेत्रों को प्राथमिकता
d) कमजोर वर्ग के लिए विशेष नामांकन अभियान
e) विद्यालयों में अधिक महिला शिक्षक
f) बालिकाओं के लिए अलग शौचालय ब्लॉक।

राष्ट्रीय माध्यमिक शिक्षा अभियान में 2020 से लेकर वर्तमान समय (2024) तक पूर्व निर्धारित उद्देश्यों के अतिरिक्त अन्य कई महत्वपूर्ण उद्देश्यों को प्राप्त करने पर जोर दिया जा रहा है जो निम्नलिखित हैं-

a) सकल नामांकन दर (जीईआर) में सुधार जारी रखना और माध्यमिक शिक्षा तक पहुंच को सार्वभौमिक बनाना।
b) शिक्षकों के सतत व्यावसायिक विकास पर जोर-
c) राष्ट्रीय माध्यमिक शिक्षा अभियान में स्कूलों में दी जा रही शिक्षा की दक्षता में सुधार लाने के लिए शिक्षकों के सतत व्यावसायिक विकास को उच्च प्राथमिकता दी गई है।
d) विषय-विशिष्ट शिक्षणशास्त्र और नवीन शिक्षण विधियों का विकास-इस पहल का उद्देश्य किसी विषय विशेष के लिए विशिष्ट शिक्षणशास्त्र के विकास पर ध्यान केंद्रित करके और नवीन शिक्षण तकनीकों को लागू करके शिक्षा की गुणवत्ता में सुधार करना था।
e) छात्र-केंद्रित शिक्षण और आलोचनात्मक चिंतन कौशल पर ध्यान केंद्रित करना अर्थात आलोचनात्मक चिंतन क्षमताओं और छात्र-केंद्रित शिक्षण रणनीतियों के विकास को भी प्राथमिकता दी गई।

f) स्कूल प्रशासन और **सामुदायिक** भागीदारी को मजबूत करना।

g) छात्रों की सामाजिक और भावनात्मक शिक्षा (एसईएल) और मानसिक कल्याण को बढ़ावा देना -पाठ्यक्रम में सामाजिक और भावनात्मक शिक्षा (एसईएल) को शामिल करना इस कार्यक्रम ने समग्र शिक्षा को बढ़ावा देने के लिए छात्र विकास के शैक्षणिक और मानसिक स्वास्थ्य दोनों पहलुओं को संबोधित किया। मानसिक स्वास्थ्य जागरूकता बढ़ाने और आवश्यक सहायता प्रदान करने के लिए कार्यक्रम शुरू किए गए।

h) शिक्षा और स्कूल प्रशासन में उभरती प्रौद्योगिकियों का एकीकरण।

i) तकनीकी प्रगति के साथ अद्यतित रहने के लिए शिक्षा प्रणाली में उभरती हुई तकनीकों को शामिल करना। इसमें प्रभावी स्कूल प्रबंधन के लिए प्रौद्योगिकी का उपयोग करना, जिसका अंतिम उद्देश्य शैक्षिक प्रक्रियाओं का आधुनिकीकरण और छात्रों के लिए अधिक तकनीकी रूप से उन्नत शिक्षण वातावरण प्रदान करना था।

j) इसका उद्देश्य 15 से 16 वर्ष की आयु के सभी बच्चों को NEP 2020 द्वारा प्रस्तावित सार्वभौमिक शिक्षा तक पहुँच प्रदान करना है।

स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न

1. आरएमएसए का मुख्य उद्देश्य क्या है ?
2. आरएमएसए योजना का कार्यान्वयन कब शुरू हुआ?
3. राष्ट्रीय माध्यमिक शिक्षा अभियान माध्यमिक शिक्षा के किन पहलुओं पर केंद्रित है?

16.5 योजना का क्रियान्वयन

राष्ट्रीय माध्यमिक शिक्षा अभियान के लिए धन शिक्षा मंत्रालय द्वारा दिया जाता है और इसे देश के प्रत्येक राज्य को सीधे हस्तांतरित किया जाता है। शिक्षा मंत्रालय प्रत्येक राज्य में माध्यमिक शिक्षा में सुधार के लिए 75% लागत वहन करता है और 25% लागत राज्य को वहन करनी होती है। कुछ पूर्वोत्तर राज्यों और सिक्किम के लिए, उनके हिस्से से मिलने वाली धनराशि को घटाकर 10% कर दिया गया है।

कुल मिलाकर, राष्ट्रीय माध्यमिक शिक्षा अभियान ने देश में माध्यमिक शिक्षा में जबरदस्त सुधार किया है। इसने न केवल देश में शिक्षा की गुणवत्ता में सुधार किया है, बल्कि इसने लिंग अंतर

को भी कम किया है, क्योंकि इसके माध्यम से अधिक बालिकाओं ने माध्यमिक शिक्षा पाठ्यक्रमों में अपना नामांकन कराया है।

योजना का कार्यान्वयन राज्य सरकार की समितियों द्वारा किया जा रहा है, जिन्हें योजना के कार्यान्वयन के लिए स्थापित किया गया है। केंद्रीय हिस्सा सीधे कार्यान्वयन एजेंसी को जारी किया जाता है। लागू राज्य का हिस्सा भी संबंधित राज्य सरकारों द्वारा कार्यान्वयन एजेंसी को जारी किया जाता है। आरएमएसए के विकास साझेदार हैं।

1) विश्व बैंक

2) डीएफआईडी (डिपार्टमेंट फॉर इंटरनेशनल डेवलपमेंट *(*DFID))

3) यूरोपीय संघ

योजना के कुछ मानदंडों में संशोधन

- भारत सरकार ने 01.04.2013 से आरएमएसए के निम्नलिखित संशोधित मानदंडों को मंजूरी दी है:
- राज्य/संघ राज्य क्षेत्र सरकारों को आरएमएसए के अंतर्गत स्वीकार्य सिविल कार्यों के निर्माण के लिए राज्य दर अनुसूची (एसएसओआर) या सीपीडब्ल्यूडी दर (जो भी कम हो) का उपयोग करने की अनुमति देना।
- कार्यक्रम के अंतर्गत कुल परिव्यय के प्रबंधन, निगरानी मूल्यांकन और अनुसंधान (एमएमईआर) को 2.2 प्रतिशत से बढ़ाकर 4 प्रतिशत करना, जिसमें राष्ट्रीय स्तर के लिए निर्धारित 4 प्रतिशत का 0.5 प्रतिशत और शेष 3.5 प्रतिशत राज्य आवंटन का हिस्सा होगा। उन राज्यों के मामले में जहां 3.5 प्रतिशत एमएमईआर का बढ़ा हुआ आवंटन भी पर्याप्त नहीं होगा और समग्र राज्य एमएमईआर घटक के 3.5 प्रतिशत के भीतर शीर्ष के अंतर्गत गतिविधियों में बाधा उत्पन्न करेगा; राज्य/संघ राज्य क्षेत्रों में भिन्नता को पीएबी द्वारा अनुमोदित किया जा सकता है, जो किसी विशेष राज्य/संघ राज्य क्षेत्र में परिव्यय के अधिकतम 5 प्रतिशत के अधीन है।
- माध्यमिक शिक्षा की अन्य केन्द्र प्रायोजित योजनाओं - स्कूल में सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी (आईसीटी), बालिका छात्रावास, माध्यमिक स्तर पर दिव्यांगों के लिए समावेशी शिक्षा (आईईडीएसएस) और व्यावसायिक शिक्षा (वीई) को उनके मौजूदा स्वरूप में आरएमएसए के अंतर्गत शामिल करना।

- सहायता प्राप्त विद्यालयों के लिए आरएमएसए अम्ब्रेला योजना घटकों के अनुसार गुणवत्ता हस्तक्षेप के लिए सहायता प्राप्त माध्यमिक विद्यालयों (बुनियादी ढांचे के समर्थन / मुख्य क्षेत्रों, यानी शिक्षक वेतन और स्टाफ वेतन को छोड़कर) को आरएमएसए के लाभों का विस्तार करना।
- 12वीं पंचवर्षीय योजना की शेष अवधि के लिए गैर-एनईआर राज्यों के लिए 72:25 तथा एनईआर राज्यों (सिक्किम सहित) के लिए 90:10 की मौजूदा निधि साझाकरण पद्धति जारी रखना।
- शिक्षा मंत्रालय के आरएमएसए परियोजना अनुमोदन बोर्ड (पीएबी) को आरएमएसए की छत्र योजना की एकीकृत योजना पर अनुमोदन हेतु विचार करने के लिए अधिकृत करना, जिसमें माध्यमिक शिक्षा की चार सम्मिलित केन्द्र प्रायोजित योजनाएं शामिल हैं।
- आरएमएसए अम्ब्रेला योजना के सभी घटकों के लिए आरएमएसए राज्य कार्यान्वयन सोसायटी को सीधे तौर पर धनराशि जारी करने को अधिकृत करना।

16.6 राष्ट्रीय माध्यमिक शिक्षा अभियान में शामिल कुछ प्रमुख क्षेत्र

1986 में राष्ट्रीय शिक्षा नीति (एनईपी) के बाद से, राष्ट्रीय माध्यमिक शिक्षा अभियान योजना के शुरू होने तक माध्यमिक शिक्षा की संरचना और संगठन के संबंध में कोई संशोधन नहीं किया गया है। इस

योजना को शुरू करने का पूरा उद्देश्य कुछ ऐसे क्षेत्रों को शामिल करना था, जिन्हें देश में माध्यमिक शिक्षा ने आज तक शामिल नहीं किया है, और समग्र गुणवत्ता और शिक्षा की संरचना और संगठन के तरीके में सुधार करना है, जिससे प्रत्येक बच्चे में व्यावसायिक गठन हो सके।

राष्ट्रीय माध्यमिक शिक्षा अभियान में शामिल कुछ प्रमुख क्षेत्र निम्नलिखित हैं –

- बच्चों के लिए वर्ष के लिए निर्धारित पाठ्यक्रम व्यावसायिकता पर केंद्रित होना चाहिए और बच्चों को उन विषयों में आगे बढ़ने की अनुमति देनी चाहिए जिनमें उनकी रुचि है, और उन्हें रोजगारोन्मुखी पाठ्यक्रम लेने की अनुमति देनी चाहिए।
- छात्रों को ओपन-लर्निंग कोर्स चुनने के लिए प्रोत्साहित करें, जहाँ वे अपनी पसंद के विषय चुन सकें।
- बालिकाओं के लिए निःशुल्क शिक्षा और उन्हें निःशुल्क छात्रावास सुविधाएँ प्रदान करना।

- दिव्यांगों के लिए एकीकृत शिक्षा, उन्हें समाज का अभिन्न अंग बनाना।
- शिक्षा प्रणाली के प्रबंधन के लिए निजी क्षेत्रों को शामिल करना।
- मल्टीमीडिया और संपर्क केंद्रों के माध्यम से छात्रों के लिए माध्यमिक शिक्षा की आवश्यकता के बारे में जागरूकता फैलाना। इन प्लेटफार्मों के माध्यम से, वंचित छात्र इस योजना के संपर्क में आ सकते हैं और अपना नामांकन करा सकते हैं।
- विज्ञान, पर्यावरण शिक्षा, गणित, कंप्यूटर आदि विषयों की विषय-वस्तु की गुणवत्ता में सुधार करना।
- पाठ्यक्रम की समीक्षा करना और यह निर्धारित करना कि पाठ्यक्रम की सामग्री अभी भी उपयुक्त है या पुरानी हो चुकी है।
- शिक्षकों को उनके दृष्टिकोण और बच्चों से उनके व्यवहार के संबंध में प्रशिक्षण देना। यह सुनिश्चित करने के लिए कि वे नौकरी के लिए उपयुक्त हैं, समय-समय पर परीक्षण करना।
- दिव्यांगों के लिए निःशुल्क शिक्षा, परिवहन और विशेष आवश्यकताएँ।
- छात्रों को सूचना प्रौद्योगिकी (आईटी) से परिचित कराना, जो आज की दुनिया में एक महत्वपूर्ण विषय है। इच्छुक बच्चे की कंप्यूटर शिक्षा के लिए वित्तीय सहायता प्रदान करना।
- सामाजिक-पृष्ठभूमि, धर्म और लिंग के प्रति लोगों के दृष्टिकोण के संबंध में जोर देने में बदलाव। राष्ट्रीय माध्यमिक शिक्षा अभियान एससी/एसटी जनजातियों और समाज के पिछड़े वर्गों से आने वाले बच्चों को शामिल करने पर ध्यान केंद्रित करता है।
- आवश्यक विश्लेषण करना जैसे कि सकल नामांकन अनुपात (जीईआर), शुद्ध नामांकन अनुपात (एनईआर), प्रतिधारण दर, ड्रॉपआउट दर, लिंग अंतर और लिंग समानता सूचकांक (जीपीआई)। दिए गए विश्लेषण के साथ, सरकार बच्चों को आकर्षित करने के लिए संशोधन करेगी।
- पिछड़े वर्गों और जनजातियों के बच्चों की शिक्षा को प्रभावित करने वाले कारकों का आकलन करना।

16.7 राष्ट्रीय माध्यमिक शिक्षा अभियान कुछ महत्वपूर्ण उपलब्धियाँ -

16.7.1 माध्यमिक शिक्षा तक पहुंच में वृद्धि:

- **माध्यमिक स्तर पर नामांकन दर:** जिला शिक्षा सूचना प्रणाली (DISE) की रिपोर्ट के अनुसार, माध्यमिक स्तर पर सकल नामांकन दर (GER) में शैक्षणिक वर्ष 2005-06 में 52.26% से 2020-21 में 79.6% तक की उल्लेखनीय वृद्धि हुई है। यह वृद्धि देश भर में माध्यमिक शिक्षा तक पहुँच प्रदान करने में महत्वपूर्ण सुधार को दर्शाती है।
- **उच्चतर माध्यमिक स्तर पर नामांकन दर:** उच्चतर माध्यमिक स्तर पर सकल नामांकन दर (GER) में भी सराहनीय वृद्धि देखी गई। उच्चतर माध्यमिक स्तर पर GER में सबसे बड़ा सुधार देखा गया है, जो 2012-13 में 40.1% से बढ़कर 2019-20 में 51.4% हो गया है।
- **लिंग अंतर में कमी:** माध्यमिक स्तर पर नामांकन में लिंग अंतर में उल्लेखनीय कमी देखी गई, जो 2005-06 में 14.78% से घटकर 2020-21 में 7.04% हो गया, जैसा कि DISE द्वारा रिपोर्ट किया गया है। इस अवधि के दौरान माध्यमिक और उच्चतर माध्यमिक दोनों में लिंग समानता सूचकांक (GPI) में सुधार हुआ है। इसके अलावा, उच्चतर माध्यमिक स्तर पर GPI में सुधार सबसे अधिक स्पष्ट है। यह शिक्षा तक पहुँच में लैंगिक समानता को बढ़ावा देने के सफल प्रयासों को उजागर करता है।

16.7.2 विशेष आवश्यकता वाले बच्चों के लिए योजना (सीडब्ल्यूएसएन):

- दिव्यांग व्यक्तियों के लिए अधिनियम, 1995 के लागू होने के साथ ही CWSN की शिक्षा को बढ़ावा मिला। यह अधिनियम कुछ सरकारों और अधिकारियों को इन बच्चों के लिए शिक्षा तक मुफ्त पहुँच, कुछ उद्देश्यों के लिए भूमि आवंटित करने, परिवहन में भेदभाव न करने, शोध करने के लिए उन्हें वित्तीय प्रोत्साहन आदि प्रदान करने का दायित्व सौंपता है।
- इस योजना ने इन बच्चों के हित में शिक्षकों के बीच दृष्टिकोण परिवर्तन और क्षमता निर्माण के लिए भी कार्यक्रम शुरू किए हैं।

16.7.3 शैक्षिक गुणवत्ता में वृद्धि:

- **शिक्षक-छात्र अनुपात (टीपीआर):** राष्ट्रीय माध्यमिक शिक्षा अभियान अधिक अनुकूल शिक्षक-छात्र अनुपात की स्थापना के माध्यम से शिक्षा की गुणवत्ता में सुधार करने के लिए एक जान बूझकर किए गए प्रयास का सबूत देता है, जैसा कि शिक्षक-छात्र अनुपात (टीपीआर) में

- 2009-10 में 43:1 से 2020-21 में 30:1 कम करने का प्रयास। वर्तमान में यह और भी कम हो गया है। अतः अब लगभग 30 छात्रों के लिए एक शिक्षक है जिससे की छात्रों के शिक्षण पर सकारात्मक प्रभाव पड़ा है।
- **नए शिक्षकों की नियुक्ति:** 2009 से अब तक पूरे भारत में 8 लाख से ज़्यादा अतिरिक्त शिक्षकों की नियुक्ति की गई है। यह कदम स्टाफिंग की ज़रूरतों को पूरा करने और यह सुनिश्चित करने के प्रयास को दर्शाता है कि छात्रों को उनकी पढ़ाई में पर्याप्त सहायता मिले।
- **विज्ञान प्रयोगशालाओं की स्थापना:** 2009 से आरएमएसए की रिपोर्ट के अनुसार माध्यमिक विद्यालयों में एक लाख से अधिक विज्ञान प्रयोगशालाएँ स्थापित की गई हैं। यह विकास विज्ञान शिक्षा पर विशेष रूप से व्यावहारिक और हाथों से सीखने के अनुभवों पर जोर को दर्शाता है।जिससे की विद्यार्थियों में व्यवहारिक ज्ञान में वृद्धि हुई है।
- **बुनियादी ढांचा और सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी (आईसीटी):** आरएमएसए की रिपोर्ट में स्पष्ट किया गया है, कि शैक्षणिक पद्धतियों और परिणामों को बढ़ाने के लिए स्कूलों को 8 लाख से अधिक कंप्यूटर उपलब्ध कराए गए हैं, और इन स्कूलों के संबंधित शिक्षकों को आईसीटी एकीकरण पर समवर्ती प्रशिक्षण दिया गया है। तथा समय-समय पर शिक्षकों हेतु कार्यशालाओं का आयोजन किया जाता है जिससे कि शिक्षकों को कंप्यूटर तथा आईसीटी के क्षेत्र में होने वाले नए नवाचारों में कुशल बनाया जा सके।
- **विज्ञान, गणित और अंग्रेजी पर ध्यान:** विज्ञान, गणित और अंग्रेजी में बुनियादी कौशल को बढ़ाने की प्रतिबद्धता आरएमएसए में स्पष्ट है। संसाधनों के आवंटन और विशेष पहलों के कार्यान्वयन में भी यही देखा जा सकता है जिसका उद्देश्य इन महत्वपूर्ण विषयों में शिक्षण और सीखने में सुधार करना है।

16.7.4 अन्य उपलब्धियाँ

- **भौतिक अवसंरचना में वृद्धि:** आरएमएसए की शुरुआत के बाद से हमने अतिरिक्त कक्षाओं, स्कूलों, शौचालयों और पेयजल सुविधाओं की विभिन्न स्थापनाएँ देखी हैं। तथा विद्यालयों के बुनियादी ढांचे को मजबूत किया गया है जिससे की छात्रों को एक अच्छा माहौल मिल सके। विद्यालयों में छात्र एवं छात्राओं हेतु अलग- अलग शौचालयों की व्यवस्था का प्रबंध किया गया है तथा पीने के पानी आदि की अधिकतर विद्यालयों में समुचित व्यवस्था की गई है।

- इससे समग्र रूप से शैक्षणिक प्रतिष्ठानों के भौतिक अवसंरचना में वृद्धि होती है, जिससे सीखने के लिए अनुकूल वातावरण को बढ़ावा मिलता है।
- **शिक्षक प्रशिक्षण और विकास:** शिक्षकों के पेशेवर विकास को बेहतर बनाने के लिए एक सतत प्रयास। यह शिक्षकों के लिए नियमित इन-सर्विस प्रशिक्षण कार्यक्रमों के आरएमएसए के कार्यान्वयन में परिलक्षित होता है। ये कार्यक्रम शिक्षण और विषय-वस्तु ज्ञान के विविध पहलुओं को समाकलित करते हैं।
- **स्कूल प्रबंधन को मजबूत बनाना:** आरएमएसए ने स्कूलों के समग्र प्रशासन और प्रबंधन को बढ़ाने के लिए एक व्यापक रणनीति बनाई। प्रशासकों के लिए क्षमता निर्माण पहल और स्कूल प्रबंधन समितियों के लिए समर्थन द्वारा इसे और भी बेहतर बनाया गया।

निजी क्षेत्र की भागीदारी

- गैर-सरकारी संगठनों (एनजीओ) सहित निजी क्षेत्र की भागीदारी में वृद्धि हुई है। वर्तमान में, ये निजी क्षेत्र लगभग 51% माध्यमिक विद्यालयों और 58% उच्चतर माध्यमिक विद्यालयों का प्रबंधन करते हैं।
- संपर्क केन्द्रों और मल्टीमीडिया पैकेजों का उपयोग करके राष्ट्रीय और राज्य मुक्त विद्यालयों के माध्यम से उन बच्चों को अवसर प्रदान किए गए, जो औपचारिक शिक्षा प्रणालियों में नामांकन कराने में सक्षम नहीं थे।
- संशोधित शिक्षा नीति, 1992 के बाद, पाठ्यक्रम में संशोधन, मूल्य शिक्षा के लिए संसाधन केंद्र और राष्ट्रीय कंप्यूटर सहायता प्राप्त शिक्षा केंद्र आदि जैसी नई पहलें की गई हैं।
- जनशक्ति की मांग में कमी और शैक्षणिक बाधाओं आदि के कारण शिक्षा के व्यवसायीकरण में अपील की कमी है। इसलिए, 2000 तक 25% के मुकाबले केवल 10% छात्रों ने व्यावसायिक धाराओं का चयन किया।

स्व मूल्यांकन हेतु प्रश्न

रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए –

4. बच्चों के लिए वर्ष के लिए निर्धारित पाठ्यक्रम ------------पर केंद्रित होना चाहिए।
5. 2000 तक 25% के मुकाबले केवल --------- छात्रों ने व्यावसायिक धाराओं का चयन किया।

6. योजना का कार्यान्वयन ---------की समितियों द्वारा किया जा रहा है
7. 2020 तक -------------हासिल करना।

16.8 सारांश

राष्ट्रीय माध्यमिक शिक्षा अभियान (आरएमएसए) की शुरुआत माध्यमिक शिक्षा तक पहुँच बढ़ाने और इसकी गुणवत्ता में सुधार लाने के उद्देश्य से की गई थी|माध्यमिक शिक्षा के सार्वभौमीकरण का लक्ष्य निश्चित रूप से निकट भविष्य में उच्च शिक्षा के सर्वव्यापी करण की मांग करता है, इसलिए इसके लिए तैयारी की आवश्यकता है। पर्याप्त गुणवत्ता वाले उच्च शिक्षा संस्थानों की स्थापना की जा सकती है, जो भारत और विदेशों से छात्रों को आकर्षित करेंगे, जिससे हमारे देश को दुनिया में गुणवत्तापूर्ण उच्च शिक्षा केंद्र के रूप में नई पहचान मिलेगी आरएमएसए किसी भी आवास से उचित दूरी पर माध्यमिक विद्यालय उपलब्ध कराने में उल्लेखनीय भूमिका निभाता है। यह योजना नियोजन प्रक्रिया, कार्यान्वयन निगरानी और मूल्यांकन में स्कूल प्रबंधन और विकास समिति और पीटीए के सक्रिय समर्थन से दक्षता बढ़ाती है। आरएमएसए को राज्य सरकार और स्थानीय स्वशासन के साथ साझेदारी का लाभ मिलता है। इसमें आलोचनात्मक सोच, समस्या-समाधान और व्यावहारिक कौशल पर जोर दिया जाना चाहिए जो छात्रों के लिए उनके भविष्य में सफल होने के लिए आवश्यक है। इसके अलावा, आरएमएसए को यह सुनिश्चित करना चाहिए कि पाठ्यपुस्तकें, सीखने की सहायक सामग्री और प्रौद्योगिकी जैसी शिक्षण सामग्री आसानी से उपलब्ध हो और पाठ्यक्रम का समर्थन करने के लिए तैयार की गई हो।

16.9 स्वमूल्यांकित प्रश्नों के उत्तर

1. इसका मुख्य उद्देश्य माध्यमिक शिक्षा की पहुँच के साथ-साथ उसकी गुणवत्ता को भी बढ़ाना है।
2. इस योजना का कार्यान्वयन 2009-10 से शुरू हुआ।
3. राष्ट्रीय माध्यमिक शिक्षा अभियान एक व्यापक और एकीकृत योजना है जो माध्यमिक शिक्षा के सभी पहलुओं पर केंद्रित है ,जैसे- भौतिक संसाधन ,शिक्षक ,पाठ्यक्रम ,मूल्यांकन शिक्षण ,समावेशन आदि।
4. व्यावसायिकता

5. 10%
6. राज्य सरकार
7. सार्वभौमिक प्रतिधारण

16.10 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. https://www.india.gov.in/spotlight/rashtriya-madhyamik-shiksha-abhiyan#tab=ta
2. https://en.wikipedia.org/wiki/Rashtriya_Madhyamik_Shiksha_Abhiyan
3. https://www.education.gov.in/rmsa
4. CABE (2005).*Universalisatin of Secondary education.* New Delhi: MHRD
5. CABE (2005). *Girls education and Common School System*. New Delhi : MHRD
6. www.ijcrt.org © 2021 IJCRT | Volume 9, Issue 3 March 2021 | ISSN: 2320-2882
7. IJCRT2103535 International Journal of Creative Research Thoughts (IJCRT) www.ijcrt.org 4638

16.11 शब्दावली

1. राष्ट्रीय माध्यमिक शिक्षा अभियान- आरएमएसए
2. सकल नामांकन दर –GER
3. सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी –आईसीटी
4. परियोजना अनुमोदन बोर्ड-पीएबी
5. डिपार्टमेंट फॉर इंटरनेशनल डेवलपमेंट –*DFID*
6. Children with special need -CWSN
7. Teacher pupil ratio-TPR
8. Inclusive Education for Disabled at Secondary Stage-IEDSS

16.12 निबन्धात्मक प्रश्न

1. राष्ट्रीय माध्यमिक शिक्षा अभियान की विस्तृत व्याख्या कीजिए।
2. आरएमएसए से वर्तमान समय में माध्यमिक शिक्षा पर क्या प्रभाव पड़ा? स्पष्ट कीजिए।